सुबह नाश्तेके समय अितनी अनसोची मेजवानी मिलने पर अुसे कौन छोड़ेगा ?

अघाकर खानेके बाद रिश्तेदारोंका स्मरण तो होता ही है। अब अिस घसानका मंगल दर्शन अिष्ट मित्रोंको किस प्रकार कराया जाय ? न पास कैमरा है, न ट्रैनसे फोटो खींचनेकी सुविधा है। और फोटोकी शक्ति भी कितनी होती है ? फोटोमें यदि सारा आनंद भरना संभव होता, तो घूमनेकी तकलीफ कोअी न अुठाता । मैं कवि होता तो यह दृश्य देखकर हृदयके अुद्गारोंकी अेक सरिता ही बहा देता। मगर वह भी भाग्यमें नहीं है। अिसलिअे 'दूधकी प्यास छाछसे बुझाने' के न्यायसे यह पत्र लिख रहा हूं । भारतकी भक्ति करनेवाला कोअी समानधर्मी झांसीसे करीब पचास मीलके अंदर आये हुअे अिस स्थानका दर्शन करनेके लिअे जरूर आयेगा।

स्टेशन बरवासागर, १४–११–'३९

ता० १६–११–'३९

घसानसे आगे बढ़े और ओरछाके पास बेतवा नदी देखी। यह नदी भी काफी सुन्दर थी। अुसके प्रवाहमें कअी पत्थर और कअी पेड़ थे। अुसके लावण्यमें फीका कुछ भी नहीं था । दूर दूर तक ओरछाके मंदिर और महल दिखाअी देते थे; कीचड़का दर्शन कहीं भी नहीं हुआ। यह अनाविला नदी देखकर हम झांसी पहुंचे। वहां श्री मैथिलीशरणजीके भाअी —सियारामशरणजी और चारुशीलाशरणजी अपने परिवारके अन्य लोगोंके साथ भोजन लेकर आये थे। मेरे मनमें संदेह था कि काव्य पढ़-पढ़कर काव्यका सर्जन करनेवाले हमारे कवि जिस तरह प्रकृतिका प्रत्यक्ष दर्शन हृदयसे नहीं करते, अुसी तरह अिन कवि-बन्धुओंने भी घसान और बेतवाके बारेमें शायद कुछ न लिखा होगा। अिसलिअे मैंने अुनसे साफ साफ कह दिया कि 'आपने यदि अिन दो नदियों पर कुछ भी न लिखा हो, तो आप निंदाके पात्र हैं!' सियारामशरणजीने अपने विनयसे मुझे पराजित किया। अुन्होंने कहा, 'भैयाजीने (मैथिलीशरणजीने) अिन नदियोंके बारेमें गाते हुअे

कहा है कि सौंदर्यमें बुंदेलखंडकी ये नदियां गंगा-यमुनासे भी बढ़कर हैं। अिसलिअे मेरे बड़े भाअी तो आपके अुपालंभमें नहीं आयेंगे। हां, मैंने खुद अिन नदियोंके बारेमें कुछ नहीं लिखा है। मगर मैं कहां अभी बूढ़ा हो गया हूं। मुझे तो अभी बहुत लिखना है।"

अुनसे मालूम हुआ कि घसानका मूल नाम था दशार्ण। और यह तो मुझे मालूम था कि बेतवाका नाम था वेत्रवती। दशार्ण = दशाअण = दशाण = घसान। अितना ध्यानमें आनेके बाद घसान नामके बारेमें मैंने जो अूटपटांग कल्पना की थी, वह पत्तोंके महलकी तरह गिर पड़ी। किसी तरहके सबूतके बिना केवल कल्पनाके सहारे खोज करनेवाले मेरे जैसे कअी लोग अिस देशमें होंगे। अुनकी गलती बतानेके लिअे जो जानकारी चाहिये अुसके अभावमें अैसी निरी कल्पनायें भी अितिहासके नामसे रूढ़ हो जाती हैं, और आगे जाकर रूढ़ियोंके अभिमानी लोग जोशके साथ अैसी कल्पनाओंसे भी चिपटे रहते हैं।

मैंने अेक दफा 'वती-मती' वाली नदियोंके नाम अिकट्ठा किये थे। अिसीलिअे वेत्रवती ध्यानमें रही थी। जिसके किनारे बेंत अुगते हैं वह है वेत्रवती। दृषद्वती (पथरीली); सरस्वती, गोमती, हाथमती, बाघमती, अैरावती, सावरमती, वेगमती, माहिष्मती (?), चर्मण्वती (चंबल), भोगवती (?), शरावती। अितनी नदियां तो आज याद आती हैं। और भी खोजने पर दूसरी पांच-दस नदियां मिल जायेंगी। महाभारतमें जहां तीर्थयात्राका प्रकरण आता है, वहां कअी नाम अेकसाथ बताये गये हैं। परशुराम, विश्वामित्र, बलराम, नारद, दत्तात्रेय, व्यास, वाल्मीकि, सूत, शौनक आदि प्राचीन घुमक्कड़ भूगोलवेत्ताओंसे यदि पूछेंगे, तो वे काफी नाम बतायेंगे या पैदा कर लेंगे। हमारी नदियोंके नामोंके पीछे रही जानकारी, कल्पना, काव्य और भक्तिके बारेमें आज तक भी किसीने खोज नहीं की है। फिर भारतीय जीवन भला फिरसे समृद्ध किस तरह हो?

नवंबर, १९३९

४३

निशीथ-यात्रा

जबलपुरके समीप भेड़ाघाटके पास नर्मदाके प्रवाहकी रक्षा करनेवाले संगमरमरके पहाड़ हम रात्रिके समय देख आयेंगे, यह खयाल शायद मध्यरात्रिके स्वप्नमें भी न आता। किन्तु 'सबिन्दु-सिन्धु-सुस्खलत् तरंगभंग-रंजितम्' कहकर जिसका वर्णन हम किसी समय संध्या-वंदनके साथ गाते थे, अुस शर्मदा नर्मदाके दर्शन करनेके लिअे यह अेक सुन्दर काव्यमय स्थान होगा, अैसी अस्पष्ट कल्पना मनके किसी कोनेमें पड़ी हुअी थी।

हिमालयकी यात्राके समय मैं रास्तेमें जबलपुर ठहरा था। किंतु अुस समय भेड़ाघाटकी नर्मदाका स्मरण तक नहीं हुआ था। गंगोत्री और अुसके रास्तेमें आनेवाले श्रीनगरके चिंतनके सामने नर्मदाका स्मरण कैसे होता? नर्मदा-तटकी गहनताके महादेवको छोड़कर मैं गंगोत्रीकी यात्राके लिअे चल पड़ा था।

फैजपुर कांग्रेसके समय हमने केवल अजंता जानेका सोचा था। किन्तु रेलवे कंपनीने झोन टिकट निकाले, और हममें अिधर-अुधर अधिक घूमनेकी वृत्ति जगा दी। जबलपुरकी यात्रा यदि मुफ्तमें होती है, तो क्यों न हो आयें? —यों सोचकर हम चल पड़े। यह सच था कि हम किसी खास कामके लिअे जबलपुर नहीं जा रहे थे; मगर अेक दिन सिर्फ मौज करना है, अैसी भी हमारी वृत्ति नहीं थी।

देशके अलग अलग धार्मिक स्थल, अैतिहासिक स्थान, कला-मंदिर और निसर्ग-रमणीय दृश्य देखनेको मैंने कभी निरी नयन-तृप्ति नहीं माना है। मंदिरमें जाकर जिस प्रकार हम देवताका दर्शन करते हैं, अुसी प्रकार भूमाताकी अिन विविध विभूतियोंके दर्शनके लिअे मैं आया हूं, अिसी भावनासे मैंने अब तक की अपनी सारी यात्रायें की हैं। अपने देशकी रग-रगकी जानकारी मुझको होनी चाहिये और अिस जानकारीके साथ साथ भक्तिमें भी वृद्धि होनी चाहिये, अैसी मेरी अपेक्षा रहती है।

ज्यों ज्यों मैं यात्रा करता हूं और अभिमान तथा प्रेमसे हृदयको भर देनेवाले दृश्य देखता हूं, त्यों त्यों अेक चीज मुझे बेचैन किया ही करती है: यह मेरा अितना सुन्दर और भव्य देश परतंत्र है, अिसके लिअे मैं जिम्मेदार हूं। पारतंत्र्यका लांछन लेकर मैं अिस अद्‌भुत-रम्य देशकी भक्ति भी किस प्रकार कर सकता हूं? क्या मैं कह सकता हूं कि यह देश मेरा ही है? मैं देशका हूं अिसमें तो कोअी संदेह नहीं है; क्योंकि अुसने मुझे पैदा किया है, वही मेरा पालन-पोषण अखंड रूपसे कर रहा है; वही मुझे रहनेके लिअे स्थान, खानेके लिअे अन्न और आरामके लिअे आश्रय देता है; अपने बालबच्चोंको मैं अुसीके सहारे, निश्चित होकर छोड़ सकता हूं; जिस अुज्ज्वल अितिहासके कारण मैं संसारमें सिर अूंचा करके चलता हूं, वह आर्योंका प्राचीन अितिहास भी अिसी देशने मुझे दिया है। अिस प्रकार मैंने अपना सर्वस्व देशसे ही पाया है। किन्तु यह देश मेरा है, यों कहनेके लिअे मैंने देशके लिअे क्या किया है? मेरा जन्म हुआ अुसके साथ ही मैं देशका बना; मगर यों कहनेके पहले कि 'यह देश मेरा है' मुझे जिंदगी भर मेहनत करके अिसके लिअे खप जाना चाहिये।

मनमें अिस तरहके विचारोंका आवर्त अुठने पर मैं क्षण भर बेचैन हो जाता हूं, किन्तु अिसी अस्वस्थतामें से धर्मनिष्ठा पैदा होकर दृढ़ बनती है। अिसी बेचैनीके कारण स्वराज्यका संकल्प बलवान होता है और देशके लिअे — देशमें असह्य कष्ट अुठानेवाले गरीबोंके लिअे — यत्किंचित् भी कष्ट सहनेका जब मौका मिलता है, तब मुझे लगता है कि मैं अुपकृत हुआ हूं। और ज्यों ज्यों यात्रा करता रहता हूं, त्यों त्यों मनमें नयी शक्तिका संचार होने लगता है। युवकोंसे मैं हमेशा कहता आया हूं कि 'स्वदेशमें घूमकर देशके और देशके लोगोंके दर्शन करनेका तुम अेक भी मौका मत छोड़ना।'

अिस प्रकारकी अुत्कट भावनाका अुदय जब हृदयमें होता है, तब अैसा लगना स्वाभाविक है कि पासमें कोअी न हो तो अच्छा। अपनी नाजुक भावनाओंको शब्दोंमें लिखकर लोगोंके सामने रखना अुतना कठिन नहीं है। किन्तु अिन भावनाओंसे बैचेन होने पर हमारी

जो विह्वल दशा हो जाती है और हम मतवाले बन जाते हैं, अुसे कोअी देखे यह हमें सहन नहीं होता। अिसी कारण मैं जब जब भक्ति-यात्राके लिअे चल पड़ता हूं, तब तब मुझे लगता है कि मैं अकेला ही जाअूं और अेकांतमें ही प्रकृतिका अनुनय करूं तो अच्छा होगा।

किन्तु मेरी जाति है कौवेकी। अकेले अकेले सेवन किया हुआ कुछ भी मुझे हजम नहीं होता। अिसलिअे अनिच्छासे ही क्यों न हो, मैं सब लोगोंसे कह देता हूं: 'मुझसे अब रहा नहीं जाता; मैं तो यह चला।' लिहाजा कोअी न कोअी मेरे साथ हो ही लेता है। लोगोंको लगता है कि अिनके साथ जानेसे हमारे चर्मचक्षुओंको अिनके प्रेम-चक्षुओंकी मदद मिलेगी; और अपना देश हम चार आंखोंसे जी भरकर देख सकेंगे। मेरी अिस स्थितिका वर्णन मैंने अपने अेक मित्रको लिख-कर कहा था कि 'मैं खोजता हूं अेकांत, किन्तु पाता हूं लोकांत।'

आखिर अिस सबका नतीजा यह होता है कि मुझे समुदायके साथ यात्रा करनी पड़ती है, और अिसलिअे अपनी अुछलनेवाली मनोवृत्तियोंको दबा देना पड़ता है। और अेक ओर मनके अन्तर्मुख बनकर चिंतन-मग्न होने पर भी दूसरी ओर मुझे बाहरके लोगोंके वायुमंडलके अनुकूल बनना पड़ता है।

यात्रामें हो या किसी महत्त्वके काममें हो, मंगलाचरणमें कोअी विघ्न न आये तो मुझे कुछ खोया-खोया-सा मालूम होता है। निर्विघ्न प्रवृत्ति यदि मैंने अपनी स्वप्नसृष्टिमें भी न देखी हो, तो जागृतिमें भला वह कहांसे आयेगी? बड़े अुत्साहके साथ हम भुसावलसे रवाना हुअे और अिटारसीमें ही पहली ठोकर खाअी। पहलेसे सूचना देने पर भी अिटारसीके स्टेशन-मास्टर गाड़ीमें हमारे लिअे कोअी प्रबंध नहीं कर सके थे। नया डिब्बा जोड़ दें तो अुसे खींचनेकी ताकत अेंजिनमें नहीं थी; क्योंकि अिटारसीके पहले ही गाड़ीमें ज्यादा डिब्बे जोड़े गये थे और सब डिब्बे ठसाठस भरे हुअे थे।

क्या अब यहींसे वापस लौटना पड़ेगा? कितनी निराशा! सोचा, मनको दूसरी दिशामें मोड़ दें और दिलजोअीके लिअे यहांसे होशंगाबाद तक मोटरमें जाकर नर्मदामाताके दर्शन कर लें और फैजपुरकी ओर

वापस लौट जायं। किन्तु जितनी हिम्मत हारनेकी भी हिम्मत न होनेसे आखिर आयी हुअी गाड़ीमें हम किसी न किसी तरह घुस गये।

जबलपुर जाकर अेक-दो स्थानिक सज्जनोंकी मददसे हम नजदीककी धर्मशालामें जा पहुंचे और मोटरकी व्यवस्था करनेकी कोशिशमें लगे।

कोअी बड़ा काफिला साथमें लेकर यात्रा करनेमें जिस व्यवस्था-शक्तिकी आवश्यकता रहती है, वही युद्धोंमें बड़ी फौजके स्थानांतरके समय रहती है। किसी आश्रम, संस्था, मंदिर या छोटे-बड़े संस्थानको चलानेमें जिन गुणों या शक्तियोंका विकास होता है, अुन्हींका अुपयोग किसी राज्य या साम्राज्यको चलानेमें होता है। कोअी होशियार किसान मौका मिलते ही अुत्तम शासक या प्रबंधक हो सकता है; और बड़े बड़े कल-कारखाने चलानेवाला कल्पक या योजक कारखानेदार किसी साम्राज्यका सूत्र आसानीसे चला सकता है। यात्रामें मनुष्यकी सब तरहकी कुशलताकी परीक्षा होती है। और अुसमें योग्य पुरुष—और स्त्रियां भी, अपने आप आगे आ जाती हैं।

यह विचार यहां क्यों सूझा, यह बतानेके लिअे हम न रुकेंगे। हमें समय पर भेड़ाघाट पहुंचना है, और बारिश तो मानो 'अभी आती हूं' कहकर टूट पड़ने पर तुली हुअी है। यों तो ये बारिशके दिन नहीं हैं। किन्तु हिन्दुस्तानके चारों ओरके लोग फैजपुर कांग्रेसके लिअे जा रहे हैं, यह देखकर बारिशको भी लगा, 'चलो हम भी अलग अलग स्थान देखते हुअे फैजपुर हो आयें।' मगर जाड़ेके दिनोंमें बारिशके पांवोंमें ताकत नहीं होती; अिसलिअे दौड़ते दौड़ते वह रास्तेमें ही गिर पड़ी और फैजपुर तक पहुंच न सकी! अुसके हाथमें यदि 'स्वराज्यकी ज्योति' होती, तो शायद लोगोंने अुसे अुठकर आगे बढ़नेमें मदद की होती।

खैर; हमारी दोनों मोटरें तैल-वेगसे चल पड़ीं और संध्याके समय हम भेड़ाघाट जा पहुंचे। संगमरमरकी शिलायें देखनेके लिअे अिससे पहले शायद ही कोअी अैसे समय यहां आया होगा। मगर प्रकृतिके दीवानेको समयके साथ क्या लेना देना है?

* * *

यहां आकर हम बड़ी दुविधामें पड़े। निकटमें ही अेक टेकरी पर महादेवजीके मंदिरको घेरकर चौरासी योगिनियां तपस्या करती हुअी बैठी थीं। तपस्या करते करते अहल्याकी तरह वे शिलारूप बन गअी होंगी। रामके चरणोंका स्पर्श होनेके बजाय मुसलमानोंकी लाठियोंका स्पर्श होनेके कारण अिनमें से बहुत-सी योगिनियोंकी काफी दुर्दशा हुअी है। अिस टेकरीके अुस पार धुवांधार नामक अेक मशहूर प्रपात है। अुसे देखने जायें या संगमरमरकी शिलायें देखनेके लिअे नौका-विहार करें?

विहार करनेके लिअे नौकायें केवल दो ही थीं। अिसलिअे हम सब किसी अेक बात पर अेकमत हो जायं अिसमें लाभ नहीं था। लिहाजा हमने दो टोलियां बनायीं। यह स्थान संगमरमरकी शिलाओंके लिअे मशहूर था, अिसलिअे बड़ी टोलीने अुस ओर जाना पसन्द किया। अिसमें संदेह नहीं कि थोड़ा अुजियाला जो बचा था अुसीमें यह स्थान देख लेनेमें अक्लमंदी थी। हमारी दूसरी टोलीने योगिनियोंका दर्शन करके धुवांधार जानेका निर्णय किया और हम सीढ़ियां चढ़ने लगे। सब योगिनियोंके दर्शन हमने अपने हाथकी बिजलीकी अेक छोटी-सी मशालकी मददसे किये। मूर्तियां सुन्दर ढंगसे बनाअी हुअी और कलापूर्ण लगीं। मंदिरके भीतर विराजमान महादेव तथा अुनका नंदी भी देखने लायक हैं।

मनमें विचार आया कि जब किसी लड़ाअीमें हम घायल होते हैं, तब तुरंत अिलाज करके हम अच्छे हो जाते हैं। गांवमें रोगसे किसीकी मौत होती है, तो हम तुरंत अुसे जला देते या दफना देते हैं। जब जमीन पर दूब गिरता है तब हम अुसके धब्बोंको अमंगलकारी समझकर अुन्हें जमीन पर रहने नहीं देते; अुन्हें पींछ डालते हैं। अैसा मनुष्य-स्वभाव होने पर भी हमने खंडित मूर्तियां ज्यों-की-त्यों क्यों रहने दीं? क्या धर्मान्ध मुसलमानोंके अत्याचारोंका स्मरण करानेके लिअे? या खुद अपनी कायरता और सामाजिक गैर-जिम्मेदारीको स्वीकार करनेके लिअे? अप्रतिम कलामूर्तियां बनानेकी कला यदि देशमें से नष्ट हो गअी होती, तो अिस प्रकारके प्राचीन अवशेषोंके नमूनोंको सुरक्षित रखना

अुचित माना जाता। किन्तु मैंने देखा है कि आबूमें देलवाड़ेके मंदिरोंमें संगमरमरकी कारीगरी करनेवाले कुटुंबोंको हमेशाके लिअे नियुक्त कर लिया गया है; मंदिरके किसी हिस्सेमें जब कुछ खंडित होता है तो तुरंत अुसकी मरम्मत करके अुसको पहलेकी तरह बना दिया जाता है। अिसी तरह लाहौरके अजायबघरमें भी मैंने देखा है कि मूर्तियोंका कोअी कुशल सर्जन घायल मूर्तियोंके हाथ, पैर, नाक, ओंठ आदिको सीमेन्टकी मददसे अिस ढंगसे ठीक कर देता है कि किसीको पता तक न चले। मगर हमारे मंदिर योग्य और पुरुषार्थी लोगोंके हाथमें हैं ही कहां? हमारे समाजकी स्थिति लावारिस ढोरों जैसी है।

योगिनियोंके आशीर्वाद लेकर हम टेकरीसे नीचे अुतरने लगे। अब भी कुछ प्रकाश बाकी था। अिसलिअे हम हंसते-खेलते किन्तु द्रुत गतिसे घुवांधारकी खोज करने निकल पड़े। जो साथी आगे दौड़ रहे थे अुनकी लगाम खींचनेका और जो पीछे पड़ रहे थे अुन्हें चाबुक लगानेका काम अेक ही जीभको करना पड़ता था। मेरा अनुभव है कि नयी आजादीसे बहकनेवाले बछड़ों या भेड़ोंको ज्यों ज्यों पास लानेकी कोशिश की जाती है, त्यों त्यों संघको छोड़कर दूर दूर भागनेमें अुन्हें बड़ी बहादुरी मालूम होती है; फिर अुन पर रुष्ट होकर अुन्हें वापस लानेमें होनेवाले कष्टके कारण संघपतिको भी अपना महत्त्व बढ़ा हुआ-सा मालूम होता है। परस्पर खींचातानीके कष्टोंका आनन्द दोनोंसे छोड़ा नहीं जाता।

जहां भी हमारी नजर जाती, सफेद पत्थर ही पत्थर नजर आते थे। जबलपुरका ही यह प्रदेश है! किन्तु अेक जगह तो हमें संग-जराहतका खेत ही मिल गया। संग-जराहत अेक अद्भुत चीज है। वह पत्थर जरूर है, मगर बिलकुल चिकना। मानो पेन्सिलका सीसा। छुटपनमें अेक बार मुझे संग्रहणी हो गयी थी। अुस समय अिस संग-जराहतका चूरा छानकर मावेकी बरफीमें मिलाकर मुझे खिलाया गया था। तबसे अुस पर मेरी श्रद्धा जमी हुअी है। आंवकी वजहसे जब आंतोंमें घाव हो जाते हैं तब अुन्हें भरनेमें यह चूरा मदद करता है; और घाव भरनेके बाद वह अपने-आप पेटके बाहर निकल जाता

है। पत्थरका चूरा हजम थोड़े ही हो सकता है! पेटमें रहे तो रोग हो जाय। मगर वह अपना काम पूरा होते ही अुपकारके वचनोंकी वसूली करनेके लिअे भी अधिक दिन रहनेकी गलती नहीं करता।

अब तो चारों ओर काफी अंधेरा छा गया था। सर्वत्र भयानक अेकांत था। हमारी टोली अिस अेकांतको चीरती हुअी आगे चल रही थी, मानों अनन्त समुद्रमें कोअी नाव चल रही हो। हवा कुछ रुंधी हुअी-सी लगती थी। कब पानी गिरेगा, कहा नहीं जा सकता था। अूपर आकाशमें देखा तो काले काले बादलोंके बीच अेक ओर सिर्फ अेक तारका चमक रही थी। चमकती क्या थी? बेचारी बड़े दुःखके साथ झांक रही थी, मानो किसी बड़े मकानकी खिड़कीसे कोअी अेकाकी वृद्धा निर्जन रास्ते पर देख रही हो। हम आगे बढ़े। अब जमीन भी अच्छी खासी गीली थी। बीच-बीचमें पानी और कीचड़के गड्ढे भी आते थे।

अंधेरा खूब बढ़ गया। गड्ढोंमें से रास्ता निकालना कठिन-सा मालूम होने लगा। आगे जानेका अुत्साह बहुत कम हो गया। अैसे कठिन स्थान पर अंधेरी रातके समय हम यहां तक आये, अिसीको यात्राका आनंद मानकर हमने वापस लौटनेका विचार किया। मनमें डर भी पैदा हुआ—अैसे निर्जन और भयावने स्थानमें कहीं चोरोंसे मुलाकात न हो जाय!

कुछ लोगोंको अकेले यात्रा करते समय चोर-डाकुओंका डर मालूम होता है। जब समुदाय बड़ा होता है, तब यह डर मानो सबके बीच बंट जाता है और हरेकके हिस्से बहुत कम आता है। फिर अेक-दूसरेके सहारे हरेक अपना अपना डर मन ही मनमें दबा भी सकता है। कुछ लोगोंका अिससे बिलकुल अुलटा होता है। अकेले होने पर अुन्हें अपनी कोअी परवाह नहीं होती। अपना कुछ भी हो जाय। मार-पीटका प्रसंग आ जाये तो जी-भर लड़ते हुअे शानके साथ सारे बदन पर मार खानेमें विशेष नुकसान नहीं लगता। और यदि अहिंसक वृत्ति हो तो बिना गुस्सा किये और बिना डर कर भागे मार खाते रहनेमें अनोखा आनन्द आता है। सत्याग्रही

वृत्तिसे खायी हुअी मारका असर मारनेवाले पर ही होता है; क्योंकि अहिंसक मनुष्यको मारनेवालेकी अपने ही मनके सामने प्रतिक्षण फजीहत होती है।

मगर जब बड़ी टोलीके साथ होते हैं, तब भरोसा नहीं होता कि कौन किस प्रकार व्यवहार करेगा। बच्चे और औरतें यदि साथ हों तब कुछ अलग ही ढंगसे सोचना पड़ता है। अपने-आपको खतरेमें डालनेमें जो मजा आता है, वह अैसे असवरों पर अनुभव नहीं होता। सभी सत्याग्रही हों तो बात अलग है। किन्तु बड़ी खिचड़ी-टोली साथमें लेकर खतरेके स्थान पर कभी भी नहीं जाना चाहिये। श्रीकृष्णके कुटुम्ब-कबीलेको ले जानेवाले वीर अर्जुनकी भी क्या दशा हुअी थी, यह तो हम पुराणोंमें पढ़ते ही हैं।

अैसे अंधेरेमें शिलाओंके बीचसे कहां तक जायें और वहां क्या देखनेको मिलेगा, अिसकी कुछ कल्पना ही नहीं थी। अतः मनमें आया, यहींसे वापस लौटना अच्छा होगा। अितनेमें दाहिनी ओर अेक छोटी-सी टूटी-फूटी कुटिया दीख पड़ी। अैसे निर्जन स्थानमें चोर भी चोरी काहेकी करेंगे? मगर चोरी करके थकने पर शांति और निश्चिन्तताके साथ बैठनेके लिअे यह स्थान बहुत सुन्दर है। चोरोंको ढूंढ़ने निकलनेवाले लोगोंको यहां तक आनेका खयाल भी नहीं आयेगा। तो क्या अिस कुटियामें निरंजनका ध्यान करनेवाला कोअी अलख-अुपासक साधु रहता होगा? हम कुटियाके नजदीक गये। अंदर कोअी नहीं था! तब तो यह कुटिया साधुकी नहीं हो सकती। फकीर दिनभर कहीं भी घूमता रहे; रातको अपनी मसजिदमें आना वह कभी नहीं भूलेगा। और बाबाजी रात बाहर कहीं बितानेके बजाय अपनी सहचरी धूनीके संपर्कमें ही बितायेंगे।

तब यह कुटिया मछलियां मारनेवाले किसी मच्छीमारकी होगी। किसीकी भी हो, हमें अिससे क्या मतलब? आजकी रात हमें यहां थोड़ी बितानी है? जरा आगे जाने पर यकीन हुआ कि रास्ता ठीक न होनेसे अंधेरेमें अिससे आगे जाना खतरा मोल लेना है। अतः मैंने हुक्म छोड़ा: 'चलो, अब वापस लौटें।' अितनेमें मानो सत्त्व-परीक्षा

पूरी हो गअी हो, अिस खयालसे वादल जरा हटे और ठीक हमारें सिर पर विराजित चंद्रने 'पश्याश्चर्याणि भारत!' कहकर आसपासका प्रदेश प्रकाशित कर दिया। सूर्य सव कुछ प्रकट कर देता है, अिसलिअे अुसके प्रकाशमें कोअी काव्य नहीं होता। अंधेरी रातमें आकाशके सितारोंमें विचरनेवाली दृष्टिको चंद्र पृथ्वी पर भेज देता है और कहता है: 'थोड़ा आंखोंसे देखो और वाकीका सव कल्पनासे भर दो।'

चंद्रने कुछ मदद की और दूर दूरसे धुवांधारका घोष भी सुनाअी देने लगा। मेरा हुक्म अेक ओर रह गया और सव अपने पैर तेजीसे अुठाने लगे। जरा आगे गये कि धुवांधार दीख पड़ा! मानो दूधका स्रोत वह रहा हो!! सर-सर धव-धव! सुलमुल धव-धव! कर्रर्रर्र धव-धव! धव-धव; धव-धव! अुन्मत्त पानी वहता ही जा रहा था। और अुसमें से निकलनेवाली सीकर-वृष्टि सर्वत्र फैल रही थी। वृष्टि काहेकी? तुषारका फव्वारा ही समझ लीजिये। कितना अतिथिशील! अिन सूक्ष्म जीवन-कणोंने हमारे अिन जीवन-क्षणोंको सार्थक कर दिया। चंद्र प्रसन्नतासे हंस रहा था, पानी खेल रहा था, तुषार अुड़ रहे थे, हवा झूम रही थी और हम मस्तीमें डोल रहे थे। अिधर देखिये, अुधर देखिये, कैसा मजा है! आदि अुद्गारोंका प्रपात भी देखते ही देखते शुरू हो गया। भिन्न भिन्न अृतुओंमें धुवांधार कैसा दिखाअी देता है, अिसका वर्णन हमारे साथ आये हुअे स्वयंसेवक पथदर्शकने शुरू किया। यहां लोग तैरने कैसे जाते हैं, कहांसे कूदते हैं, गरमीके दिनोंमें धुवांधारकी अूंचाअी कितनी होती है, आदि वहुत-सी जानकारी अुसने हमें दी। और अपनी जानकारी तथा रसिकताके लिअे अुसने हमसे अपनी कद्र भी करवा ली। अव सव शांत हो गये और अेकध्यानसे धुवांधारके साथ अेक-रूप होनेमें मग्न हो गये। कितना भव्य और पावन दर्शन था! अरणिके मंथनसे प्रथम गरमी पैदा होती है; फिर धुवां निकलता है; धुवां वढ़ने पर अुसमें से चिनगारियां अुड़ती हैं और फिर लपटें निकलने लगती हैं। अिसी तरह निसर्ग-यात्रासे प्रथम कुतूहल जाग्रत होता है, कुतूहलमें से अद्भुतता पैदा होती है, और अद्भुतताके काफी मात्रामें अेकत्र होने पर यकायक भक्तिकी अूर्मियां वाहर आती हैं। 'चलो, हम यहां

शिला पर बैठकर प्रार्थना करें।' प्रार्थनाके लिअे अितना पवित्र स्थान और अितना शुभ समय हमेशा नहीं मिलता। सब तुरन्त बैठ गये और 'यं ब्रह्मा वरुणेन्द्र . . .' की ध्वनि धुवांधारके कानों पर पड़ी।

जिस प्रकार भिन्न भिन्न समय पर भिन्न भिन्न राग गाये जाते हैं, अुसी प्रकार भिन्न भिन्न स्थलों पर मुझे भिन्न भिन्न स्तोत्र सूझते हैं। हिन्दुस्तानके दक्षिणमें कन्याकुमारी मैं तीन बार गया, तब मुझे गीताका दसवां और ग्यारहवां अध्याय सूझा। विभूतियोग और विश्व-दर्शनयोगका अुत्कट पाठ करनेके लिअे वही अुचित स्थान था। और जब सीलोनके मध्यभागमें — अनुराधापुरके समीप — महेन्द्र पर्वतके शिखर पर संध्यास्तके समय पहुंचा था, तब पाटलिपुत्रसे आकाशमार्ग द्वारा आकर अिस शिखर पर अुतरे हुअे महेन्द्रका स्मरण करके मैंने अीशावास्योपनिषद् गाया था। दैव जाने अनात्मवादी बुद्ध-शिष्योंकी आत्माको अीशोपनिषद् सुनकर कैसा लगा होगा! और पूनासे जब शिवनेरी गया, तब मसजिदकी अूंची दीवारोंकी सीढ़ियां चढ़कर दूरसे श्री शिवाजी महाराजके बाल्यकालकी क्रीड़ाभूमिके दर्शन करते समय न मालूम क्यों मांडुक्योपनिषद् गाना मुझे ठीक लगा था। यह अुपनिषद् श्रीसमर्थको प्रिय था, अैसा माननेका कोअी सबूत नहीं है। फिर भी 'नान्तःप्रज्ञं न बहिःप्रज्ञं नोऽभयतः प्रज्ञं न प्रज्ञानघनम् न प्रज्ञं नाप्रज्ञम्।' यह कंडिका बोलते समय मैं शिव-कालीन महाराष्ट्रके साथ तथा आत्मारामकी अभेद-भक्ति करनेवाले साधु-सन्तोंके साथ बिलकुल अेकरूप हो गया था। अुस समय मनमें यह भाव अुठा था — 'मैं नहीं चाहता यह अलग व्यक्तित्व; अेकरूप सर्वरूप हो जायं अिस समस्त दृश्यके साथ।' धुवांधारकी मस्ती तथा अुसके तुषारोंका हास्य देखकर यहां स्थितप्रज्ञके श्लोक गाना ठीक लगा।

अुत्कट भावनाओंका सेवन लम्बे समय तक करते रहना जरूरी नहीं है। अेक आलापमें अेक अखिल भावसृष्टिको समाया जा सकता है। अेक जलबिंदुमें प्रचण्ड सूर्य भी प्रतिबिम्बित हो सकता है। अेक दीक्षामंत्रसे युगोंका अज्ञान हटाया जा सकता है। अेक क्षणमें हमने धुवांधारके वायुमंडलको अपना बना लिया। आंखोंकी

शक्ति कितनी अजीब होती है! धुवांधारका पान मुंहसे करना असंभव था। हम कुंभ-संभव अगस्ति थोड़े ही थे! मगर हमारी दो नन्ही पुतलियोंने अखंड वहनेवाले अिस प्रपातका आ-कंठ पान किया। मुझे लगता है कि अैसे दृक्-पानको 'आ-कंठ' कहनेके वदले 'आ-पलक' कहना चाहिये। हम सवने अपनी अपनी आंखोंमें यह लूट अेक क्षणमें भर ली और वापस लौटे। हमारा यह भूतोंका संघ तरह तरहकी वातें करता हुआ तथा गर्जना करता हुआ मोटरके अड्डे पर आ पहुंचा।

यहां भेड़ाघाटकी संगमरमरकी शिलायें देखकर लौटी हुअी टोली हमसे मिली। अेक-दूसरेके अनुभवोंका आदान-प्रदान करके हमने अिस टोलीको वुजुर्गाना सलाह दी कि 'अिस समय धुवांधार जाना वेकार है। आप तैल-वाहनमें वैठकर सीधे जवलपुर चले जाअिये। आप जहां हो आये हैं वहां थोड़ा नौका-विहार करके हम तुरन्त लौट आयेंगे।' मालूम नहीं, हमारी यह सलाह अुन्हें पसंद आयी या नहीं। मगर अुसको माने सिवा अुनके लिअे कोअी चारा नहीं था।

रास्तेकी ओरसे अुतरते हुअे और अंधेरेमें लड़खड़ाते हुअे हम प्रवाहके किनारे तक पहुंचे और दो टोलियोंमें वंटकर दो नावोंमें चढ़ वैठे। हमारी नाव आगे वढ़ी। सर्वत्र शांतिका ही साम्राज्य था और अुसकी गहराअीकी मानो थाह लगानेके लिअे वीच वीचमें हमारी नावकी पतवारें तालवद्ध आवाज करती थीं। चंद्र अपनी टिमटिमाती मशाल सिर पर रखकर मानो यह सुझा रहा था: 'आसपासकी यह शोभा दिनके समय कैसी मालूम होती होगी अिसकी कल्पना कर लीजिये।' कअी स्थानों पर विलकुल अंधेरा था। वीच वीचमें चांदनीके धव्वे दिखाअी पड़ते थे। आकाश निरभ्र न था। अिसलिअे चांदनी छाछके समान पतली वन गअी थी। आकाशके वादल वीच वीचमें मलमलके जैसे पतले दीख पड़ते थे, अतः अुनकी ओर भी ध्यान खिच जाता था। दोनों ओर संगमरमरकी शिलायें कितनी अूंची मालूम होती थीं! अूंची और भयावनी। मानो राक्षसोंका समूह वैठा हो! और अिन

शिलाओंके वीचसे नर्मदाका प्रवाह मोड़ ले लेकर अपना चक्रव्यूह रच रहा था।

ऊंची ऊंची शिलायें या पहाड़ जहां अेक-दूसरेके वहुत पास आ जाते हैं, वहां 'प्राचीन कालमें अेक सरदारने अपने घोड़ेको अेड़ लगाकर अिस शिखरसे सामनेके शिखर तक कुदाया था' जैसी दंतकथा चलती ही है। वंदर तो सचमुच अिस प्रकार कूदते ही हैं। यहां भी आपको अिस प्रकारकी दंतकथायें नाववालोंके मुंहसे सुननेको मिलेंगी।

यहां अिन शिलाओंके वीच कअी गुफाअें भी हैं। अिनमें अृषि-मुनि ध्यान करनेके लिअे अवश्य रहते होंगे। और मध्ययुगमें राज-कुलोंके आपद्ग्रस्त लोग तथा स्वतंत्रताकी साधना करनेवाले देशभक्त भी यहीं आत्मरक्षाके लिअे छिपते रहे होंगे। और फिर छछूंदरोंकी तरह नावें अिन लोगोंको गुप्त रूपसे आहार, समाचार और आश्वासन पहुंचाती रहती होंगी। अिन गुफाओंको यदि वाचा होती, तो अितिहासमें जिसका जिक्र तक नहीं है, अैसा कितना ही वृत्तांत वे हमें वतातीं।

खोहके वीचोंवीच नावसे जाते हुअे हम अेक अैसे स्थान पर आ पहुंचे, जिसे शांतिका गर्भगृह कह सकते हैं। यहां हमने पतवारें वंद करवायीं, और अिस डरसे कि कहीं शांतिमें भंग न हो जाय हमने श्वास भी मंद कर दिया। प्रार्थनाके श्लोक हमने वहां गाये या नहीं, अिसका स्मरण नहीं है। किन्तु मैंने मन ही मन सोलह अृचाओंका पुरुष-सूक्त वड़ी अुत्कटताके साथ वहां गाया। वादमें लगा कि अितनी शांतिमें तो अपने-आप समाधि ही लगनी चाहिये। पता नहीं कितना समय नौका-विहारमें वीता। अितनेमें डव डव डव करती हुअी दूसरी नाव वहां आ पहुंची। अुसमें जो टोली थी अुसने अेक मंजुल गीत छेड़ा। आसपासकी खोहें अिसकी प्रतिध्वनि करें या न करें अिस दुविधामें संकोचसे अुत्तर दे रही थीं।

नाववालेने कहा, 'अव अिससे आगे जाना असंभव है; यहांसे लौटना ही चाहिये।' अतः दौड़ते मनको पीछे खींचकर हम वोले: 'चलो! पुनरागमनाय च!'

अब यदि जाना हो तो वर्षाके अंतमें, चांदनीके दिन देखकर, दिनरात अिस मूर्तिमंत काव्यमें तैरते रहनेके लिअे ही जाना चाहिये। सचमुच, यह रमणीय स्थान देखकर मनने निश्चय किया कि यदि फिर कभी यहां आना न हो, तो यहांसे निकलना ही नहीं चाहिये।

अक्तूबर, १९३७

४४

धुवांधार

अेक, दो, तीन। धुवांधार अभी अभी मैंने तीसरी वार देख लिया। धुवांधार नाम सुन्दर है। अिस नाममें ही सारा दृश्य समा जाता है। किन्तु अवकी वार अिस प्रपातको देखते देखते मनमें आया कि अिसको धारधुवां क्यों न कहूं? धार गिरती है, फव्वारे अुड़ते हैं और तुरन्त अुसके तुषार बनकर कुहरेके वादल हवामें दौड़ते हैं। अतः धारधुवां नाम ही सार्थक लगता है। मगर यह नाम चल नहीं सकता!

जवलपुरसे गोल गोल पत्थर तथा चमकीले तालाव देखते देखते हम नर्मदाके किनारे आ पहुंचते हैं। रास्तेका दृश्य कहता है कि यह काव्यभूमि है। चारों ओर छोटे-वड़े पेड़ खेल खेलनेके लिअे खड़े हैं। वगलमें अेक वड़ा टीला टूट कर गिर पड़ा है। किन्तु अुसके सिर पर खड़े पेड़ अपनी आधी जड़ें अलग पड़ जाने पर भी शोकमग्न या चिंतातुर नहीं मालूम होते। अैसे पेड़ोंसे जीवन-दीक्षा लेकर ही आगे वढ़ा जा सकता है।

टीला टूटता तो है, किन्तु टूटा हुआ हिस्सा आसानीसे जमींदोज नहीं होता। अिस टीलेने अेक दो मीनार और अेक वड़ा शिखर वना लिया है, जो कहते हैं कि यदि विनाशमें से भी नयी सृष्टिकी रचना न कर पायें तो हम कल्प-कवि कैसे? टीलेके अूपरसे नीचेके पत्थरों और पानीका दृश्य दृढ़ता और तरलताके विचार अेक ही साथ

मनमें पैदा कर रहा था। पुल पार करके हम आगे आये और योगिनियोंकी टेकरीके नीचेका कअी वार देखा हुआ सामान्य दृश्य देखा। यह दृश्य अितना गरीब है कि अुसके प्रति गुस्सा नहीं आता। यहां गरीब कारीगर पत्थरोंसे छोटी-बड़ी चीजें बनाकर बेचनेके लिअे बैठते हैं। सफेद, काले, लाल, पीले, आसमानी और रंगबिरंगे संग-मरमरके शिवलिंगोंकी बगलमें संग-जराहतके डिब्बे, शिवालय, हाथी और अन्य छोटे-बड़े खिलौने मानो स्वयंवर रचकर खड़े रहते हैं। जिसकी नजरमें जो जंच जाता है वह अुसे अुठाकर ले जाता है। आज ये खिलौने अेक आसन पर बैठे हुअे हैं। कल न मालूम कौनसा खिलौना कहां चला जायगा? कुछ तो हिन्दुस्तानके बाहर भी जायंगे। और वहां बरसों तक धुवांधारका धारावाहिक संगीत याद करके चुपके चुपके सुनायेंगे।

यहांसे धुवांधार तक पैदल जानेकी तपस्या मैंने दो बार की थी। पहली यात्रा रातके समय की थी। दूसरी सुबह स्नानके समय की थी। हरेकका काव्य अलग ही था। आज तीसरा प्रहर पसंद किया था। अिस समय अधिक तपस्या नहीं करनी पड़ी। व्यौहार राजेन्द्र-सिंहजीने अपना तैल-वाहन (मोटर) दिया था, अतः हम लगभग धुवांधार तक बिना कष्टके पहुंच गये। संग-जराहतके खेतके पास अुतरकर, वहांकी तीन दुकानें पार करके, पत्थरोंके बीचसे होकर हम धुवांधार पहुंचे। पत्थर ज्यों ज्यों अड़चनें पैदा करते थे, त्यों त्यों चलनेका मजा बढ़ता जाता था। अैसा करते करते हम धुवांधारके पास पहुंचे।

प्रपात यानी जीवनका अधःपात। मगर यहां वैसा मालूम नहीं होता। पहली बार गये थे दिसंबरमें और अंधेरेमें। आकाशके बादल चांदके खिलाफ षड्यंत्र रचकर बैठे थे। अतः चांदनी रात होते हुअे भी वहां अमावास्याकी-सी भीषणता थी। अमावास्याकी रातमें आकाशके सितारे अिस भीषणताको हंसकर अुड़ा देते हैं। मगर बादलोंके सामने अिसकी भी आशा न रही। परिणामस्वरूप अुस रातको स्वयं धुवांधारको अपनी भव्यतासे हमें प्रसन्न करना पड़ा। रातकी प्रार्थना करके हमने वह आनंद हजम किया और वापस लौटे।

दूसरी वार गये थे त्रिपुरी कांग्रेसके बाद करीब नौ-दस वजे की वढ़ती हुअी धूपके स्वागतका स्वीकार करते हुअे। धुवांधारके संपूर्ण दर्शन हम अुसी समय कर पाये थे। मार्चका महीना था। अतः पानीमें गरमीकी अृतुका अकाल न था। पहाड़ीकी कुछ टेढ़ीमेढ़ी खुरदरी सीढ़ियां अुतरकर हमने नीचेसे धुवांधारको गिरते देखा था। पानीकी वह गति और फव्वारेकी वह चंचलता चित्तको आश्चर्यकारक ढंगसे स्थिर करती थी। पानीकी ओर अनिमेष देखते ही रहें तो अैसा अनुभव होता है मानो नवनवोन्मेषशालिनी धारायें वेगकी समाधि लगाकर खड़ी हैं! अिसी समय मैं देख सका कि वहांके काअीवाले पत्थर अूपरसे चाहे जैसे दीखते हों, लेकिन अंदरसे तो वे प्रेमका रंग खिलानेवाले (लाल रंगके) ही हैं। पानीके जोरके कारण पत्थरका अेक टुकड़ा अुड़ गया था और अंदरका गुलावी लाल रंग साफ दिखाअी देने लगा था, मानो अुसे घाव पड़ गया हो।

धुवांधार देखनेका अच्छेसे अच्छा समय है दीपावलीका। वारिश न होनेसे रास्तेमें कहीं कीचड़ नहीं था। वर्षा अृतुमें जव आते हैं तव सारा प्रदेश जलसे भरा होनेके कारण प्रपातके लिअे गुंजाअिश ही नहीं होती। जहां हृदयको हिला देनेवाला प्रपात है, वहीं वर्षा अृतुमें सिरमें चक्कर लानेवाले भंवर दिखाअी देते होंगे। अिन भंवरोंका रुद्र स्वरूप देखनेके लिअे यदि यहां तक आया जा सकता हो, तो मैं यहां आये विना नहीं रहूंगा। भंवर क्रान्तिका प्रतीक है। अुसका आकर्षण कुछ अनोखा ही होता है। कभी कभी मौतको न्योता देने-वाला भी!

दीपावलीके समय जलराशि सवसे अधिक पुष्ट, प्रपातकी शोभा सवसे अधिक समृद्ध, और मीठी धूपके सेवनके वाद तुषारके वादलोंकी चुटकियां सवसे अधिक आह्लादक होती हैं। आजका दृश्य वैसा ही था, जैसी हमने आशा रखी थी। तुषारके वादल दूरसे ही नजर आते थे। रसोड़ेका धुआं देखकर जिस प्रकार अतिथिको आनंद होता है, अुसी प्रकार अिस धुअेंके वादलको देखकर ही मैं कल्पना कर सका कि आज किस प्रकारका आतिथ्य मिलनेवाला है। धारधुवां जैसा प्रपात

जब देखनेके लिअे जाते हैं, तब वहां बनाया हुआ पटियेका कामचलाऊ छोटा पुल भी कलापूर्ण और आतिथ्यशील मालूम होने लगता है। हम परिचित किनारे पर जाकर बैठे ही थे कि स्नेहार्द्र पवनने तुषारकी अेक फुहार हमारी ओर भेजकर कहा, 'स्वागतम्', 'सुस्वागतम्'! अेक क्षणके अंदर हमारा सारा अध्व-खेद अुतर गया। हम ताजे हो गये और ताजी आंखोंसे धुवांधारको देखने लगे।

धुवांधार यानी पत्थरोंके विस्तारमें बनी हुअी अर्धचंद्राकार घाटी। अुसमें से जब पानीका जत्था नीचे कूदता है तब बीचमें जो कांचके जैसा हरा रंग दीख पड़ता है, वह जहरके समान डर पैदा करता है। अुसकी बायीं ओर यानी हमारी दायीं ओरकी शिला हाथीके सिरकी तरह आगे निकली हुअी है। अुस परसे जब पानी नीचे गिरता है तब मालूम होता है मानो असंख्य हीरोंके हार अेक अेक सीढ़ी परसे कूदते-कूदते अेक-दूसरेके साथ होड़ लगा रहे हैं। ज्यों ज्यों वे कूदते जाते हैं त्यों त्यों हंसते जाते हैं, और पानीको पींज पींजकर अुसमें से सफेद रंग तैयार करते जाते हैं। बीचका मुख्य प्रपात घाटीमें गिरते ही कितने जोरोंसे अूपर अुछलता है कि आतिशबाजीके बाणोंको भी अुससे ईर्ष्या हो सकती है। अेक फव्वारा अूपर अुड़कर जरा शिथिल पड़ता है कि जितनेमें दूसरे फव्वारे नये जोशसे अुसके पीछे पीछे आकर और धक्का देकर अुसे तोड़ डालते हैं और फिर अुसके जलकण पृथ्वीके आकर्षणको भूलकर बुअेंके रूपमें व्योम-विहार शुरू कर देते हैं। ये तुषार जरा अूपर आते हैं कि पवनके झोंके अुन्हें अुड़ाते अुड़ाते चारों ओर फैला देते हैं। धुअेंकी ये तरंगें जब हवामें हलके-गाढ़े रूपमें दौड़ती हैं, तब वायलके अत्यन्त सुन्दर वेलबूटे दिखाअी देते हैं।

और नीचे! नीचेके पानीकी मस्तीका वर्णन तो हो ही नहीं सकता। पानी मानो अद्वैतानंदमें फिसल पड़ा। जितना नीचे गिरा, अुतना ही अूपर अुड़ा। अुसने हरे रंगमें से सफेद फेन पैदा किया और जीमें आया वैसा विहार किया। जिस अपूर्व आनंदको याद करके नीचेका पानी बार बार अुभर आता था। बोरीबाट परके साबुनके पानीकी अुपमा यदि अरसिक न होती तो नीचेके पानीके अुभारकी तुलना मैं

अुसीसे करता। मगर धोबीके साबुनका पानी गंदा होता है। अुसमें गति और मस्ती नहीं होती; बेपरवाही और तांडव भी नहीं होता। और न हास्य फीका पड़ते ही चेहरे पर फिरसे निर्मल भाव धारण करनेकी कला अुसके पास होती है। यहांका पानी देखकर धोबीघाटका स्मरण ही क्यों हुआ? अुसमें किसी प्रकारका औचित्य ही नहीं था!

मनुष्य यदि समाधिकी मस्ती चाहता हो, तो अुसे यहां आना चाहिये। अुसे किसी भी कारणसे निराश नहीं होना पड़ेगा।

अिस ओरके (दायें) टीलेकी दो सीढ़ियां अबकी बार मैं फिर अुतरा। अिस बार यहां अुपनिषद् सूझा। अूपर सूरज तप रहा था और मैं गा रहा था—'पूषन्नेकर्षे! यम! सूर्य! प्राजापत्य! व्यूह रश्मीन्; समूह तेजो।' जब पाठका अंत करीब आया और मैं बोला 'ॐ क्रतो स्मर; कृतं स्मर।' तब यकायक तीन-चार सालका मेरा सारा जीवन अेकसाथ अिस जीवन-धाराके सामने खड़ा हुआ और मुझे लगा मानो मैं अपना जीवन अिस मस्त जीवनकी कसौटी पर कस रहा हूं और यह देखकर कि वह पूरी तरह खरा अुतर नहीं रहा है, परेशान हो रहा हूं। दूसरे ही क्षण अिन तीन वर्षोंकी स्मृतिके भी तुषार बनकर आकाशमें अुड़ गये और मैं प्रभातके साथ अेकरूप हो गया। सचमुच यह प्रभात पूर्ण है। और मैं भी अिस पूर्णका ही अेक अंश हूं, अतः तत्त्वतः पूर्ण हूं। हम दोनों वि-सदृश नहीं हैं; अेक ही परम तत्त्वकी छोटी-बड़ी विभूतियां हैं। यह भान जाग्रत होते ही चित्त शांत हुआ और मैं अूपर आया।

चि० सरोजिनी भी यह सारा दृश्य अुत्कट नयनोंसे अधाकर पी रही थी। अिस सारे आनंदको किस तरह समझें, किस तरह हजम करें और किस तरह व्यक्त करें, अिस बातकी मीठी परेशानी अुसकी आंखोंमें दिखायी दे रही थी।

वहांसे तुरन्त लौटकर चौंसठ योगिनियोंके दर्शन करने थे; नर्मदा-प्रवाहके रक्षक सफेद, पीले, नीले पहाड़ देखने थे। अतः वहू जिस प्रकार पीहरसे ससुराल जाते समय दोनों ओरके सुख-दुःखके

स्थित भाव अनुभव करती हुई जाती है, उसी प्रकार धुवांधारको हार्दिक प्रणाम करके हम वापस लौटे।

हिन्दुस्तानमें जिस प्रकारके अनेक प्रपात अखंड रूपसे बहते रहते हैं और मनुष्यको भव्यताके तथा बुलन्द अवस्थाके सबक सिखाते रहते हैं। हजारों साल हुये—लाखों नहीं हुये जिसका विश्वास नहीं है—धुवांधार जिसी तरह सतत गिरता रहा है। श्रीरामचंद्रजी यहां आये होंगे। विश्वामित्र और वशिष्ठ यहां नहाये होंगे। चंद्रगुप्त और समुद्रगुप्तके सैनिकोंने यहां आकर जल-विहार किया होगा। श्री शंकराचार्यने यहां बैठकर अपने स्तोत्रोंका सर्जन किया होगा। कलचूरि तथा वाकाटक वंशके वीरोंने जिसी पानीमें अपने घावोंको धोया होगा और अल्हणादेवीने यहीं बैठकर चौंसठ योगिनियोंका स्मारक बनानेका संकल्प किया होगा। और भविष्यकालमें धुवांधारके किनारे क्या क्या होगा, कौन बता सकता है? खुद धुवांधारको ही यह मालूम नहीं है। वह तो सतत गिरता रहता है और तुषारके रूपमें उड़ता रहता है।

नवंबर, १९३९

४५

शिवनाथ और ओंव

कलकत्ता आते और जाते समय अनेक नदियोंसे मुलाकात होती है। जिस प्रदेशका जितिहास मुझे मालूम नहीं है, जिसकी शर्म आती है। यहांके लोग कितने सरल और भले मालूम होते हैं! अुन्होंने यदि मनुष्य-संहारकी कला हस्तगत की होती, तो अुनका नाम जितिहासमें अमर हो जाता। कुछ लोग मरकर अमर होते हैं। कुछ लोग मारनेवालोंके रूपमें अमर होते हैं। मलिक काफूर, काला पहाड़ आदि दूसरी कोटिके लोग हैं।

जिन नदियोंके किनारे लड़ाअियां हुअी हों तो मुझे मालूम नहीं। जिसलिअे मेरी दृष्टिसे जिन नदियोंका जल फिलहाल तो विशेष पवित्र है।

चर्मण्वतीने यज्ञ-पशुओंके खूनका लाल रंग धारण किया। शोण और गंगाने सम्राटोंका महत्त्वाकांक्षी रक्त हजम किया। अिन नदियोंने भी वैसा ही किया हो तो कोअी आश्चर्य नहीं। मगर जब तक मुझे मालूम नहीं है, तब तक अिस अनिश्चयका लाभ मैं अुन्हें देता हूं।

किन्तु अिन नदियोंके किनारे कअी साधुओंने तप अवश्य किया होगा और कृतज्ञतापूर्वक अुनके स्तोत्र भी गाये होंगे। यह भी मुझे मालूम नहीं है। फिर भी मैं अपनेको भारतवासी कहता हूं!

* * *

अेक बार मैं द्रुग गया था तब शिवनाथ नदीका मुझे थोड़ा परिचय हुआ था। गोंड़, भील आदि पर्वतीय जातियोंकी वह माता है। सारे छत्तीसगढ़की तो वह स्तन्यदायिनी है। अुसकी करुण कथा* चित्तको गमगीन करनेवाली है। पुण्य-सलिला नदीकी कहानी क्या अैसी होती है? किन्तु नदी बेचारी क्या करे? विजयी आर्योंने यदि अुसकी कथा गढ़ी होती तो अुसमें अुल्लासका तत्त्व मिल जाता। यह तो हारी हुअी, दबी हुअी और अुलझनमें पड़ी हुअी आदिम-निवासियोंकी जातिके संस्मरणोंके साथ बहनेवाली नदी है! अुसकी कहानियां तो वैसी ही गमगीनी-भरी होंगी।

कलकत्तेके रास्ते पर शिवनाथ नदी बार बार मिलती है और कहती है: 'राजाओंके और साधुओंके अितिहाससे तुम संतोष मत मानना। विजेताओंके और सम्राटोंके अितिहासमें तुम्हें लोक-हृदय नहीं मिलेगा। ब्राह्मण और श्रमण, मुल्ला और मिशनरी, किसीने भी जिनका दुःख नहीं जाना अैसे पहाड़ी लोगोंके दुःख-दर्दका अध्ययन करनेकी दीक्षा मैं तुम्हें दे रही हूं। क्या यह दीक्षा लेनेका साहस तुममें है?'

हिन्दुस्तानकी मूक जनताको वाचाल अेकता देनेके हेतुसे मैं हिन्दुस्तानीका प्रचार कर रहा हूं। अिसी कामके सिलसिलेमें अभी मैं पूना हो आया। अिसी कामके लिअे अब रामगढ़ जा रहा हूं। वहांकी कांग्रेसमें तमाम प्रांतोंके लोग आयेंगे। गांधीजीके आग्रहके कारण कांग्रेसके

---

* देखिये 'दुर्दैवी शिवनाथ'।

अधिवेशन अब देहातोंमें होने लगे हैं। यह सब ठीक है। मगर क्या रामगढ़में भी ये पर्वतीय लोग आयेंगे? बिहारके 'सान्थाल' और 'हो' शायद आयेंगे। किन्तु पता नहीं किस शिवनाथके पुत्र आयेंगे या नहीं।

* * *

आज सुबहसे अनेक नदियां देखीं। लंबे लंबे और चौड़े पत्थरोंवाली नदी भी देखी और कीचड़वाली नदी भी देखी। जिसके किनारे एक भी पेड़ नहीं है ऐसी नदी भी देखी, और जिसने एक ओर पेड़ोंकी एक मोटी दीवार खड़ी की है ऐसी नदी भी देखी। सफेद बगुले उसके पट पर कीचड़में अपने पैरोंकी आकृतियां बना रहे थे। मगर किस चरण-लिपिमें मैं कोई इतिहास नहीं पा सका, न किसी दंतकथाका हल खोज सका। नदी आशासे लिखती जाती है और निराशासे अपना लिखा लेख मिटाती जाती है। और नये लेखक-पाठकोंकी राह देखती रहती है।

हम आरसूगुडा जंक्शनके पास जा रहे हैं। एक छोटा-सा स्टेशन पास आ रहा है। इतनेमें हमारे रास्तेके नीचेसे बहती हुई एक सुन्दर नदी हमने देखी। सभी नदियां सुन्दर होती हैं, मगर इस नदीमें असाधारण सुन्दर आकृतियां बनानेकी कला नजर आयी। पानीके स्रोतमें भंवर पैदा होते होंगे। काईके कारण पानीको विशेष रूप प्राप्त होता होगा। ऊपरसे यह सब देखकर मुझे रवीन्द्रनाथके चित्र याद आये। इस नदीकी आकृतियां भी बिना कुछ बोले, बिना कोई बोध दिये, हृदय तक पहुंचती थीं और वहां हमेशाके लिअे अपनी छाप डाल देती थीं। इसीका नाम है सच्ची कला!

मगर इस नदीका नाम क्या है? परिचय हो और नाम न मिले, यह कितनी विचित्र स्थिति है! इतनेमें जीव स्टेशन आया। हमने लोगोंसे पूछा, 'इस नदीका नाम क्या है?' उन्होंने बताया 'जीव'। 'नदीके नाम परसे ही स्टेशनका नाम पड़ा है।' तब उसमें औचित्य नहीं है, ऐसा कौन कहेगा? मगर मनमें संदेह जरूर पैदा हुआ। यहां भेडेन नामक एक नदी जीवसे मिलती है। स्टेशन भेडेनके किनारे है। जीव जरा बड़ी है; इसी कारण भेडेनके साथ

अन्याय करके अुसका नाम स्टेशनको नहीं दिया गया। भेंडेन कोअी मामूली नदी नहीं है। काफी चौड़ी है। दूरसे आती है। मगर वह किसी तरहका गर्व न रखते हुअे अपना पानी ओबको सौंप देती है और अपने नामका आग्रह भी नहीं रखती। मैंने ओबसे पूछा: 'देखो, अुदारतामें यह भेंडेन तुझसे श्रेष्ठ है या नहीं?' ओबने जरा-सा आकृतियोंवाला स्मित करके कहा: "यह तो तुम मनुष्य जानो! भेंडेनने अपना नाम छोड़कर अपना नीर मुझे दे दिया, अिस अुदारताकी तारीफ करनेके बजाय अुससे अर्पणकी दीक्षा लेकर अुसके जैसी बनना मुझे अधिक पसंद है। देखो, अुसका और मेरा नीर अिकट्ठा करके महानदीको देनेके लिअे मैं संबलपुर जा रही हूं। वहां मैं भी अपना नाम छोड़ दूंगी। अिस प्रकार अुत्तरोत्तर नामरूपका त्याग करनेसे ही हम सबको महानदीका महत्त्व प्राप्त हुआ है; और वह भी सागरको अर्पण करनेके लिअे ही।"

और जाते जाते ओबने अनुष्टुभ् छंदमें अेक पंक्ति गा सुनाअी:

सर्वे महत्त्वम् अिच्छन्ति कुलं सत् अवसीदति।
सर्वे यत्र विनेतारः राष्ट्रं तत् नाशम् आप्नुयात्॥

* * *

ओबका यह संदेश सुनकर ही मैं रामगढ़ गया।

मार्च, १९४०

४६

दुर्दैवी शिवनाथ

['शिवनाथ और आँव' लेखमें जिसका जिक्र आया है, अुस लोककथाका सार दैमेत्तरा-ड्रुगसे लिखे हुअे नीचेके पत्रमें मिलेगा।]

कल और आज शिवनाथ नदीके दर्शन किये। यों तो कलकत्ता आते और जाते समय शिवनाथको अेक दो बार पार करना ही पड़ता है। यहां बड़े अूंचे पुल परसे शिवनाथका प्रवाह अूंचे अूंचे टीलोंके बीचमें बहता हुआ देखनेको मिलता है। कल शामको बालोड़से वापस लौटे तब शिवनाथके किनारे खास तौर पर घूमने गये थे।

चौमासा तो बैठ गया है, किन्तु नदीमें अभी तक पानी नहीं आया है। परिणाम-स्वरूप शिवनाथ किसी विरहिणीके जैसी म्लान-वदना मालूम पड़ी। श्रावण-भादोंमें जो अपने दोनों किनारोंको लांघ कर मीलों तक फैल जाती है, अुसी नदीको जिस तरह अपने ही पटमें अजगरके समान अेक कोनेमें पड़ी हुअी देखकर किसीके भी मनमें विषाद अुत्पन्न हुअे बिना नहीं रहेगा।

द्रुगके लोगोंसे शिवनाथके बारेमें मैंने पूछा: 'यह नदी कहांसे आती है? कितनी लंबी है? आगे अुसका क्या होता है?' परंतु कोअी मुझे ठीक जवाब नहीं दे सका। जिस नदीके माहात्म्यका वर्णन पुराणोंमें कहीं है? अुसके बारेमें कोअी लोकगीत प्रचलित है? कोअी दंतकथा सुनाअी देती है? अेक भी सवालका जवाब 'हां' में नहीं मिला। नदीके बारेमें जानने जैसा होता ही क्या है? रोज सुबह अुससे सेवा लेते हैं; बस, अुससे अधिक अुसका हमारे जीवनसे क्या संबंध है?

अंतमें मैंने द्रुग तहसीलका गेझेटियर मंगवाया। अुसमें अूपरके साधारण सवालोंके जवाब तो दिये ही हैं; मगर जिसके अलावा

शिवनाथके बारेमें अेक लोककथा भी दी हुअी है। यही कथा आज मैं यहां अपनी भाषामें देना चाहता हूं।

शिवा नामक अेक गोंड़ लड़की थी। जंगली गोंड़ जातिकी होते हुअे भी वह संस्कारी और रसिक थी। अुस पर गोंड़ जातिके ही अेक लड़केका दिल बैठ गया। लड़कीके दिलको आकर्षित कर सके, अैसा अेक भी गुण अुसमें नहीं था। स्वच्छंदतासे पेश आना और धमकियां देकर लोगोंसे काम निकालना, बस जितना ही अुसे मालूम था। वह शिवाका ध्यान करता रहता था और अुसे पानेका कोअी रास्ता न देखकर परेशान होता रहता था। आखिर अपनी जातिके रिवाजके अनुसार अुसने मौका देखकर शिवाका हरण किया और राक्षस-पद्धतिसे अुसके साथ विवाह किया!

विवाह-विधि पूरी करना अुसके लिअे आसान था; मगर शिवाको अपनी बनाना आसान काम नहीं था।

शिवा जैसी संस्कारी और भावनाशील लड़की अुसकी ओर भला क्यों देखने लगी? और यह जड़मूढ़ अनुनय जैसी चीजको क्या समझे? अुसने पतिकी हुकूमत चलानेकी कोशिश की। लड़कीने अबलाका सामर्थ्य प्रकट किया। शिवाको लूटकर लानेवाला युवक शिवाके रुद्ध हृदयके सामने हारा। अुसका क्रोध भड़क अुठा। शरीरको ही सब-कुछ समझनेवाला आदमी शरीरके बाहर जा ही नहीं सकता। अुसने अंतमें शिवाको मार डाला और अुसके शरीरके टुकड़े अेक गहरी घाटीमें फेंक दिये!!

जहां शिवाका शव गिरा वहींसे तुरन्त अेक नदी बहने लगी। वही है हमारी यह शिवनाथ, जो आगे जाकर महानदीमें अपना पानी छोड़ देती है।

आज सुबह हम बेमेतरा जानेके लिअे निकले। रास्तेमें अेक दुर्घटना हुअी। हमारी दौड़ती हुअी मोटर अेक बैलगाड़ीसे टकरा गअी और अेक बैलका सींग टूट गया। हम रुके और अुसकी मदद करनेके लिअे दौड़े। मुझे बैलका लटकनेवाला सींग काटनेकी सलाह देनी पड़ी। और जहांसे खून बह रहा था वहां पेट्रोलकी पट्टी बांधनी पड़ी।

सारा वायुमंडल करुण तथा ग़मगीन बन गया। अिस हालतमें शिवनाथका दुबारा दर्शन हुआ। वहां नदीका पट सुन्दर है। आसपासके पत्थर जामुनी लाल रंगके थे। नदीका पात्र भी सुन्दर था। प्रतिबिंब काव्यमय मालूम होता था। मगर शिवाकी करुण कथा मनमें रम रही थी। अतः अिस दर्शनमें भी विषादकी ही छाया थी।

शायद शिवनाथकी तक़दीर ही अैसी हो। आखिर मनका विषाद कम करनेके लिअे यह पत्र लिख डाला। अब दिल कुछ हलका मालूम होता है।

मअी, १९४०

४७

सूर्याका स्रोत

बारिशके होते हुअे हम कालाका सर्वोदय केंद्र देखने गये। वहां जानेके लिअे ये दिन अच्छे नहीं थे, अिसीलिअे तो हम गये। बारिशके दिनोंमें छोटी-छोटी 'नदियां' रास्ते परसे बहने लगती हैं, अुनमें पानी बढ़ने पर मोटर बसें भी घंटों तक रुकी रहती हैं। हमने सोचा कि हमारे सर्वोदय-सेवक हमारे आदिम-निवासी भाअियोंके बीच कैसे काम करते हैं यह देखनेका यही समय है।

भारतके पश्चिम किनारेके अेक सुंदर स्थानसे मेरा घनिष्ठ परिचय है। बम्बअीके अुत्तरमें करीब सौ मीलके फ़ासले पर बोरडी-घोलवडका स्थान है। वहां मैं महीनों तक रहा था। और वहांके समुद्रकी लहरोंसे रोज खेलता था।* समुद्रका पानी भी जब भाटाके कारण पीछे हटता था तब मील डेढ़ मील तक पीछे चला जाता था। और सारा समुद्र किनारा गीले टेनिस कोर्टके जैसा हो जाता था। हम पांच-दस

* अिस स्थानका वर्णन मैंने अपने 'मरुस्थल या सरोवर' लेखमें विस्तारसे किया है।

लोग जिस गीली रेतीके मैदान पर होकर समुद्रकी लहरें ढूंढने चले जाते थे। जब ज्वार आता तब पानीकी लहरें हमारा पीछा करती थीं और हम किनारेकी ओर दौड़ते आते थे। पानीकी लहरें धावा बोलें और हम अपनी जान लेकर किनारे तक दौड़ते आ जायें, यह खेल बड़े मजेका था। देखते देखते सारा खुला मैदान बड़े सरोवरका रूप ले लेता है और वायु पानीके साथ खेल करती है। ऐसे खारे पानीमें और रेतीमें भी अेक जगह तरवडके पेड़ उगे थे। उनके चिकने-चिकने पत्ते देखकर मैं कहता कि ये बड़े 'होनहार बिरवान' हैं।

जिस विशाल सरोवर-मैदानमें अुदावरण*-प्रजाकी बहुत बड़ी सृष्टि बसी है। किस्म-किस्मके शंख, किस्म-किस्मके केकड़े और ऐसे ही छोटे-मोटे प्राणी वहां रहते थे और अुनके कवच और हड्डियां समुद्र किनारे देखनेको मिलती थीं।

बोरडीमें मैं रहने गया, तब वहां अेक ही अच्छा हाअीस्कूल था। अब वह अेक अच्छा और बड़ा शिक्षा-केंद्र हो गया है। बाल-शिक्षण, प्रौढ़-शिक्षण, नयी तालीम, आदिम-निवासियोंकी तालीम, अध्यापन-केंद्र आदि अनेक संस्थायें वहां पर स्थापित हो गयी हैं। अब तो बोरडी राजनैतिक जाग्रतिका, शिक्षा-वितरणका और समाज-सेवाका अेक प्रधान केंद्र बना हुआ है।

बोरडीके दक्षिणमें मैं अेक दफा चींचणी भी गया था। वहांके कारीगर ठप्पा बनानेकी कलामें सारे हिन्दुस्तानमें अद्वितीय गिने जाते हैं। कांचकी चूड़ियां भी वहां अच्छी बनती हैं।

अबकी बार चींचणी और बोरडीके बीच डहाणू हो आया। यह स्थान भी समुद्रके किनारे है। अुसका प्राकृतिक दृश्य बोरडीसे कम सुन्दर नहीं है।

---

* वातावरण=पृथ्वीके गोलेको घेरनेवाला हवाका आवरण या वायुमंडल।

अुदावरण=पृथ्वी परकी जमीनको घेरनेवाला पानीका आवरण। अुद्=पानी।

पचास पौन सौ बरस पहले ओरानसे आये हुअे चंद ओरानी खानदान यहां बसे हुअे हैं। घर पर ओरानी भाषा बोलते हैं। अब ये लोग ओरानसे प्राचीन कालमें आये हुअे पारसी लोगोंके साथ कुछ-कुछ घुलमिल रहे हैं, और गुजराती और मराठी अुत्तम बोलते हैं। अिन ओरानियोंके बगीचे और वाड़ियां खास देखने लायक हैं। खेतीके आनुभविक विज्ञानसे और मेहनत-मजदूरीसे अिन लोगोंने लाखों रुपये कमाये हैं। हमारे देशमें बसकर अिन लोगोंने अिस देशकी आमदनी बढ़ायी है और यहांके किसानोंको अच्छेसे अच्छा पदार्थपाठ सिखाया है। ये लोग हमारे धन्यवादके पात्र हैं।

* * *

डहाणूसे सोलह मीलका फासला तय करके हम कासा गये। मेरे अेक पुराने विद्यार्थी श्री मुरलीधर घाटे बारह-पन्द्रह बरससे ग्राम-सेवाका काम करते आये हैं। अिसी साल अुन्होंने — और अुनकी सुयोग्य धर्मपत्नीने — कासाका केंद्र अपने हाथमें लिया। और देखते-देखते यहांका सांस्कृतिक वातावरण समृद्ध बना दिया। आचार्य श्री शंकरराव मोरेकी प्रेरणासे यह सब काम चल रहा है।

डहाणूसे कासा पहुंचते हुअे सामने अेक बहुत अूंचा पर्वत-शिखर दीख पड़ता है। शिखरका आकार देखते हुअे अिस पहाड़को अृष्य-शृंग कहना चाहिये। दरयाफ्त करने पर मालूम हुआ कि शिखरके शृंगका पत्थर मजबूत नहीं है। पत्थरको पकड़कर कोअी अूपर चढ़ने जाये तो पत्थरके टुकड़े हाथमें आ जाते हैं। मुझे डर है कि हजार दो हजार बरसके अंदर यह सारा शृंग हवा, पानी और धूपसे घिस जायगा और पहाड़की अूंचाअी अेकदम कम हो जायगी। अिस पहाड़के शिखर पर श्री महालक्ष्मीका मंदिर है। कहा जाता है कि कोअी गर्भिणी स्त्री महालक्ष्मीके दर्शनके लिअे अूपर तक गयी और थक गयी। महा-लक्ष्मीने पुजारीको स्वप्नमें आकर कहा कि अपने भक्तोंके अैसे कष्ट मैं बरदाश्त नहीं कर सकती, मुझे नीचे ले चलो। अब अुसी पहाड़की तराअीमें महालक्ष्मीका दूसरा मंदिर बनाया गया है।

कासाके नजदीक अेक अच्छी-सी नदी बहती है, जिसका नाम है सूर्या। अिस नदीके बारेमें भी अेक लोककथा है।

जब पांडव अिस रास्तेसे तीर्थयात्रा करने जा रहे थे, तब भीमकी अिच्छा हुअी कि स्थान-देवता श्री महालक्ष्मीसे शादी करें। पूछने पर महालक्ष्मीने कहा कि चंद योजनके फासले पर जो सूर्या नदी बहती है अुसके प्रवाहको अगर तुम मोड़कर मेरे अिस पहाड़के पांवके पास ले आओगे तो मैं तुमसे शादी करूंगी। शर्त अितनी ही है कि यह सारा काम अेक रातके अंदर होना चाहिये। अगर सुबहका मुर्गा बोला और तुम्हारा काम पूरा न हुआ तो हमसे तुम्हारी शादी न होगी। भीमने वादा किया। बड़े-बड़े पत्थर लाकर अुसने नदीके प्रवाहको रोक दिया। थोड़ी-सी जगह बाकी थी, अुसके लिअे पत्थर न मिलने पर अुसने अपनी पीठ ही अड़ा दी। फिर तो पूछना ही क्या? नदीका पानी बढ़ने लगा और धीरे-धीरे महालक्ष्मीकी पहाड़ीकी ओर मुड़ने लगा। महालक्ष्मी घबड़ा गयी कि अब अिस निरे मानवीके साथ शादी करनी होगी। देवोंमें चालबाजी बहुत होती है। हारनेकी नौबत आती है तब वे कुछ-न-कुछ रास्ता ढूंढ़ ही निकालते हैं।

अिधर भीम बांधके पत्थरोंके बीच पीठ अड़ाकर राह देख रहा था कि पानी पहाड़ी तक कब पहुंच जाता है। अितनेमें महालक्ष्मीने मुर्गेका रूप धारण किया और सुबह होनेके पहले ही 'कुकूच कू' करके आवाज दी। बेचारा भोला भीम निराश हुआ कि समयके अंदर अपना प्रण पूरा नहीं हो सका। वह अुठा। अुतनी जगह मिलते ही बढ़ा हुआ पानी जोरोंसे बहने लगा और पानीके साथ भीमकी मुराद भी बह गयी!

अिसी तरह धूर्त देवोंका और बलशाली असुरोंका झगड़ा भी अनगिनत लोककथाओंमें और पुराणोंमें पाया जाता है।

हम अनेक हरे-हरे खेतोंको पारकर सूर्याके किनारे पहुंचे। बारिशके दिन थे। पानी खूब बढ़ा हुआ था और भीम-बांधके सिर परसे नीचे कूद पड़ता था। दृश्य बड़ा ही मनोहारी था। जहां पानी जोरसे बहता था, वहां हमने अपनी कल्पनाका भीम बैठा हुआ देखा।

हमने उसे प्रणाम किया। उसने विषादसे अपना सिर हिलाया। और वह फिर ध्यानमें मग्न हो गया।

हम लौटकर कासा आये। वहांका काम देखा। आदिम जीवनको प्रकट करनेवाली प्रदर्शनी देखी। कुछ खाना खा लिया, लोगोंसे बातें कीं और फिर बसमें बैठकर महालक्ष्मीका मंदिर देखने गये। रास्तेमें आदिम-निवासी जातिके लोगोंकी कुटियां और उनके खेत देखे। यह जाति पिछड़ी हुई जरूर है, किन्तु उसने अपने जीवनका आनंद नहीं खोया है। महालक्ष्मीका मंदिर पहाड़ीके नीचे एक रमणीय स्थान पर है। देवीके भक्त दूर-दूर तक फैले हुये हैं। हर साल एक बहुत बड़ा मेला लगता है। देखते-देखते एक लाख लोगोंकी यात्रा भर जाती है। ऐसे यात्रियोंके रहनेके लिये चंद लोगोंने अभी यहां पर एक अच्छी धर्मशाला बांध दी है। उसे जाकर देखा। संगमरमरके पत्थर पर दाताओंके नाम खुदे हुये थे। नाम पढ़कर मुझे बड़ा ही आश्चर्य हुआ। सबके सब नाम अफ्रीकाके दक्षिण रोडेशियामें बसे हुये गुजराती घोदियोंके थे। किसीने सौ शिलिंग दिये थे। किसीने हजार दिये थे। कहां दक्षिण रोडेशिया, कहां गुजरात और कहां थाना जिलेके मराठी लोगोंके बीच यह गुजरातियोंका बनाया हुआ आराम-घर!

स्वराज्य सरकारकी मददसे जिन आदिम-निवासियोंके नवयुवक अब उत्साहके साथ नयी-नयी बातें सीख रहे हैं और अपनी जातिके सुधारकी बातें सोच रहे हैं। मैंने उनको कहा, तुम जितने पिछड़े हुये हो कि अपनी जातिके ही सुधारके लिये प्रयत्न करना तुम्हारे लिये ठीक है। लेकिन मैं तो वह दिन देखना चाहता हूं कि जब तुम लोग केवल अपनी ही जातिका नहीं किन्तु सारे भारतके सुधारका सोचने लगोगे। केवल अपनी जातिके ही नहीं किन्तु सारे देशके नेता बनोगे। जो अपनी ही जमातका सोचते हैं, उनका पिछड़ापन दूर नहीं होता। जो सारी दुनियाका सोचते हैं, सारी दुनियाकी सेवा करते हैं, वही अपनी और अपने लोगोंकी सच्ची उन्नति करते हैं।

मैंने अपने मनमें प्रश्न पूछा, अगर इन लोगोंमें भीमके जैसी शक्ति आयी और यहांके आस-पासके सवर्ण, सफेदपोश लोगोंमें स्थानीय

देवता महालक्ष्मीके जैसी चतुराओ आयी तो परिणाम क्या होगा! फिर तो केवल पानीकी सूर्या नदी नहीं बहेगी!

कलियुगका माहात्म्य समझकर नहीं, किन्तु सत्ययुगकी स्थापनाके लिअे हमें बिन आदिम-जातियोंको अपनेमें पूरी तरह समा लेना चाहिये। चार वर्णोंकी पुनः स्थापनाकी बातें और आदिम-जातिके 'अुद्धारकी' परोपकारी भाषा अब हमें छोड़ देनी चाहिये। अिनमें और हममें कोअी भेद ही नहीं रहना चाहिये।

सितम्बर, १९५१

४८

अबरी ओब

मैं कलकत्तासे वर्धा जा रहा था। गाड़ीमें रातको बिना कुछ ओढ़े सोया था। ओढ़नेकी जरूरत न थी; फिर भी यदि ओढ़ लेता तो चल सकता था। सुबह पांच बजे जब जागा तब हवामें कुछ ठंड मालूम हुअी; और चद्दरकी गर्मी न लेनेका पछतावा हुआ। आखिर 'अब क्या हो सकता है?' कहकर अुठा। कवियोंको जितना भविष्यकाल दिखाअी देता है, अुतना ही बाहरका दृश्य दिखाअी देता था। सारा दृश्य प्रसन्न था, मगर पूरा स्पष्ट नहीं था।

अितनेमें अेक नदी आयी। पुलके दो छोरोंके बीच अुसकी धारायें अनेक पंक्तियोंमें बंट गअी थीं। हरेक नदीके बारेमें अैसा ही होता है। मगर यहां स्पष्ट मालूम होता था कि अिस नदीने कुछ विशेष सौंदर्य प्राप्त किया है। पतले अंधेरेमें प्रभातके समयका आकाश यह तय नहीं कर पाता था कि पानीकी चांदी बनायें या पुराने जमानेका चमकते लोहेका आअीना बनायें?

हम पुलके बीचमें आये। मैं प्रवाहका सौंदर्य निहारने लगा। अितनेमें अैसा लगा मानो किसीने पानीके अूपर सफेद रंग छिड़क

दिया है और धीरे धीरे अुसकी अबरी* बन गअी है। यह रूप देखकर मैं खुश हो गया। अभी अभी दिल्लीमें जामिया मिल्लियाके छोटे बच्चोंको कागज पर अबरीकी आकृतियां बनाते हुअे मैंने देखा था। मुझे ये प्राकृतिक आकृतियां बहुत आकर्षक मालूम होती हैं।

अिस नदीका नाम क्या है? कौन बतायेगा? मैंने सोचा, नाम न मिला तो मैं अुसे अबरी नदी कहूंगा।

नदी गअी और वह कहांकी है यह जाननेकी मेरी अुत्कंठा बढ़ी। क्योंकि अुसके बाद धुवां छोड़नेवाली अेक दो चिमनियां दिखाअी दी थीं। और निकटके गांवमें बिजलीके दीये भी दिखाअी दिये थे। रेलवेका टाअिम टेबल निकालकर मैंने अुससे पूछा: 'पांच अभी ही बजे हैं। हम कहां हैं?' अुसका जवाब सुनते ही मुंहसे परिचयका आनंदोद्गार निकला: 'ओहो! यह तो हमारी ओब है!' रामगढ़ जाते समय अुसने कितनी सुन्दर आकृतियां दिखलाअी थीं! मैंने अुसे कृतज्ञताकी अंजलि भी दी थी। ओबको मैं पहचान कैसे न सका? अबरीका यह कला-विलास सभी नदियां थोड़े बता सकती हैं!

तो अिस ओब नदीने अबरीकी कला कौनसी वर्धा-शालामें सीखी होगी? या शायद दुनियाने अबरी-कला सबसे प्रथम अिन्हींसे सीखी होगी।

मअी, १९४१

---

* किताबकी जिल्द पर या अुसके अंदर जो रंगीन आकृतियोंवाला कागज अिस्तेमाल किया जाता है, और जिसको अंग्रेजीमें marble paper कहते हैं, अुसके लिअे देशी शब्द है 'अबरी'।

४९

तेंदुला और सुखा

आज मैं अेक अनसोचा और असाधारण आनंद अनुभव कर सका।

हम बर्वासे दुग आये हैं। आसपासके दो गांवोंमें राष्ट्रीय ग्रामशिक्षा (बेसिक अेज्युकेशन) शुरू करनेके लिअे शिक्षक तैयार करनेवाली अेक संस्थाका अुद्घाटन करनेको हम सुबह चार बजे दुग आ पहुंचे। नहा-धोकर नाश्ता किया और बालोड़के लिअे रवाना हुअे।

दुगसे बालोड़ ठीक दक्षिणकी ओर ३७ मील पर है। रास्ता सीधा है। मानो रस्सीसे रेखायें आंककर बनाया गया हो। मीलों तक सीधी रेखामें दौड़ते रहनेमें जिस प्रकार अेकसा-पन होता है, अुसी प्रकार अेक तरहका नशा भी मालूम होता है। बालोड़के पास पहुंचे और किसीने कहा कि यहांसे पास ही तेंदुला बंद और केनाल है। मामूली-सी वस्तु भी स्थानिक लोगोंकी दृष्टिमें बड़े महत्त्वकी होती है। भाअी तामस्करने जब कहा कि व्याख्यानके बाद हम यह बंद देखने चलेंगे तब विशेष अुत्साहके बिना मैंने 'हां' कह दिया था। वहां कुछ देखने योग्य होगा, अैसा मेरा खयाल ही न था। 'हां' कहा केवल स्थानिक लोगोंके आतिथ्यका अुत्साह भंग न होने देनेकी भलमनसाहतके कारण।

खासी ३७ मीलकी जो यात्रा की अुसमें गड्ढे आदि कुछ भी नहीं थे। जमीन सर्वत्र समतल थी। गुजरातकी तरह यहांकी जमीनमें बाड़ोंकी अड़चन भी नहीं है। अिस तरहकी समतल जमीन देखनेके बाद अेकाध नदी-नाला देखनेको मिले, अेकाध बांध नजरके सामने आये तो मनको अुतना व्यंजन मिलेगा, अिस खयालसे मैंने जाना कबूल किया था। जिसने पूनाके बंडगार्डनसे लेकर भाटघरके प्रचंड बांध तक अनेक बांध देखे हैं, अुसका कुतूहल यों सहज जाग्रत नहीं हो सकता।

बेजवाड़ामें कृष्णा नदीका भव्य बांध, गोकाकके पास घटप्रभाका बाल्य-परिचित बांध, लोणावलाके दो तीन आकर्षक बांध, मैसूरमें वृंदा-

बनका पोषण करनेवाला बादशाही कृष्णसागर, दिल्लीके निकट यमुनाका रमणीय 'ओखला' का बांध और नासिकसे मोटरके रास्ते पचास मील दूर आकर देखा हुआ 'प्रवरा' नदीका सुन्दरतम और रोमांचकारी बांध — ऐसे अनेक जलाशय जिसने देखे हैं, वह सिंहगढ़की तलहटीका 'खडक-वासला' जैसा बांध देखकर संतुष्ट भले हो, मगर अुसका कुतूहल बाल्यावस्थामें तो हो ही नहीं सकता।

भावनगरके पासके बोर तालाबका वर्णन मैंने लिखा है। बेज-वाड़ाकी कृष्णा नदीको मैंने श्रद्धांजलि अर्पित की है। दूसरोंके बारेमें अब तक कुछ लिखा नहीं है, अिस बातका मुझे दुःख है। फिर भी आज किसी भव्य जलराशिके दर्शन होंगे, अैसी अुम्मीद मुझे न थी। व्याख्यान, संभाषण और भोजन समाप्त करके हम तेंदुला कैनाल देखनेके लिअे वाहनारूढ़ हुअे और बांधकी ओर दौड़ने लगे। बांध परसे मोटर के जानेकी अिजाजत पानेके लिअे अेक आदमी आगे गया था। अुसकी राह देखनेका धीरज हममें न था। अिजाजत मिल ही जायगी, अिस खयालसे हम तेज रफ्तारसे आगे बढ़े और बांधके पास पहुंचे। बांधके अूपर गये, और —

मैं तो अवाक् हो गया!

कितना लंबा और चौड़ा पानीका विस्तार! और पानी भी कितना स्वच्छ!! मानो आकाश ही आनंदातिशयमें द्रवीभूत होकर नीचे अुतर आया हो! और पानीका रंग? जामुनी, नीला, फीरोजी, सफेद और गुलाबी!! और यह भी स्थायी नहीं। आकाशके बादल जैसे जैसे दौड़ते जाते थे, वैसे वैसे पानीका रंग भी बदलता जाता था। छोटी तरंगोंके कारण पानीकी तरलता तो खिलती ही थी; तिस पर अूपरसे अुसमें यह रंग-परिवर्तनकी चंचलता आ मिली। फिर तो पूछना ही क्या था? जहां देखो वहां काव्य डोल रहा था, चमत्कार नाच रहा था। अपना महत्त्व किसके कारण है, यह दोनों ओरके किनारे जानते थे। अतः वे अदबके साथ जलराशिकी खुशामद करते थे।

अिस बांधकी खूबी अुसके विस्तारके अलावा अेक दूसरी विशेषतामें है। तेंदुला और सुखा दोनों नदियां बहनें हैं। तेंदुला बड़ी बहन

है। वह ३०—४० मील दूरसे आती है। अुसके मुकाबलेमें सुखा केवल बालिका है। तीन मील दौड़कर ही वह यहां आ पहुंचती है। वे दोनों जहां अेक-दूसरेके पास आती हैं, वहीं यह प्रेममूर्ति बांध मानो यह कह कर कि 'मेरी सौगंध है तुम्हें जो आगे बढ़ीं तो!' दोनोंके सामने आड़ा सो गया है। करीब तीन मील लंबा बांध अिन दो नदियोंको रोकता है। और फिर अपनी मरजीके अनुसार थोड़ा थोड़ा पानी छोड़ देता है। कच्ची मिट्टीका अितना बड़ा बांध हिन्दुस्तानमें तो क्या सारे संसारमें और कहीं नहीं होगा! बांधके नीचेकी १५ मील तककी अभिमानी जमीन अैसा अुपकारका पानी लेनेसे अिनकार करती है। अतः यह नहर अुसके बादके ६०—७० मील तक दोनों ओरके खेतोंकी सेवा करती है। बांधकी वजहसे अूपरकी बहुत-सी जमीन पानीमें डूब गयी है अिसकी कल्पना केवल आंखोंसे कैसे हो? तलाश करने-पर पता चला कि करीब तीन सौ बीस वर्गमील जमीन पर गिरनेवाला पानी यहां जमा हुआ है। पानीका विस्तार सोलह वर्गमील है। १९१० में अिस बांधका काम आरंभ हुआ और पौन करोड़से अधिक रुपया खर्च होनेके बाद ही वह पूरा हुआ। बारिशमें अिन दोनों नदियोंका पानी अेकत्र होता है। और फिर तो सारा जलमग्न दृश्य देखकर 'सर्वतः संप्लुतोदके' का स्मरण हो आता है। जब बीचका टापू अपना सिर जरा अूंचा करनेका प्रयास करता है, तब अुसकी यह परेशानी देखकर हमें हंसी आती है। आज अिस टापू पर कुछ अूंचे पेड़ 'यद् भावि तद् भवतु' वृत्तिसे अिस बाढ़की प्रतीक्षामें खड़े हैं। अुन्हें अुस लाल किनारवाली किश्तीमें बैठकर थोड़े ही भाग जाना है? अैसे पेड़ जब तक टिक सकते हैं, शानके साथ रहते हैं। और अंतमें जड़ें खुली पड़ने पर पानीमें गिर पड़ते हैं।

गरमीमें जब दो नदियोंके पात्र अलग अलग हो जाते हैं, तब धूप तथा विरहके कारण वे अधिक सूखने न पावें, अिस हेतुसे बीचमें अेक नहर खोदकर दोनोंका पानी अेक-दूसरेमें पहुंचानेका प्रबंध कर दिया जाता है।

जाननेवाले जानते हैं कि नदियोंका भी हृदय होता है। उनमें वात्सल्य होता है, चारित्र्य होता है और उन्माद तथा पश्चात्ताप भी होता है। ये दो बहनें यहां जो कुछ करती हैं उसमें अेक-दूसरेकी शोभाकी ईर्ष्या जरा भी नहीं करतीं। मत्सर या सापत्न-भाव उनके चेहरे पर बिलकुल नहीं दीख पड़ता। उन्हें जिस बातका भान है कि बांधरूपी जबरदस्त संयमके कारण उनकी शक्ति बहुत कुछ बढ़ी है। केवल बहते रहना ही नदीका धर्म नहीं है। फैलना और आशीर्वाद-रूप बनना भी नदी-धर्म ही है, तमाम नदियोंको यह नसीहत देनेके लिअे ही मानो वे यहां फैली हुअी हैं।

नदीके किनारे पेड़ खड़े हों, तो वहां अेक तरहकी शोभा नजर आती है। और ये पेड़ जब अुसके पानीको ढंकनेका वृथा प्रयत्न करते हैं, तब जिस विफलतामें से भी वे सफल शोभा अुत्पन्न करते हैं।

हम अुस किनारेके पेड़ोंकी मुलाकात लेने गये। समय दोपहरका था। निद्रालु पेड़ नदीके साथ बातें करते करते नींदमें डूब रहे थे और चारों ओर अुष्ण-शीतल शांति फैली हुअी थी। सिर्फ तरह तरहके पक्षी मंद मंजुल कलरव करके अेक-दूसरेको जिस काव्यका आनंद लूटनेके लिअे प्रोत्साहित कर रहे थे।

और लाल मकोड़े, जिन्हें मराठीमें 'वाघमुंग्या' या 'अुंबील' कहते हैं, अेक किस्मके चिकने पदार्थसे पेड़ोंके चौड़े पत्तोंको अेक-दूसरेसे चिपकाकर जिस सारे काव्यको भरकर रखनेके लिअे थैलियां बना रहे थे। मेरी आंखें भी दिलकी थैली बनाकर अुसमें सामनेका दृश्य भरनेके लिअे सारे प्रदेशको चूस रही थीं।

नदीको जिसमें कोअी अेतराज नहीं था।

मार्च, १९४०

५०

ऋषिकुल्याका क्षमापन

आज महाशिवरात्रिका दिन है। रोजके सब काम अेक तरफ रखकर सरिता, सरित्पिता और सरित्पतिका ध्यान करनेके निश्चयसे मैं बैठा हूं। सरितायें लोकमातायें हैं। अुनकी 'जीवनलीला' को अनेक प्रकारसे याद करके मैं पावन हुआ हूं। पूर्वजोंने कहा है कि नदीका पूजन स्नान, दान और पानके विविध रूपसे करना चाहिये। मुझे लगा: केवल स्नान-दान-पान ही क्यों? भक्ति ही करनी है तो फिर वह चतुर्विधा क्यों न हो? अैसा सोचकर मैंने नदीका गान करनेका निश्चय किया। 'लोकमाता' और प्रस्तुत 'जीवनलीला' अिन दो ग्रंथोंमें यह गान सुननेको मिल सकता है।

अब जब कि प्रवास कम हो गया है और सरित्पति सागरका निमंत्रण भी कम सुनाअी देने लगा है, मैं दिलमें सोच रहा था कि सरित्पिता पहाड़ोंका कुछ थाह करूं। अितनेमें अेक छोटीसी पवित्र नदीने आकर कानमें कहा: "क्या मुझे बिलकुल भूल गये?" मैं शरमाया और तुरन्त अुसको स्मरणांजलि अर्पण करके अुसके बाद ही पहाड़ोंकी तरफ मुड़नेका निश्चय किया। यह नदी है कलिंग देशमें केवल सवा सौ मीलकी मुसाफिरी करनेवाली ऋषिकुल्या।

ऋषिकुल्या नदीका नाम तक मैंने पहले नहीं सुना था। मैं अशोकके शिलालेखोंके पीछे पागल हुआ था। जूनागढ़के शिलालेख मैंने देखे थे। फिर अुड़ीसाके भी क्यों न देखूं? अैसा खयाल मनमें आया। कलिंग देशका हाथीके मुंहवाला धौलीका शिलालेख मैंने देखा था। फिर अितिहास-दृष्टि पूछने लगी कि घोड़ा दक्षिणकी ओर जाकर वहांका जौगढ़का विख्यात शिलालेख कैसे छोड़ सकते हैं? अुसको तृप्त करनेके लिअे गंजामकी तरफ जाना पड़ा। वह प्रवास बहुत काव्यमय था। लेकिन अुसका वर्णन करने बैठूं तो वह ऋषिकुल्यासे भी लम्बा हो जायगा।

यह नदी चिल्का सरोवरसे मिलनेके बजाय गंजाम तक कैसे गयी और समुद्रसे ही क्यों मिली, जिसका आश्चर्य होता है। शायद सागर-पत्नीका सौभाग्य प्राप्त करनेके लिअे उसने गंजाम तक दौड़ लगायी होगी। लेकिन यहांके समुद्रमें कोअी उत्साह दिखायी नहीं देता। रेतके साथ खेलते रहना ही उसका काम है।

ऋषिकुल्या वैसे छोटी नदी है, फिर भी शायद नामके कारण उसकी प्रतिष्ठा बड़ी है। क्योंकि जितनी छोटीसी नदीको कर-भार देनेके लिअे पथमा और भागुवा ये दो नदियां आती हैं। और भी दो-तीन नदियां उसे आकर मिलती हैं। लेकिन दारिद्र्यके संमेलनसे थोड़े ही समृद्धि पैदा होती है? गरीबीके दिन आये कि सब ठनठन गोपाल!

ऋषिकुल्याके किनारे अस्का नामका अेक छोटासा गांव है। छोटासा गांव सुन्दर नहीं हो सकता, अैसा थोड़े ही है? जहां नदियोंका संगम होता है, वहां सौंदर्यको अलगसे न्यौता नहीं देना पड़ता। और यहां पर तो ऋषिकुल्यासे मिलनेके लिअे महानदी आअी हुअी है! दोनों मिलकर गन्ना अुगाती हैं, चावल अुगाती हैं और लोगोंको मधुर भोजन खिलाती हैं। और जिनको अुन्मत्त ही हो जाना है, अैसे लोगोंके लिअे यहां शराबकी भी सुविधा है। अिस 'देवभूमि' में लोगोंके सुरा-पानको अुचित कहें या अनुचित? जो सुरा पीते हैं सो सुर यानी देव; और जो नहीं पीते सो असुर — अीरानी लोगोंकी सुर-असुरकी व्याख्या अिस प्रकार है।

ऋषिकुल्या नाम किसने रखा होगा? अिसके पड़ोसकी दो नदियोंके नाम भी अैसे ही काव्यमय और संस्कृत हैं। 'वंशधारा' और 'लांगुल्या' जैसे नाम वहांके आदिवासियोंके दिये हुअे नहीं प्रतीत होते।

यह सारा प्रदेश कलिंगके गजपति, आंध्रके वेंगी तथा दक्षिणके चोल राजाओंकी महत्त्वाकांक्षाओंकी युद्धभूमि था। तब ये सब नाम चोलके राजेन्द्रने रखे या कलिंगके गजपतियोंने, यह कौन कह सकेगा?

जौगढ़का अितिहास-प्रसिद्ध शिलालेख देखकर वापस लौटते हुअे शामके समय ऋषिकुल्याका दर्शन हुआ। संस्कृत साहित्यमें दधिकुल्या, घृतकुल्या, मधुकुल्या जैसे नाम पढ़कर मुंहमें पानी भर आता था।

अपिकुल्याका नाम सुनकर मैं भक्तिनम्र हो गया और अुसके तट पर हमने शामकी प्रार्थना की।

छोटीसी नदी पार करनेके लिअे नाव भी छोटीसी ही होगी। अुस दिनका हमारा दैव भी कुछ अैसा विचित्र था कि यह छोटीसी नाव भी आधी-भरी पानीसे भरी हुअी थी। अंदरका पानी बाहर निकालनेके लिअे पासमें कोअी लोटा-कटोरा भी नहीं था। अिसलिअे जूते हाथमें लेकर हमने नावमें खुले पांव प्रवेश किया। अिच्छा थी कि नदीमें पांव गीले न हो जायें। लेकिन आखिर नावमें जो पानी था अुसने हमारा पद-प्रक्षालन कर ही दिया। खड़े रहते हैं तो नाव लुढ़क जाती है। बैठते हैं तो धोती गीली होती है। अिस द्विविध संकटमें से रास्ता निकालनेके लिअे नावके दोनों सिरे पकड़कर हमने कुक्कुटासनका आश्रय लिया और अुसी स्थितिमें बैठकर वेद-कालीन और पुराण-कालीन अृषियोंका स्मरण करते करते अुनकी यह कुल्या पार की। तबसे अिस अृषिकुल्या नदीके बारेमें मनमें प्रगाढ़ भक्ति दृढ़ हुअी है। कुक्कुटासनका 'स्थिर-सुख' जब तक याद रहेगा, तब तक निशीथ-कालका वह प्रसंग भी कभी भूला नहीं जायगा।

वहांके अेक शिक्षकके पाससे अृषिकुल्याके बारेमें जानकारी प्राप्त करनेकी कोशिश की। अुन्होंने अुड़िया भाषामें लिखा हुआ अेक दीर्घ-काव्य परिश्रमपूर्वक लिखकर मेरे पास भेज दिया। अब तक अुस काव्यका आस्वाद मैं नहीं ले सका हूं। अृषिकुल्याके प्रति भक्तिभाव दृढ़ करनेके लिअे आधुनिक काव्यकी जरूरत भी नहीं है। मेरे खयालसे महा-शिवरात्रिके दिन किया हुआ अृषिकुल्याका यह क्षमापन-स्तोत्र अुसको मंजूर होगा और वह मुझे अचलोंका अुपस्थान करनेके लिअे हार्दिक और सुदीर्घ आशीर्वाद देगी।

महाशिवरात्रि,
२७ फरवरी, १९५७

५१

सहस्रधारा

पुराना ऋण शायद मिट भी सकता है; किन्तु पुराने संकल्प नहीं मिट सकते। पचीस वर्ष पहले मैं देहरादूनमें था, तब सहस्रधारा देखनेका संकल्प किया था। उत्कंठा बहुत थी, फिर भी उस समय जा नहीं सका था। कुछ दिनों तक जिसका दुःख मनमें रहा; किंतु बादमें वह मिट गया। सहस्रधारा नामक कोई स्थान संसारमें कहीं है, जिसकी स्मृति भी लुप्त हो गई। मगर संकल्प कहीं मिट सकता है?

आचार्य रामदेवजीने बहुत आग्रह किया कि मुझे उनका कन्या-गुरुकुल एक बार देख लेना चाहिये। मुझ भी यह विकसित हो रही संस्था देखनी थी। पिछले साल नहीं जा सका था। अतः जिस साल वचन-बद्ध होकर मैं वहां गया। अब प्रकृतिके पीछे पागल नहीं बनना है, अब तो मनुष्योंसे मिलना है, संस्थायें देखनी हैं, राष्ट्रीय सवालोंकी चर्चा करनी है, अच्छे अच्छे आदमी ढूंढ़कर उन्हें काममें लगाना है, सेवकोंके साथ विचारोंका और अनुभवोंका आदान-प्रदान करना है — आदि विविध धारायें मनमें चल रही थीं। तब सहस्र-धाराका स्मरण भला कहांसे होता? मैं तो हिन्दी-हिन्दुस्तानीकी चर्चामें ही मशगूल था। इतनेमें युवक रणवीर मुझसे मिलने आये। किसीने उनकी पहचान कराई। उन्होंने अपने आप कहा, देहरादूनमें देखने लायक स्थानोंमें फॉरेस्ट कॉलेज है, फौजी पाठशाला है, और प्राकृतिक दृश्योंमें गुच्छुपानी और सहस्रधारा है। आखिरका नाम सुनना था कि पचीस वर्षकी विस्मृतिके पत्थरोंकी कब्रको तोड़कर पुरानी स्मृति और पुराना संकल्प भूतकी तरह आंखोंके सामने खड़े हो गये। अब उस संकल्पको गति दिये बिना कोई चारा ही न था।

तैल-वाहन (मोटर)का प्रबंध हुआ और उत्तरकी ओर पांच-सात मीलका रास्ता तय करके हम राजपुर पहुंचे। यहींसे ऊपर मसूरी जानेका रास्ता है। हम राजपुरसे करीब छाती मील पूर्वकी ओर जंगलमें पैदल

चले। ठीक पैंसठ मिनट चलकर हम सहस्रधारा पहुंचे। शामका समय था। पीछेकी ओर सूर्य अस्त होनेकी तैयारी कर रहा था और उसकी लंबी होती किरणें हमारे सामनेके मार्गको अधिकाधिक लंबा बना रही थीं। पांच-दस मिनटमें हमने मानव-संस्कृतिको छोड़कर जंगलमें प्रवेश किया। पानीके बहावके कारण जमीनमें गहरे खड्डे पड़ गये थे। उनमें होकर हमें जाना था। हम चार आदमी थे। बातें करते जाते, आसपासका सौंदर्य निहारते जाते और समयका हिसाब लगाते जाते। अमरनाथ, तुंगनाथ, बदरीनाथ विशाल जैसे स्थान जिसने देखे हैं, उसके सामने मसूरीके पहाड़ क्या चीज हैं? फिर भी काफी वर्षोंके पश्चात् फिरसे हिमालयकी तलहटीमें जाना हुआ, जिससे यह दृश्य भी आंखोंको भव्य मालूम हुआ।

मसूरीके पहाड़ोंमें कभी बार टेकरियां गिर पड़ती हैं, जिसे अंग्रेजीमें 'लैण्ड-स्लिप' या 'लैण्ड-स्लाइड' कहते हैं। यह दृश्य ऐसा दिखाई देता है मानो किसी सूरमा योद्धाको जबरदस्त चोट लगी हो। बड़े बड़े पर्वत छोटे-बड़े वृक्षोंसे ढंके हों और बीचमें ही उनका एक बड़ा हिस्सा टूट जानेसे खुला पड़ गया हो, तो वह दृश्य देखकर हृदयमें कुछ अजीब भाव पैदा होते हैं। ऐसे असाधारण प्राकृतिक दृश्य बहुत बड़े होते हैं। और जिस दुर्घटनाका कोई इलाज नहीं होता। अतः ऐसे घाव विषम नहीं मालूम होते; बल्कि पर्वतका आदरपात्र वैभव ही दिखाते हैं।

हम नीचे उतरे, फिर चढ़े। फिर उतरे। खूब चढ़े। वहांसे चलकर आये ऐसा उतार आया।

हम स्वेच्छासे चतुष्पाद बनकर आहिस्ता-आहिस्ता नीचे उतरे। रास्तेमें हर जगह जहां भी उतरे वहां पत्थरोंकी एक फैली हुई सूखी नदी थी ही। वर्षाऋतुमें ये दृषद्वती नदियां जितना कोलाहल करती हैं कि सारी घाटी सहस्र-निनादसे गरज उठती है; मगर आज तो चारों ओर भीषण शांति थी। छोटे छोटे पक्षी एक-दूसरेको दूर दूरसे यदि विचारा न करते, तो यहां खड़े रहनेमें भी दिलमें डर घुस जाता। आखिर उतार आया और चारों ओर स्लेटवाले पत्थर

नजर आये। जान बचानेके लिअे जब अेकाध तख्तीको पकड़ने जाते, तो अुसका चूरा ही हाथमें आ जाता था!

ज्यों त्यों करके हम नीचे अुतरे। करीब अेक घंटे तक हम चलते रहे। जिनकी मोटरमें आये थे वे भाअी कहने लगे, 'मैं तो यहीं बैठता हूं; आप आगे हो आअिये।' मैंने कहा, 'आपसे हमने वादा किया था कि अेक घंटेमें वापस लौट आयेंगे। मगर सहस्रधारा पहुंचनेके लिअे अेक घंटेसे अधिक समय लगेगा। अतः आप वापस जाअिये और मोटरके साथ समय पर देहरादून पहुंच जाअिये। हम किरायेकी बसमें आ जायेंगे।' रणवीर कहने लगे, 'अब तो दस मिनटमें हम पहुंच जायेंगे। सामनेकी टेकरी पर वह जो सफेद कुटिया दिखाअी देती है अुसके पास ही सहस्रधारा है।'

अितनी दूर आये हैं, तो पांच मिनट और सही, अैसा विचार करके हम आगे बढ़े। पीछे मुड़कर देखनेकी अिच्छा हुअी तो सूरज आकाशमें लटक रहा था और तलहटीकी घाटीके पहाड़ अपने दो हाथ अूंचे करके अुसका स्वागत कर रहे थे, मानो गेंद पकड़नेकी तैयारी कर रहे हों। अूपर अुछाला हुआ बच्चा मांके हाथोंमें पड़ते ही हंसने लगता है और मां प्रसन्न होती है, अैसा ही वह दृश्य था। अैसे समय पर मांके प्रेमके अुभारका मनमें सेवन करें, या बच्चेका विश्वासपूर्ण हास्य विकसित करें, दोमें से किस आनंदके साथ तादात्म्यका अनुभव करें, अिसका निश्चय न होनेसे मन परेशान होता है। अितना ही अेक दृश्य देखनेके लिअे यहां तक आया जा सकता है! मगर संकल्प तो किया था सहस्रधाराका। अतः लंबी सूर्य-किरणोंकी ओरसे हमने मुंह फेरा और आगे बढ़े।

अितनेमें यकायक अेक बड़ा प्रपात धबधबाता हुआ नजर आया। अूंचाअीसे स्वच्छ पानी मजबूत मिट्टीकी प्राकृतिक दीवारसे लुढ़कता है, आवाज करता है और अनोखी मस्तीभरी अेकतानतासे नीचे अुतरता है। पासमें कोअी है या नहीं, यह देखनेकी अुसे फुरसत कहां है? क्या होता है अिसकी अुसे कोअी परवाह नहीं है। वह तो धब-धब, धब-धब आवाज करता ही रहता है। पत्थरके

ऊपरसे जब पानी गिरता है तब इतना आश्चर्य नहीं होता। मगर यहां तो अपनी जिद न छोड़नेवाली मिट्टी परसे पानी गिरता है। मैं तो देखता ही रहा। पानीके भव्य दृश्यमें इतना नशा होता है, यह शराबियोंको यदि मालूम हो जाय, तो वे शराबका नशा छोड़कर अहर्निश यहीं आकर बैठे रहें। अेक क्षणके लिअे तो मैं भूल ही गया कि हमें वापस लौटना है। भले अेक क्षणके लिअे, मगर जब हम प्रकृतिके साथ अेकरूप हो जाते हैं तब वह सचमुच अद्वैतानंद होता है। अपना होश भूल जानेके बाद आनंदके सिवा और कुछ रह ही नहीं सकता।

तब क्या जिसे हम जड़ सृष्टि कहते हैं वह जड़ नहीं है, बल्कि अद्वैतानंदकी समाधिमें अेकतान होकर पड़ी है? अिसका जवाब भला कौन दे सकता है? और कौन सुन भी सकता है?

रणबीर कहने लगे, 'अब हम जरा आगे चलेंगे।' अब देरी करनेकी मेरी अिच्छा न थी। मगर थोड़ा बाकी रह गया अैसा विषाद मनमें न रहे अिसलिअे मैं आगे बढ़ा। नीचे पानी बह रहा था। धीरे धीरे हम नीचे अुतरे ही थे कि सुराखारकी महक आने लगी। नीचे अुतरकर थोड़ासा पानी पिया। कहते हैं कि तमाम चर्म-रोगोंके लिअे यह पानी बहुत मुफीद है। अिस पानी और अुसके अद्भुत गुणोंके बारेमें मैं सोच रहा था; किन्तु दिल तो अभी देखे हुअे प्रपातकी धब-धब आवाजके साथ ही ताल साध रहा था। अितनेमें दाहिनी ओर ऊपर अेक झुकी हुअी खोहके छतसे पानीकी बूंदें गिरती देखीं। अुनकी आवाज अैसी हो रही थी मानो अत्यंत सौम्य और मूक-प्राय जलतरंग या वृंद-गायन हो।

यही है सच्ची सहस्रधारा। हजारों बूंदें अिस गुफाके ऊपरसे और अंदरसे टप टप गिरती हैं। मगर अुनकी आवाज नहीं होती। शांतिके साथ ये बूंदें सतत गिरती रहती हैं। अेक ओरसे हम ऊपर चढ़े। वहां अेक गहरी गुफा थी। बीचमें स्तंभके समान पत्थरका भाग था। हम अुसके चिर्दगिर्द घूमे। चारों ओर सहस्रधाराकी बरसात हो रही थी। मालूम होता था मानो सारा पहाड़ पिघल रहा है। हम काफी

भींग गये। अेक घंटा तेजीसे चलकर आनेसे शरीरमें गरमी खूब थी। अिसलिअे भींगते समय विशेष आनंद महसूस हुआ। कितना ठंडा है यहांका दृश्य! यहां रहनेके लिअे मनुष्यका जन्म कामका नहीं। यहां तो वेदमंत्रोंका चातुर्मास्यमें रटन करनेवाले मेंढकोंका अवतार लेकर रहना चाहिये। जो हृदय कुछ समय पहले शक्तिशाली प्रपातके साथ अेकरूप हो गया था, वही यहां अेक क्षणमें अिस रिमझिम रिमझिम सहस्रधाराके बालनृत्यके साथ तन्मय हो गया। मैंने रणवीरको जी भरकर धन्यवाद दिया और कहा, 'अितना हिस्सा यदि देखना बाकी रह जाता, तो सचमुच मैं बहुत पछताता।' वारिशसे रक्षा करनेवाली असंख्य गुफाअें मैंने देखी हैं। मगर ग्रीष्मकालमें भी अपने पेटमें वारिशका संग्रह रखनेवाली गुफा तो पहले-पहल यहीं देखी। सीलोनके मध्यभागमें अेक स्थान पर चित्रोंवाली अेक बड़ी गुफा है; अुसमें से अेक नन्हा-सा झरना झरता है। मगर अिस प्रकारकी अखंड वारिश तो यहीं पहले-पहल देखी। हमें वापस लौटनेकी जल्दी थी। मगर अिस वारिशको जल्दी नहीं थी। अुसको अपना जीवन-कार्य मिल चुका था। पत्थरों पर जमी हुअी काअीके कारण पांव फिसलते थे; और यहांके सौंदर्य, पावित्र्य और शांतिके कारण पांव यहां चिपकते थे। जीमें आता था कि जितना अधिक समय अिस स्थितिमें बीते अुतना ही लाभ है।

आखिर यहांसे लौटना ही पड़ा। अब तो दुगुनी रफ्तारसे जाना था। रास्ते पर चंद मजदूर और ग्वाले जल्दी जल्दी चलते हुअे नजर आयें। बेचारे गरीब लोग! वे बड़ी कठिनाअीसे अैसे स्थान पर जीवन बिताते हैं। मगर हमें तो अिसी बातकी और्ष्या हुअी कि अिन्हें सहस्रधाराकी अमृतमयी दृष्टिके नीचे रहनेको मिलता है।

अुतरते समय तो अुतर गये थे, मगर अब अंधेरेमें चढ़ेंगे कैसे, यह सवाल था। मनमें आया, अेकाध लाठी मिल जाय तो अच्छा हो। वहां अेक देहाती दुकान थी। दुकानदारसे हमने पूछा, 'भैया, अेक अच्छीसी लकड़ी दे दोगे?' मैं अेक कानसे नहीं सुनता, तो दुकानदार दोनों कानोंसे बहरा था! मेरी बात अुसकी समझमें नहीं आती थी। मैं

अधीर बन गया था। आखिर अेक साथीने अिशारेसे अुसको समझाया। अुसने तुरन्त अन्दरसे अपनी बांसकी लकड़ी ला दी। पैसे दिये तो अुसने लेनेसे अिनकार कर दिया। और लकड़ी लेकर मानो मैंने ही अुस पर अहसान किया हो, अैसी धन्यता अपनी आंखोंमें दिखाकर वह कहने लगा, 'ले जाअिये, आप ले जाअिये।' रणबीरने अुसके कानोंमें जोरसे कहा, 'ये मेहमान तो महात्मा गांधीके आश्रमसे आते हैं।' तब अुसकी धन्यता और मेरे संकोचका कोअी पार न रहा। लकड़ी लेकर मैं तो भागा।

अब हमारा बोलना बन्द हो गया। पैर दौड़ते जा रहे थे और मैं मनमें प्रार्थना करता जा रहा था। आकाशमें गुरु और शुक्र चंद्रकी कुछ टीका कर रहे थे।

मोटरवाले भाअी पहाड़के शिखर पर बैठकर हमारी राह देख रहे थे। जब हम मिले तब वे कहने लगे, 'आप दौड़ते गये और दौड़ते आये; और मैं अुतने समय शांतिसे अिस घाटीके भव्य विस्तारका, डूबते हुअे प्रकाशका और पलटते हुअे रंगोंका आनंद लूटता रहा। अब आप बताअिये, अधिक आनंद किसने लूटा?'

मैंने प्रतिध्वनिकी तरह पूछा: 'सचमुच, किसने लूटा?'

दिसंबर, १९३६

५२

गुच्छुपानी *

गुच्छुपानी कुदरतका अेक सुन्दर खेल है। मैं सन् १९३७ में देहरादून गया था, तब अेक दिनकी फुरसत थी। कुछ साथियोंने कहा, "चलो हम 'गुच्छुपानी' देखनेके लिअे चलें।" अन्य साथियोंने 'सहस्रधारा' देखनेका आग्रह किया। गुच्छुपानी नाम तो अच्छा लगा, लेकिन विस्मृतिके आवरणके नीचे दबे हुअे पुराने संकल्पने अपना मत सहस्रधाराके पक्षमें दिया। अिसलिअे अुस समय गुच्छुपानी देखना रह गया।

१९३९ में कन्या-गुरुकुलके अुत्सवके निमित्तसे देहरादून जाना पड़ा। अिस वक्त गुच्छुपानी मुझे बुलाये बगैर थोड़ा ही रहनेवाला था? देहरादूनसे गुच्छुपानी आरामसे जानेके लिअे दो-तीन घंटे काफी हैं। मोटर तो क्या, पैदल आने-जानेमें भी तीन साढ़े-तीन घंटेसे ज्यादा समय नहीं लगता। पहले तो, करीब डेढ़ मील तक मोटरके लिअे बनाया हुआ आस्फाल्टका चक्करदार रास्ता हमें धीरे-धीरे अूंचे-अूंचे पेड़ोंके बीचसे होकर अूपर चढ़ाता है; और सामनेके पहाड़ पर चमकती मसूरीकी गंधर्व-नगरीका दर्शन कराता है। वहांके बंगलोंकी टेढ़ी-मेढ़ी कतार जब संध्या-किरणोंसे चमकने लगती है तो अैसा आभास होता है मानो चकमकके चौरस टुकड़े बिखरे पड़े हों।

रास्ता छोड़कर हम बायीं ओरके खेतमें अुतरे, तो सामने सालके बाल-वृक्षोंकी अेक घटा दिखाई देने लगी। अिस घटाके बीचसे होकर पहाड़की अेक लड़की पत्थरोंके साथ खेलती शोखीसे और दौड़ती जाती है अुसका दर्शन हुआ। अिस समय अुसके पात्रमें पानी नहीं था। सिर्फ टेढ़े-मेढ़े लेकिन चमकीले सफेद पत्थर ही वहां बिखरे हुअे थे। आम तौर पर बिना पानीकी नदी हम पसन्द नहीं करते। लेकिन जब दोनों ओर अूंची-अूंची टेकरियां होती हैं और सारा प्रदेश निर्जन-स्वच्छ

* अर्थात् पहाड़को चीरकर बहता झरना।

होता है, तो सूखी हुअी नदी भी भीषण-रमणीय रूप धारण करती है। पानीका प्रवाह भले न हो, लेकिन हरे-हरे जंगलमें से होकर सफेद धवल पत्थरोंकी पट्टी जब पहाड़ोंके बीचसे अपना रास्ता निकालती आगे बढ़ती है, तो मनमें सहज ही खयाल आता है कि ये पत्थर स्कूलके बच्चोंकी तरह खेलमें दौड़ते-दौड़ते यकायक रुक गये हैं।

हम आगे बढ़े, फिर चढ़े, फिर अुतरे। खाअियोंसे होकर गुजरना था, अिसलिअे दूर-दूर देखनेके बजाय आसमानकी ओर देखकर ही संतोष मानना पड़ता था। बीच-बीचमें पीले और सफेद फूलोंका अुड़ाअू-पन देखकर लगता था कि यहां किसीका बंगला होगा; लेकिन दूसरे ही क्षण यकीन हो जाता था कि अैसे दृश्य देखकर ही शहरके बंगले-वालोंको अपने बंगलेके अिर्द-गिर्द फूलके पौधे लगानेका खयाल आया होगा। बंगलेकी चार दीवारें तो कुदरतकी गोदसे बिछुड़े हुअे मानवके लिअे ही हैं। यहां तो कुदरतका विशाल महल है। चार दिशाअें अुसकी चार दीवारें हैं और आसमानका कटाह अुसका गुंबद। रात होनेके पहले ही अिस गुंबदमें चांद-तारोंका चंदोवा नियमपूर्वक ताना जाता है। हवाके बिगड़ने पर चंदोवा मैला न हो अिस दृष्टिसे कभी-कभी अुसके अूपर बादलका पर्दा ढंक दिया जाता है।

फूल खुशीसे हंस रहे थे। क्या मालूम किसको देखकर हंस रहे थे! अपने आनेकी सूचना तो हमने दी नहीं थी और दी भी होती तो अपने शिकारियोंका आगमन अुनको भाता या नहीं यह भी अेक सवाल है।

बीच-बीचमें छोटी झोंपड़ियां और अिन झोंपड़ियोंको अपमानित करनेवाले चूने-मिट्टीके घर भी आते रहते थे। रास्ते और म्युनिसिपैलिटीकी सुविधासे महरूम घर वनश्रीके साथ अच्छी तरहसे हिलमिल गये थे और वहांके देहाती जीवनकी शान बढ़ाते थे। गोरोंकी फौजी नौकरीसे निवृत्त हुअे गुरखे सैनिक यहां कुदरतकी गोदमें निवृत्तिका आनंद महसूस करते हैं और अपनी वृद्ध पहाड़ी हड्डियोंको आराम देते हैं।

हम आगे बढ़े। आगे यानी सीधा आगे नहीं। पहाड़ी पग-डंडियोंके चक्रव्यूहमें तो जैसा रास्ता मिलता जाता है, वैसे आगे बढ़ना

पड़ता है। बायीं ओर जाना हो तो भी कभी-कभी दाहिनी ओरका रास्ता लेकर अुसकी खुशामद करते-करते आगे बढ़ना पड़ता है। चि० चंदनने कहा, "आसपासका सुन्दर दृश्य और आसमानके पल-पलमें बदलते दृश्य हमारा ध्यान अपनी ओर खींचते हैं, लेकिन अेक पलके लिअे भी पैरकी ओरसे असावधान हुअे तो अिस पहाड़ी नदीके पत्थरोंकी तरह लुढ़कना पड़ेगा।" अुसकी बात सच थी। बड़े-बड़े पत्थरों पर पैर रखकर चलनेमें खास मजा आता है। लेकिन वे समानान्तर थोड़े ही होते हैं? अिसलिअे कौनसा पत्थर कहां है, मनुष्यके पांवका बोझ सिर पर आने पर भी अपने स्थानसे डिगे नहीं अैसा धीरोदात्त पत्थर कौन है? — अिस तरह रास्तेका 'सर्वे' करते-करते जहां आगे बढ़ना होता है, वहां हरेक कदममें अपना चित्त लगाना पड़ता है। हाथमें पूनी लेकर सूत कातते समय जैसे तसू-तसूमें हमारा ध्यान भी कतता है, वैसे ही अिस तरहकी पहाड़ी यात्रामें कदम-कदम पर हमारा चित्त यात्राके साथ ओतप्रोत होता है और अिससे ही यात्राका आनंद गहरा होता है।

अब तो अेक लंबी-चौड़ी नदी नीचे दिखाअी देने लगी। दाहिनी ओरकी दरीसे आकर बायीं ओर दो शाखाओंमें वह विभक्त हो जाती थी। सामनेकी टेकरी परसे तारघरके खंभोंने पांच-सात तारोंकी कतारें शुरू करके अिस पार दूर तलहटीमें अिस तरह झेली थीं, मानो किसी बच्चेने अपने हाथ और अपनी आंखें यथासंभव तान कर नदीकी चौड़ाअी बतानेकी कोशिश की हो।

अुस नदीके पट पर होकर दो छोटे प्रवाह, किसी राजाके अस्त हुअे वैभवकी तरह धीमे-धीमे जा रहे थे। पानी तो बच्चोंके हास्य और रिस जैसा ही निर्मल था। अिच्छा हुअी कि थोड़ा पानी पेटमें पहुंचा दूं। लेकिन धर्मदेवजीकी रसिकता बीचमें आयी। अुन्होंने कहा, "देखिये, सामने झरना दिखाअी देता है। अेक समय था जब मैं अुसका पानी यहां आकर रोज पीता था। चलिये वहीं चलें।"

हम गये। वहां अेक छोटी पहाड़ीकी कमर पर अेक छोटा-सा ताक था। अमृत जैसे झरनेको अुसमें से निकलनेका सूझा। किसी परोपकारी

आदमीको अुस ताकके नजदीक अेक लकड़ीकी परनाली लगानेकी अिच्छा हुअी, अिसलिअे हम लोगोंको जलदान स्वीकारनेमें आसानी हुअी। पानी पीनेके पहले पश्चिमकी ओर ढलते सूर्यको अेक मनोमय अर्घ्य देना मैं न भूला।

अब तो जिस दिशामें सूर्य-किरणें फैल रही थीं, अुस ओर धीरे-धीरे नदीके पटमें हम चढ़ने लगे। आगे क्या दिखाअी देगा अुसकी निश्चित कल्पना नहीं हो सकती थी। नदीका मूल होगा? या अूपरसे पानी गिरता होगा? या सहस्रधाराकी तरह पानीमें गंधक होगा? अैसी अनेक कल्पनाअें मनमें अुठती थीं। अिस झरनेके नामके मुताबिक अुसका रहस्य भी हमारे लिअे गुह्य था। माना जाता है कि गुच्छु शब्द गुह्य परसे आया है।

सुदूर अेक कोटर दिखाअी देता था। वहां पहुंचे तो कुछ और ही निकला। वहां हमें मालूम हुआ कि गुच्छुपानीके मानी क्या हैं।

रेलवे लाअिन डालनेके लिअे जिस तरह पहाड़ तोड़कर सुरंग या टनल खोदी जाती है, अुसी तरह अेक आग्नेयी झरनेने सारी टेकरीको आरपार बींधकर अपना रास्ता निकाला था। नहीं, नहीं, यह तो गलत अुपमा दे दी। जिस तरह फौलादकी करवत लकड़ी या 'पोरबंदरी' पत्थरको काटती-काटती नीचे अुतरती जाती है, अुसी तरह अिस झरनेने अेक टेकरी सीधी काट डाली है। अिसमें किसी तरकीबसे काम नहीं लिया गया। वज्रकाय पाषाणोंको बींधकर पानी जब आरपार निकल जाता है, तो आश्चर्यचकित मन सवाल पूछ बैठता है कि समर्थ कौन है? अडिग पहाड़ और अुसके प्राचीन पत्थरोंकी अभेद्य दीवारें या पल भरका भी विचार किये बगैर अपना बलिदान देनेको तैयार चंचल और तरल नीर?

अुस विवर या गुफामें घुसनेकी कोशिश करते-करते दिल थोड़ा-सा कांप अुठे तो अुसमें कोअी आश्चर्यकी बात नहीं, अितना अद्भुत था वह दृश्य। वह मौतके मुंहमें प्रवेश करने जैसा साहस था। अंदर दाखिल होते ही मुझे तो गीताके ग्यारहवें अध्यायके श्लोक याद आने लगे। फिर भी पहाड़ और जलकी शक्तिके द्वारा

अपना सामर्थ्य व्यक्त करनेवाली प्रकृतिमाताके स्वभाव पर विश्वास रखकर हम लोग अंदर दाखिल हुए।

अुस टेकरीके कुदरती वज्रलेपमें चुने हुअे काले, पीले और लाल गोल पत्थर अैसे दिखाअी देते थे मानो सीमेन्टमें चुने गये हों। और जलका सशक्त प्रवाह पैरके नीचे छोटे-छोटे पत्थरों परसे अपनी विजय-गाथा गाता हुआ दौड़ता चला जा रहा था। सिर अूंचा करके देखा तो पानी द्वारा टेकरीको काटकर बनाअी हुअी खासी बीस-तीस फुटकी दो दीवारें अपने लाखों बरसोंके अितिहासकी गवाही दे रही थीं। मेरे बजाय कोअी भूस्तरशास्त्री यहां आया होता तो पहले वह यह देखता कि यह पत्थर ग्रेनाअीटके हैं या सैंडस्टोनके? फिर दीवारकी अूंचाअी क्या है, पानीका ढाल कितना है, हर दसवें साल पानी कितना गहरा जाता है, अिन सबका हिसाब लगाकर वह अिस कुदरती सुरंगकी अुम्र निश्चित करके कहता, "अिस पहाड़ी प्रवाहका खेल पचास हजार या दो लाख सालोंसे चला आ रहा है।" पासकी दीवारमें फंसे हुअे रंग-बिरंगे पत्थरोंको देखकर वह अुनकी अुम्र पूछता और अुनको जकड़कर बैठी हुअी मिट्टीको वज्रलेप सीमेन्ट होते कितने साल बीते होंगे अुसका हिसाब लगाकर टेकरीकी अुम्र भी (हमारे लिअे) निश्चित कर देता। और यदि अुसको वहां हुअे भूकंपका अितिहास किसीसे मालूम हो जाता तो अपने गणितमें अुसके मुताबिक परिवर्तन करके अुसने नये निर्णय भी दिये होते। अिस वज्रलेप सीमेन्टके बीचमें चमड़े या बारीक जाल जैसी डिज़ाअिन कैसे बनी और अुसमें से पानीके बारीक फुहारे क्यों निकलते हैं, यह भी बताया होता। सचमुच नक्षत्र-विद्याके समान यह भूस्तर-विद्या भी अद्भुत-रम्य है। मनोविज्ञानसे अुसकी खोज कम अटपटी नहीं है। ये तीन विद्यायें मानव-बुद्धि-बलका अद्भुत-रम्य विलास हैं।

हम अुस गुफामें दूर तक चले गये। अेक जगह अूंचे भी चढ़ना पड़ा। पासमें ही पानीका छोटा-सा प्रपात गिर रहा था। थोड़ा आगे बढ़े तो पत्थर और चूनेसे बनी हुअी दो दीवारें देखकर कोशिश करने पर भी मैं अपना हंसना रोक न सका। मानवने सोचा कि पहाड़का हृदय बींधकर आरपार निकलनेवाले पानीको हम दो दीवारोंसे रोक सकेंगे!

मेरी भावनाको समझते ही वह विजयी प्रपात मुझसे कहने लगा, "और मैं भी भुसी कारण हंसता हूं।" पहाड़का चीरा हुआ हृदय भग्न होने पर भी भव्य दिखायी देता था। लेकिन मानवकी टूटी हुओ दीवारें अुसके मनोरथकी तरह तिरस्कार और हास्यके भाव पैदा करती थीं। किसी अुद्दाम आदमीको तमाचा पड़े और अुसका मुंह मुरझाया हुआ दिखाओ दे, अिस तरह अिन दीवारोंको अधिक समय तक देखनेकी अिच्छा भी नहीं होती थी। लंबे अर्से तक किसीकी फजीहतके साक्षी भी हम कैसे रह सकते हैं?

अंदर आगे बढ़नेके साथ अुस विवरकी शोभा बढ़ती ही जाती थी। अितनेमें अुन दो दीवारोंके बीच अेक बड़ा पत्थर गिरता गिरता अटका हुआ दिखाओ दिया। अूपरसे वह कूदा होगा। और पासकी स्नेहमयी दीवारोंने अुससे कहा होगा, "अरे भाओ ठहर जा, पानीके खेलमें खलल न पहुंचा।" बेचारा क्या करे! लटका हुआ वहीं खड़ा है। अुलटे सिर लटकते हुअे पानीका खेल मजबूरन देखना अुसकी किस्मतमें लिखा था। अुस पर तरस खाते हुअे हम आगे बढ़े तो अेक दूसरा पत्थर अुसी तरह लटकता हुआ और अपनी पीठ पर अपनेसे तीन गुने बड़े पत्थरका बोझ लादे रुका हुआ दिखाओ दिया। हम अुसके नीचेसे भी गुजरे। अगर पासकी दीवारें जरा (बंसकर) चौड़ी हो जातीं, तो हमारी हड्डियां चकनाचूर हो जातीं और दो-चार क्षणके लिअे पानीका रंग लाल-लाल हो जाता। फिर कुदरत कहती कि मुझे कुछ भी मालूम नहीं है। दो-चार मानव यहां आये होंगे और अुन्होंने अपनी निरर्थक जिज्ञासाकी कीमत चुकाओ होगी। यह बात ध्यानमें रखनेके योग्य थोड़ी ही है! अुनके जैसे दूसरे मानव जब कभी यहां आ पहुंचेंगे तब पत्थरोंमें दबे हुअे कुछ अवशेष अुनको मिलेंगे। और वे सच्ची-झूठी कल्पनाओं पर सवार होकर अेकाध प्रकरण खड़ा करेंगे। बस और क्या?

चलते-चलते हम थके तो नहीं, लेकिन ठंडे पानीमें नुकीले पत्थरों पर नंगे पैर चलते-चलते पैर दुखने लगे अिसका अिनकार नहीं हो सकता। लेकिन अुस गुफा-प्रवेशकी अद्भुतताका अनुभव करते करते

हम अघा गये। अंदर आगे बढ़ते-बढ़ते भला कितना बढ़ सकते थे? आखिर आगे बढ़नेका हौसला मंद हो गया। लेकिन मन कहने लगा, हारकर वापस कैसे जायं? यहां तक आये हैं तो आरपार जाना ही चाहिये। जो दूसरा सिरा न देखे वह मानवी मन नहीं है।

आगे बढ़ते ही पाट थोड़ा चौड़ा हुआ और पानीकी भीषणता कम हो गयी। अिसलिअे सयाने बनकर हमने मान लिया कि अब आगेका दृश्य नीरस ही होगा। वहां न गये तो चलेगा। हम वापस लौटे। फिर वही दृश्य, वही डर! वही जिज्ञासा और वही भावनायें!!

अुस गुफासे बाहर निकलते निकलते पूरे सोलह मिनट लगे!!! मैंने अपनी आदतके मुताबिक अिस यात्राके स्मारकके तौर पर दो सुन्दर मुलायम पत्थर ले लिये। और अंधेरेमें तेज कदम बढ़ाते-बढ़ाते घर लौटे। मनमें अेक ही सवाल अुठ रहा था: कौन समर्थ है? ये वज्रकाय पुराने पहाड़ या यह नम्र किन्तु आग्रही जीवनधर्मी सत्याग्रही नीर?

५३

नागिनी नदी तीस्ता

जब मैं कुछ साल पहले दार्जिलिंग और कालिमपोंगकी ओर गया था, तब मैंने तीस्ता नदीका प्रथम दर्शन किया था। प्रथम दर्शनसे ही तीस्ताके प्रति असाधारण प्रेम बंध गया। अगर तीस्ताके बारेमें कुछ पौराणिक कथा या माहात्म्य मैं जानता होता तो अुसके प्रति मनमें भक्ति पैदा हो जाती। लेकिन यह तूफानी नदी हिमालयके पहाड़ोंके बीचसे अपना रास्ता निकालती, चट्टानोंसे टकराती, प्रवाहके बीच पड़े हुअे छोटे-बड़े पत्थरोंका मंथन करती और तरह-तरहकी गर्जना करती हुअी जब दौड़ती आती है, तब अुसका अुत्साह, अुसका दृढ़ निश्चय और अुसका अमर्ष देखकर अुसके प्रति प्रेम और आदर बंध जाते हैं, भक्ति नहीं।

जब तीस्ताका प्रथम दर्शन हुआ, तब मनमें संकल्प उठा कि अिस नदीका पहाड़ी जीवन कुछ तो देखना ही चाहिये। जोरोंसे बहनेवाली पहाड़ी नदीके अूपर जो बेंतके या रस्सीके खतरनाक पुल बांधे जाते हैं, अुन पर खड़े होकर प्रवाहकी ओर देखनेमें अेक विचित्र अनुभव होता है। अैसा लगता है कि यह पुल नदीके प्रवाहका मुकाबला करते हुअे अूपरकी ओर जोरोंसे दौड़ रहा है। जितने ज्यादा समय तक हम ध्यानसे देखते हैं, अुतनी ही यह प्रतीप-गामी भ्रांति बढ़ती जाती है।

अेक दिन मैंने मनमें कहा कि अिसे भ्रांति क्यों मानें? यह अेक तरहकी दीक्षा है। अिस अनुभवके द्वारा निसर्ग हमें कहता है, 'जितनी बेपरवाहीसे यह पानी पहाड़से आकर मैदानकी ओर दौड़ रहा है और सागरको ढूंढ़ रहा है, अुतनी ही बेपरवाहीसे और अदम्य कुतूहलसे अिस प्रवाहके किनारे-किनारे पूरा खतरा मोल लेकर अूपरकी ओर चले जाओ और अिस नदीका अुद्गम-स्थान ढूंढ़ लो।'

जब पहाड़की कोअी नदी सरोवरसे निकलकर आती है, तब अुसे सरयू या सरो-जा कहते हैं। जब वह पर्वत-शिखरोंकी गोदमें अिकट्ठी हुअी हिमराशिसे निकलती है, तब अुसे हैमवती कहना चाहिये। यों तो पर्वतसे निकलनेवाली सब नदियोंका सामान्य नाम पार्वती है ही। हिमालय-पिताकी अिन सब लड़कियोंके नाम अगर अेकत्र किये जायं तो अुनकी संख्या कअी सहस्र हो जायगी।

तीस्ताका असली नाम त्रिस्रोता है। अुत्तर-पूर्व अफ्रीकामें नील नदीके दो अलग-अलग अुद्गम हैं और दोनों स्रोत दूर दूरके दो सरोवरोंसे ही निकलते हैं — सफेदरंगी नील और नीलरंगी नील। दोनोंके संगमसे मिश्र देशकी माता बड़ी नील बनती है। अुसी तरह तीस्ता भी तीन स्रोतोंके संगमसे बनी हुअी है। अेक स्रोतका नाम है 'लाचुंग चू' (चू यानी नदी)। यह नदी 'कान् चेन् ङोंगा' शिखरके दक्षिणसे निकलती है। दूसरे स्रोतका नाम है 'लाचेन् चू'। यह नदी पाव हुन् री शिखरके अुत्तरसे निकलकर तथा चो ल्हामो और गोरडामा दो सरोवरोंका जल लेकर रास्ता निकालती-निकालती प्रथम पश्चिमकी ओर बहती है, फिर धीमे-धीमे दक्षिणकी ओर मुड़ती है।

अिन दोनोंका संगम जहां होता है, वहां चुंग थांगका बौद्ध-मंदिर है। लाचून् चू और लाचेन् चू अिन दो नदियोंके संगमसे जो नदी बनती है, अुसे पंचहिमाकर (कान् चेन् ज़ौंगा), सीम् व्हो और सिनो लो चू अिन तीन गगनभेदी शिखरोंकी गोदमें जो हिमराशियां हैं अुनकः पानी लानेवाली तालूंग चू मिलती है, तब अिन तीन स्रोतोंसे तीस्ता बनती है। और फिर वह सीधी दक्षिणकी ओर बहने लगती है। कुछ आगे जाने पर अुसे दाहिनी और बाअीं ओरसे छोटी-मोटी अनेक नदियां मिलती हैं। अिनमें महत्त्वकी हैं दिक् चू, रोरो चू, रोंगनी चू, रंगपो चू, और बड़ी रंगीत चू।

जहां-जहां दो नदियोंके संगम होते हैं, वहां-वहां अेक बौद्ध मंदिर पाया ही जाता है, जिसे यहांके लोग गोम्पा कहते हैं।

जब मैंने तीस्ताके आकर्षणसे सबसे पहले अिन पहाड़ोंमें प्रवेश किया था, तब मैंने रंगीत नदीका संगम और रंगपो नदीका संगम देखा था। संगमके दोनों स्रोतोंके रंग यहां अलग-अलग होते हैं। अबकी बार अिन दो संगमोंको तो आंख भरके देखा ही, लेकिन सिक्कीमकी राजधानी गंगतोकके पूर्वकी नदी रोरो चू और रोंगनी नदीका संगम भी मैंने सिंगटंगमें देखा। संगम यानी जीवित काव्य।

महाविजय पानेके लिअे अनेक राजाओंकी सेनाअें जैसे अेकत्र होती हैं और अुनकी संकल्प-शक्ति बढ़ती है, वैसे ही अिन सब नदियोंका जल-भार पाकर तीस्ता नदी जलवती, वेगवती और संकल्पशालिनी बनती है और पहाड़ोंसे लड़ते-लड़ते मैदानमें आ पहुंचती है। यहां वह शिलीगुड़ी तक न जाकर जलपायगुड़ीके रास्ते पाकिस्तानमें प्रवेश करती है और रंगपुरका दर्शन करते हुअे आखिरमें ब्रह्मपुत्रसे जा मिलती है।

हमारे पुरखोंने नदियोंके दो विभाग बनाये हैं। जब कोअी नदी अनेक नदियोंका पानी लेकर पुष्ट होती है, तब अुसे युक्तवेणी कहते हैं। सफेद गंगा, श्याम यमुना और 'मध्ये गुप्ता' सरस्वती मिलकर प्रयागराजके पास त्रिवेणी बनती है। पंजाबमें सिंधु सात नदियोंका पानी पाकर युक्तवेणी बनती है। बादमें जाकर जब वह नदी स्वयं अनेक विभागोंमें बंट जाती है और अनेक मुखोंसे समुद्रमें मिलती है,

तब अुसे मुक्तवेणी कहते हैं। नदियोंके जीवनके हम दूसरी तरहसे भी दो विभाग बना सकते हैं। पहाड़ोंका बद्ध जीवन और खुले मैदानका मुक्त जीवन। गंगानदीका पार्वत जीवन हरद्वारके पास खतम होता है। फिर तो जहां जमीन मजबूत है, वहां वह अेक धारा बना लेती है। लेकिन जहां भूमि बंगालके जैसी बिना पत्थरवाली और समतल होती है, वहां अुसकी अनेक धाराअें भी बनती हैं। हम कह सकते हैं कि नदीका पार्वत जीवन कुमारीके जीवनके जैसा अल्हड़ होता है। मैदानमें जाते ही अनेक खेतोंको स्तन्यपान कराते-कराते वह प्रजाओंकी माता बनती है। दार्जिलिंग और कालिंगपांगके पहाड़ोंसे निकलनेके बाद तीस्ताको सिर्फ अेक-दो बंधन सहन करने पड़ते है और वे हैं—असमकी ओर जाने-वाली रेलोंके पुलोंके। अेक है भारतवर्षका नया बनाया हुआ असम-लिंकका पुल और दूसरा है हमारा ही बनाया हुआ लेकिन पाकिस्तानके हाथमें गया हुआ रंगपुरके नजदीकका दूसरा पुल।

तीस्ता नदीका मैदानी जीवन कुछ विचित्र-सा है। तिब्बतकी बहुपति-प्रथाका शायद अुसे स्मरण है। अेक समय था जब तीस्ता गंगा नदीसे मिलती थी। अिन सौ-दो-सौ बरसके अन्दर अुसने अनेक पराक्रम किये हैं और वहांके लोगोंसे 'पागला' नाम भी प्राप्त किया है। आज भी अुसका अेक प्रवाह छोटी तीस्ताके नामसे पहचाना जाता है, दूसरा प्रवाह है बूढ़ी तीस्ता और तीसरा है मरा तीस्ता। अुसने अपना जलभार करतोया नदीको देकर देखा, घाघातको भी दिया। मैदानमें तो वह युक्तवेणी भी बनती है और मुक्तवेणी भी। तीस्ताके चंचल स्वभावको पहचानना और अुसका अनुनय करना मनुष्यके लिअे आसान नहीं है। वह अितना स्थलान्तर करती है कि अुसके अनेक प्रवाहोंको स्थायी नाम देना और अुनको याद करना भी मुश्किल है। कहते हैं कि 'कालिकापुराण' में तीस्ताका जिक्र है। वहां कथा अैसी है कि देवी पार्वती किसी असुरसे लड़ती थीं। वह मत्त असुर कहता था कि मैं शिवजीकी अुपासना करूंगा, लेकिन पार्वतीकी नहीं। पार्वतीका और अुस असुरका घोर युद्ध हुआ। लड़ते-लड़ते असुरको बड़ी प्यास लगी। अुसने शिवजीसे प्रार्थना की कि 'प्रभु, मेरी प्यास बुझा

दो!' और कैसा आश्चर्य! प्रार्थना शिवजीके चरणों तक पहुंचते ही पार्वतीके स्तनोंसे स्तन्यधारा बहने लगी। वही है हमारी तीस्ता। कहते हैं असुरेश्वरकी तृष्णा बुझानेका काम इस नदीने किया, इसलिअे इसका नाम हुआ तृष्णा और तृष्णाका ही प्राकृत रूप है तीस्ता। हमारे ध्यानमें नहीं आता कि नदीको कोअी तृष्णा कैसे कह सकता है। 'तृष्णा' का 'तण्हा' हो सकता है। लेकिन णकारका लोप ही हो जाना ठीक नहीं लगता है।

कुछ भी हो, तीस्ताका जीवन-क्रम शुरूसे आखिर तक आकर्षक और संस्मरणीय है। पहाड़ोंमें जहां ये नदियां बहती हैं, वहां गरमी बहुत रहती है। इसलिअे मलेरियाके जन्तु, दंश-मशक भी बहुत होते हैं। शायद यही कारण होगा कि तीस्ताके नाम कोअी लोकगीत नहीं पाये जाते हैं।

लेकिन अब तो हम लोगोंने विज्ञान-युगमें प्रवेश किया है। मलेरियाके मच्छरोंका बिलकुल हो सकता है। जहां नदी जोरोंसे बहती है, वहां इस पर यंत्रका जीन कसकर इससे काफी काम लिया जा सकता है। तीस्ताका उद्गम शायद पांच-सात हजार फुटकी ऊंचाअी पर है। जब वह पहाड़ी मुल्क छोड़ती है, तब इसकी ऊंचाअी समुद्रकी सतहसे सिर्फ सात सौ फुटकी होती है। देखते-देखते जो नदी छः हजार फुटकी ऊंचाअी खोती है, इसके पाससे चाहे-सो काम लिये जा सकते हैं। आरेसे लकड़ी चीरनेका और आटा पीसनेका काम तो ये नदियां करती ही हैं। अब इनसे बिजली पैदा करनेका बड़ा काम लिया जायगा। फिर तो सारे सिक्कीम राज्यका रूप ही बदल जायगा।

हमारे धर्मप्राण पूर्वजोंकी यंत्रबुद्धि भी धर्मकार्यमें ही लगती थी। अेक जगह पर हमने देखा कि पहाड़के स्रोतके सामने अेक चक्र रखकर इसके जरिये 'ओम् मणिपद्मे हुं' के जापका लकड़ीका बल्ला या जाठ घुमाया जाता है। और इस तरह जो यांत्रिक जाप होता है इसका पुण्य यंत्रके मालिकको मिलता है।

अैसे पुण्यका बड़ा हिस्सा नदीको ही मिलना चाहिये।

७-१०-'५६

५४

परशुराम कुंड

भारतकी करीब करीब अुत्तर-पूर्व सीमाके पास लोहित-ब्रह्मपुत्रके किनारे ब्रह्मकुंड या परशुराम कुंड नामका अेक तीर्थस्थान है। तिब्बत, चीन और ब्रह्मदेशकी सरहदके पास, वन्य जातियोंके बीच, भारतीय संस्कृतिका यह प्राचीन शिविर था। पश्चिम समुद्रके किनारे सह्याद्रिकी तराअीमें जिसने ब्राह्मणोंको बसाया अैसे भार्गव परशुरामने सारे भारतकी यात्रा करते करते अुत्तर-पूर्व सीमा तक पहुंचकर ब्रह्मकुंडके पास शांति पायी। यह है अिस स्थानका माहात्म्य।

जबसे मैं असम प्रान्तमें जाने लगा तबसे परशुराम कुंड जाकर स्नान-पान-दानका सुख पानेकी मेरी अिच्छा थी। राजनैतिक, भौगोलिक और सामयिक कठिनाअियोंके कारण आज तक वहां न जा सका था। लेकिन जब सुना कि महात्माजीकी चिता-भस्मका विसर्जन अन्यान्य तीर्थोंके जैसा परशुराम कुंडमें भी हुआ है, तब वहां जानेकी शुत्कंठा बढ़ी। अिस साल सुना कि असम प्रान्तके कअी लोकसेवक १२ फरवरीको सर्वोदय मेलेके निमित्त वहां जानेवाले हैं, तब तो मनका निश्चय ही हो गया कि अिस मौकेको छोड़ना नहीं चाहिये। पलाश-बाड़ीके पास कअी बरसोंसे चलनेवाले सौभाग्य आश्रमके श्री भुवनचन्द्र दासको मुझे बुलानेमें कुछ भी तकलीफ न पड़ी।

बार बार भू-भ्रमण करके भूगोल-विद्याको बढ़ानेवाले हमारे जो प्रधान भूगोलविद् पुराणोंमें पाये जाते हैं, अुनमें नारद, व्यास, दत्तात्रेय, परशुराम और बलरामके नाम सब जानते हैं। अिनमें भी व्यास और परशुराम अपनी-अपनी विभूतिकी विशेषताके कारण चिरजीवी हो गये हैं। भारतीय संस्कृतिके संगठन और प्रचारका कार्य महर्षि व्यासने जैसा किया वैसा और किसीने नहीं किया होगा। अिसीलिअे तो अुनको वेद-व्यास (organiser) का अुपनाम मिला। अुनका असली नाम था कृष्ण द्वैपायन।

और परशुराम थे अगस्त्य ऋषिके जैसे संस्कृति-विस्तारक (pioneer of culture)। प्राचीन कालमें मनुष्य-जातिको जीनेके लिये दारुण युद्ध करना पड़ता था—जंगलोंके साथ और जंगलोंके पशुओंके साथ। जंगलोंने आक्रमण करके मानव-संस्कृतिको कई बार हजम किया है। जिसका सबूत आज भी कम्बोडियामें आन्कोर वाट और आन्कोर थॉममें मिलता है। ऊँचे-ऊँचे राजप्रासाद और बड़े बड़े मंदिरोंके शिखरों तक मिट्टीके ढेर लग गये; और जंगलके महा-वृक्षोंने अपनी पताका उस पर लगा दी। हमारे यहाँ भी असंख्य छोटे-बड़े मंदिर अश्वत्थ और पीपलकी जड़ोंके जालमें फंसकर टेढ़े-मेढ़े हो गये पाये जाते हैं।

ऐसे युगमें परशु (कुल्हाड़ी) लेकर मानव-संस्कृतिका रक्षण और विस्तार करनेका काम किया था भगवान परशुरामने। पुराणकी कथा कहती है कि जन्मके साथ परशुरामके हाथमें परशु था। धनी मॉ-बापके घर जिसका जन्म हुआ है उसके बारेमें अंग्रेजीमें कहते हैं कि 'He is born with a silver spoon in his mouth'—चांदीका चम्मच मुंहमें लेकर ही यह लड़का जन्मा है। ऐसी ही बात परशुरामकी थी।

परशुराम जातिका ब्राह्मण था, लेकिन उसके सब संस्कार क्षत्रियके थे। जंगलोंका नाश करनेके लिये कुल्हाड़ी चलाते चलाते उसने सम्राट सहस्रार्जुनके हजार हाथों पर भी कुल्हाड़ी चलायी। और क्षत्रियोंके आतंकसे चिढ़कर उसने उनके विरुद्ध २१ बार युद्ध किया। क्षात्र पद्धतिसे क्षत्रियोंका नाश करनेकी कोशिश जिस क्षत्रिय ब्राह्मणने २१ बार की। उसीका अनुभव उसके अनुगामी ब्राह्मण क्षत्रिय गौतम बुद्धने एक गाथामें अंकित किया है:

नहि वेरेन वेरानि संमंतीध कुदाचनं ।

जिस परशुरामके क्रोधी पिताने अपने अन्य पुत्रोंको आज्ञा दी कि 'तुम्हारी माता कुलटा है, उसे मार डालो।' उन्होंने धिक्कार किया। जमदग्निकी क्रोधाग्नि और भी बढ़ गयी। उसने परशुरामको

ओर मुड़कर कहा, 'बेटा, तुम मेरा काम करो। अिस रेणुकाको मार डालो।' कुल्हाड़ी चलानेकी आदतवाले आज्ञाधारी पुत्रको सोचना नहीं पड़ा। अुसने माताका सिर तुरन्त अुड़ा दिया। पिता प्रसन्न हुअे और कहा, 'चाहे जितने वर मांग। तूने मेरा प्रिय काम किया है।' पुत्रको अब मौका मिल गया। पिताकी सारी तपस्या चार वरमें अुसने निचो ली। 'मेरी माता फिरसे जीवित हो। मेरे भाअियोंको आपने शाप देकर जड़ पाषाण बनाया है वे भी जीवित हों, अपनी हत्या और सजाकी बात वे भूल जायं। मैं मातृहत्याके पापसे मुक्त हो जाअूं, और चिरजीवी बनूं।' पिताने कहा, 'और तो सब दे दूंगा, लेकिन मातृ-हत्याका पाप धो डालनेकी शक्ति मेरी तपस्यामें भी नहीं है।' मायूस होकर परशुराम वहांसे चला गया। आगे जाकर परशुधर रामको धनुर्धर रामने परास्त किया, क्योंकि युद्धशास्त्र बढ़ गया था। परशुकी अपेक्षा धनुष-बाणकी शक्ति अधिक थी; और दूर तक पहुंचती थी। परशुरामने भारत-भ्रमणमें सारी आयु बितायी। अनेक तीर्थोंका और संतोंका दर्शन किया। चित्तवृत्तिमें अुपशमका अुदय हुआ और लोहित-ब्रह्मपुत्रके किनारे ब्रह्म-कुंडमें अुसके हाथकी कुल्हाड़ी छूट गयी। यही शस्त्र-संन्यासके अिस तीर्थस्थानका माहात्म्य है। परशु-रामकी जीवन-कथामें पश्चिम किनारेसे लेकर अुत्तर-पूर्व सिरे तकका भारतका, किसी जमानेका, सारा अितिहास आ जाता है। परशुराम कुंडकी यात्रा करके कभी साधु-संतोंने यहांकी वन्य जातियोंको भारतकी संस्कृतिके संस्कार दिये हैं। अिस प्रदेशका लोक-मानस कहता है कि रुक्मिणी हमारे यहांकी ही राजकन्या थी, अिसलिअे श्रीकृष्ण हमारे दामाद होते हैं।

जिस तरह प्राचीन कालके सांस्कृतिक अग्रदूत यहां आये, वैसे 'अवेर' का अुपदेश करनेवाले बुद्ध भगवानके शिष्य भी यहां आये होंगे। बौद्ध भिक्षु हिमालय लांघकर तिब्बत भी गये थे, और जहाजके रास्ते चीन भी गये थे। अुसके बाद असम प्रान्तमें अहिंसा धर्मकी नयी बाढ़ आयी श्री शंकरदेवके जमानेमें। श्री शंकरदेव असली शाक्त थे। अुस पंथके दुराचारसे अूबकर वे वैष्णव हुअे और अुन्होंने सारे

असम प्रान्तमें धर्मोपदेश, नाट्य, संगीत, चित्रकारी आदि द्वारा समाज-शुद्धिका और संस्कृति-विस्तारका काम दीर्घकाल तक किया। अिसी तरह चैतन्य महाप्रभुके वैष्णव धर्मका प्रचार मणिपुरकी तरफ हुआ। शंकरदेवका प्रभाव असम प्रान्तके पर्वतीय लोगोंमें पड़ना अभी बाकी है।

अहिंसा-धर्मकी सच्ची और सबसे बड़ी बाढ़ महात्मा गांधीजीके सत्याग्रह-स्वराज्य-आन्दोलनसे असम प्रान्तमें पहुंची। अुसका अधिकसे अधिक असर पड़ना चाहिये खासी, नागा, मिशमी, अबोर, डफला आदि पहाड़ी जातियों पर। अिसके लिअे शिलांग, कोहीमा, मणिपुर, सादिया आदि प्रधान केन्द्रोंके अिर्दगिर्द अनेक आश्रमोंकी स्थापना करना जरूरी है।

अिनमें सादिया अेक अैसा स्थान है जिसके आसपास ब्रह्मपुत्रको मिलनेवाली अनेक नदियों और अुपनदियोंका पंखा बनता है। नौआ डिहुंग, टेंगापानी, लोहित, डियाहू, देवपाणी, कुण्डिल, डिबंग, सेसेरी, डिहुंग, लाली आदि अनेक नदियां अपना पानी दे देकर ब्रह्मपुत्रको जलपुष्ट बनाती हैं। सादियासे अनेक रास्ते अनेक दिशामें जाकर अनेक वन्य जातियोंकी सेवा करते हैं। खुद सादियाके अिर्दगिर्द जो चुलेकाटा मिशमी लोग रहते हैं वे स्वभावके सौम्य हैं। अिसीलिअे शायद अुनके अंदर सभ्य समाजके कअी दुर्गुण और रोग फैल गये हैं। मूल ब्रह्मपुत्रका अुत्तरी नाम दिहुंग है। अुसके भी अूपर जब वह मानस सरोवरसे निकलकर हिमालयके समानांतर पूरबकी ओर बहती आती है, तब अुसे सानपो कहते हैं।

अिन सब नदियोंके किनारे हमारे जो पहाड़ी भाअी रहते हैं अुनको अपनाना हमारा परम कर्तव्य है। यह काम सरकारके जरिये पूरी तरह नहीं होगा। अुसके लिअे परशुराम और बुद्धके जैसे संस्कृति-धुरीण महापुरुषोंकी आवश्यकता है। अर्थात् अुनके पास नयी दृष्टि, नयी शक्ति और नया आदर्श होना चाहिये।

यह सारा काम कौन करेगा? भारतके नवयुवकोंका और युवतियोंका यह काम है। अीसाअी मिशनरियोंने अपनी दृष्टिसे भला-बुरा

बहुत कुछ काम किया है। अुनकी नीयत हमेशा साफ रही है, अैसा भी हम नहीं कह सकते। अैसी हालतमें देशके नेताओंको चाहिये कि वे दीर्घ दृष्टिसे अिन सब स्थानोंका निरीक्षण करें और नवयुवकोंको मानवताके नामसे शुद्ध संस्कृतिकी प्रेरणा देनेके लिअे अिस प्रदेशमें भेजें।

वर्धा, २१-३-'५०

५५

दो मद्रासी बहनें

अिन दो बहनोंके प्रति मेरी असीम सहानुभूति है। मद्रास शहरने जैसा अिनका महत्त्व बढ़ाया है, वैसी ही अिनकी अुपेक्षा भी की है।

यों तो मद्रास शहरका महत्त्व भी कृत्रिम है। न अुसके पास कोअी सुन्दर पर्वत है, न कोअी महानदीकी खाड़ी है। तिजारतकी दृष्टिसे या फौजी दृष्टिसे मद्रासका कोअी असली महत्त्व नहीं है। लेकिन अितिहास-क्रमके कारण अंग्रेजोंको यही स्थान पसन्द करना पड़ा। यहांके स्थानिक लोगोंका प्रेम अिस शहरके प्रति कम था अैसा तो कोअी नहीं कह सकते। जिन भारतीयोंने या कीवर आदिवासियोंने अिस शहरका नामकरण 'चन्नपट्टनम्' यानी सुवर्णनगरी किया होगा, क्या अुन्होंने अिस शहरके भाग्यके बारेमें पहलेसे सोचा होगा?

कुछ भी हो, जबसे अंग्रेजोंने यहां अपनी कोठी डाली तबसे अिस शहरका भाग्य और वैभव बढ़ता ही गया है और अैसे शहरकी सेवा करनेवाली अिन दो बहनोंका भाग्य भी बदलता गया है। अेकका नाम है 'कूवम्' और दूसरीका नाम है 'अड्यार'। ये दोनों नदियां पूर्वगामी होकर बंगालके अुपसागरसे यानी पूर्व-समुद्रसे मिलती हैं।

मद्रास और अुसके अिर्दगिर्दकी भूमि बिलकुल समतल है। यहां छोटे-बड़े अनेक तालाब व सरोवर हैं। लेकिन अब अुनकी कोअी शोभा नहीं रही।

तर्क-बुद्धि कहती है कि जमीन अगर समतल हो और पथरीली न हो, तो नदीको अपना पात्र सीधा खोदनेमें या चलानेमें कोअी बाधा नहीं होनी चाहिये। लेकिन नदियोंका अैसा नहीं है। कुछ हद तक नदी अेक ओर झुकेगी, वहांसे थककर मोड़ लेगी और दूसरी ओर पहुंच जायगी। फिर आगे बढ़ते हुअे दिशा बदल देगी। और अिस तरह नागमोड़ी वक्रगतिसे आगे बढ़ती जायगी।

पहाड़ी नदियोंकी तो लाचारी होती है। पर्वत और टेकरियोंके बीच जहांसे मार्ग मिले, अुसी मार्गसे जानेके लिअे वे बाध्य होती हैं। तीस्ता कहेगी, "मैं स्वभावसे नागिनी नहीं हूं। वक्रगति मेरा स्वभाव नहीं, किन्तु वह मेरा भाग्य है।" काश्मीरमें बहनेवाली वितस्ता या झेलम अपना अैसा बचाव नहीं कर सकेगी। करीब करीब चक्राकार घूमते जाना और आगे बढ़नेका तनिक भी अुत्साह नहीं रखना, यह है काश्मीर-तल-वाहिनी वितस्ताका स्वभाव। बिहारमें बहनेवाली असंख्य नदियोंके बारेमें भी यही कहा जा सकता है। किसी समय मुझे बिहार प्रांतमें अनेक जगह हवाअी जहाजसे मुसाफिरी करनी पड़ी थी। पता नहीं कितनी बार बिहारके आकाशको मैंने अनेक दिशाओंमें बींध दिया होगा। हवाअी-जहाजकी दूर दूरकी लम्बी मुसाफिरीमें भी काफी अूंचाअीसे मैंने बंगाल और बिहारकी नदियां देखी हैं और अुनका वक्र-मार्ग-नैपुण्य देखकर अुनका आदर किया है।

भारत-भूमिका अेक बड़ा मानचित्र बनाकर अुस पर अगर केवल नदियोंके मार्गकी रेखाअें खींची जायें तो वह वक्र-रेखाओंका महोत्सव बड़ा ही चित्ताकर्षक होगा। नदीको दाहिनी ओर और बायीं ओर मुड़े बिना संतोष ही नहीं होता। अेक ओरके अूंचे किनारेको घिसते जाना और दूसरी ओरके निम्न किनारेको हर साल डुबोकर कुछ समयके लिअे वहां जल-प्रलयका दृश्य खड़ा करना यह नदियोंकी वार्षिक क्रीड़ा ही है।

लेकिन जब नदियां बड़े-बड़े शहरोंकी बस्तीमें फंस जाती हैं, अथवा दयालु होकर अपने दोनों ओर मनुष्यको बसने देती हैं, तब अुनका यह स्वच्छंद विहार सदाके लिअे बंद हो जाता है और तबसे अुनका जीवन तांगा खींचनेवाले घोड़ेके जैसा हो जाता है। अैसी हालतमें नदियां अगर अपना मोड़ कायम रखें तो भी अुनकी शोभा तो नष्ट हो ही जाती है।

लंदनमें टेम्स नदी, पेरिसमें सीन नदी और लिस्बनमें टेगस नदी अिन तीनोंकी बंधन-दुर्दशा देखकर मेरा हृदय कअी बार रोया है। और जब मानिनी और स्वच्छंद विहारिणी नील-नदी लाचार होकर अल्काहेरा (कायरो) शहरके बीचसे जाती है, तब तो दुःखके साथ क्रोध भी जाग्रत होता है। और नदीका अपमान करनेवाली मानव-जातिका शासन कैसे किया जाय अैसे विचार भी मनमें अुठते हैं।

अड्यार और कूवम् अिन दोमें से कूवम्को बंधनका दुःख ज्यादा सहन करना पड़ा है, क्योंकि वह शहरके बीचसे घूमती है। अड्यार शहरके दक्षिण किनारे पर होनेसे अुसे कुछ अवकाश मिला है।

लेकिन — यहां पर भी लेकिन आ गया है — जहां मनुष्यने अपमान नहीं किया, वहां अिस सरिताका सरित्पतिने अपमान किया है। बिचारी अुत्साहके साथ समुद्रको मिलने जाती है और बेकदर समुद्र अूंची-अूंची लहरोंके साथ रेत ला-लाकर अुसके सामने अेक बहुत बड़ा बांध या सेतु खड़ा कर देता है।

देवी वासंतीका ब्रह्मविद्या-आश्रम जब सबसे पहले मैं देखने गया था, तब सागर-सरिता-संगमकी भव्यता देखनेके हेतु नदीके मुख तक पहुंच गया था। और क्या देखता हूं — खंडिता अड्यार अपना पानी ला-लाकर मार्ग-प्रतीक्षा कर रही है और समुद्र अपने खड़े किये हुअे बांधके अूंस और लहरोंका विकट हास्य हंस रहा है। समुद्रके प्रति मनमें क्रोध तो आया ही। क्या अिसमें तनिक भी दाक्षिण्य नहीं है? थोड़ा-सा तो मार्ग देता। लेकिन सरिता और सरित्पतिके बीच फैले हुअे सेतु परसे चलते चलते मनमें यही विचार आया कि अड्यारके अपमानमें मैं भी शरीक हूं। सेतु परसे अुस पार जानेके

बाद वापस तो आना ही पड़ा। अुसके बाद आज तक कअी बार मद्रास गया हूं, भगवती अड्यारका दर्शन भी किया है, लेकिन अुस बांध परसे जानेका जी ही नहीं हुआ।

कूवम्के पानीसे अड्यारका पानी ज्यादा स्वच्छ मालूम होता है। वहांकी हवा स्वच्छ होनेसे पानी चमकीला भी दीख पड़ता है। बिस नदीके बीच अुत्तरकी ओर अेक लक्ष्मीपुत्रका सफेद प्रासाद है। वह नदीकी शोभाको भ्रष्ट नहीं करता। नदीके कारण वह ज्यादा अुठाव-दार हो गया है।

मैं जब जब अड्यार गया हूं, अुसके किनारेके नारियलका मीठा पानी मैंने पिया है और अुसीको अुस लोकमाताका प्रसाद माना है। अड्यारके साथ कूवम्का दर्शन भी होता ही है। लेकिन अुसके लिअे तो आज तक मनमें दया ही दया पैदा हुअी है, हालांकि मद्रासके सेंट जॉर्ज फोर्टके कारण अुसकी शोभा साधारण कोटिकी नहीं है।

अंग्रेजोंने अड्यारसे लेकर कूवम् तक अेक छोटी नहर दौड़ायी है, जिसे अुन्होंने 'बकिंगहेम केनाल' का नाम दिया है। बिस केनालसे क्या लाभ हुआ है सो तो मैं नहीं जानता। लेकिन अुसका नाम जितनी दफा मैंने सुना अुतनी दफा वह मुझे अखरा ही है।

ये नदियां मद्रास शहरके बीच न होतीं तो शायद बिन्हें मैं श्रद्धांजलि भी नहीं दे पाता। लेकिन बिनका माहात्म्य और सौन्दर्य बढ़ानेका काम मद्रासके हाथों नहीं हो सका। मद्रासने बिनसे सेवा ली, लेकिन बिनकी सेवा नहीं की, यह विषाद तो मद्रासके बारेमें मनमें रह ही जाता है।

२ जून, १९५७

५६

प्रथम समुद्र-दर्शन

पिताजीका तबादला सातारासे कारवार हो गया और हम लोगोंने सातारासे हमेशाके लिये विदा ली। घर पर नरसा नामका अेक बैल था। अुसे हमने मामाके घर बेलगुंदी भेज दिया। महादूको छुट्टी देनी ही पड़ी। बेचारेने रो-रो कर आंखें सुर्ख कर लीं। नौकरानी मथुराको छोड़ते समय मांने अुसको अपनी अेक पुरानी किन्तु अच्छी साड़ी दे दी और अुसने हम सबको बहुत दुआयें दीं। घरके बहुत सारे सामान-असबाबको ठिकाने लगाकर हम पहले शाहपुर गये और वहां कुछ रोज रहकर वेस्टर्न इण्डिया पेनिनशुलर रेलवेसे मुरगांव गये। रास्तेमें गुंजीके स्टेशन पर पानीके फव्वारे छूट रहे थे, जिन्हें देखनेमें हमें बड़ा मजा आया। लौंढ़े पर गाड़ी बदल कर हम डब्लू० आई० पी० रेलवेके डिब्बेमें बैठ गये।

गोवा और भारतकी सरहद पर कैसल रॉक स्टेशन है। वहां पर कस्टमवालोंने हम सबकी तलाशी ली। हमारे पास चुंगीके लायक भला क्या हो सकता था? लेकिन सफरमें बच्चोंके खानेके लिये डिब्बे भर-भरकर छोटे-बड़े लड्डू लिये थे। अुन्हें देखकर कस्टम्सके सिपाहीके मुंहमें पानी भर आया। अुसने निःसंकोच लड्डू हमसे मांग ही लिये। वह बोला, "आपके ये लड्डू हमें खानेको दे दीजिये।" मैंने सोचा कि हमारे लड्डू अब यहीं पर खतम हो जायेंगे। मांका दिल पिघल गया और वह बोली, "ले भैया, अिसमें क्या बड़ी बात है?" लेकिन पिताजीने बीचमें दखल देते हुअे कहा, "दूसरे किसीको भी दे दो, लेकिन अिस सिपाहीको देना तो रिश्वत देने जैसा है।"

सिपाही बोला, "हम किसीसे कहने थोड़े ही जायेंगे? आपके पास चुंगीके लायक चीजें मिली होतीं और हमने आपसे चुंगी वसूल न की होती, तो आपका लड्डू देना रिश्वतमें शुमार हो जाता।"

पिताजीका कहना न मानकर मांने अुन तीनोंको अेक-अेक बड़ा लड्डू दिया। घीमें तले हुअे और चीनीकी चाशनीमें पगे हुअे लड्डू बड़े बेचारोंने शायद अुससे पहले कभी खाये न होंगे। अुन्होंने लड्डुओंके टुकड़े अपने मुंहमें ठूंसकर अपने गालोंके लड्डू बना लिये।

पिताजीकी ओर देखकर मां बोली, "क्या मैं घरके चपरासियोंको खानेको नहीं देती थी? ये तो मेरे लड़कोंके समान हैं। अिन्हें खानेको देनेमें शर्म किस बातकी? आज तक अैसा कभी नहीं हुआ कि किसीने मुझसे कुछ मांगा हो और मैंने देनेसे अिनकार किया हो। आज ही आपकी रिश्वत कहांसे टपक पड़ी?"

कैसल रॉकसे लेकर तिनअी घाट तककी शोभा देखकर आंखें तृप्त हो गयीं। यह कहना कठिन है कि अुसमें देखनेका आनन्द अधिक था या अेक-दूसरेको बतानेका। हमने दाहिनी तरफकी खिड़कियोंसे बायीं तरफकी खिड़कियों तक और फिर बायीं तरफकी खिड़कियोंसे दाहिनी तरफकी खिड़कियों तक नाच-कूदकर डिब्बेमें बैठे हुअे मुसाफिरोंके नाकों-दम कर दिया।

फिर आया दूध-सागरका प्रपात। वह तो हमसे भी जोरशोरसे कूद रहा था। हमने अिससे पहले कोअी जल-प्रपात नहीं देखा था। अितना दूध बहता देखकर हमको बड़ा मजा आया। हमारी रेलगाड़ी भी बड़ी रसिक थी। प्रपातके बिलकुल सामनेवाले पुल पर आकर वह खड़ी हुअी और पानीकी ठंडी-ठंडी फुहार खिड़कीमें से हमारे डिब्बेमें आकर हमेंको गुदगुदाने लगी। अुस दिन हम सोनेके समय तक जल-प्रपातकी ही बातें करते रहे।

हम मुरगांव पहुंच गये। आजकल मुरगांवको लोग मार्मागोवा कहते हैं। हम स्टेशन पर अुतरे और रेलकी बहुतसी पटरियोंको लांघकर अेक होटलमें गये। वहां भोजन करनेके बाद मैं अिधर-अुधर पड़ी हुअी सीपियां लेकर खेलने लगा। अितनेमें केशू दौड़ता हुआ मेरे पास आया। अुसकी बिस्फारित आंखें और हांफना देखकर मुझे लगा कि अुसके पीछे कोअी बैल पड़ा होगा।

अुसने चिल्लाकर कहा, 'दत्तू, दत्तू जल्दी आ! जल्दी आ! देख, वहां कितना पानी है! अरे फेंक दे वे सीपियां। समुद्र है समुद्र! चल मैं तुझे दिखा दूं।' बचपनमें अेकका जोश दूसरेमें आ जानेके लिअे अुसके कारणको जान लेनेकी जरूरत नहीं हुआ करती। मुझमें भी केशू जैसा जोश भर गया और हम दोनों दौड़ने लगे। गोंडूने दूरसे हमको दौड़ते देखा तो वह भी दौड़ने लगा; और हम तीनों पागल जोर-जोरसे दौड़ने लगे।

हमने क्या देखा! सामने अितना पानी अुछल रहा था जितना आज तक हमने कभी नहीं देखा था। मैं आश्चर्यसे आंखें फाड़कर बोला, 'अबबबब . . . ! कितना पानी!' और अपने दोनों हाथोंको अितना फैलाया कि छातीमें तनाव पैदा हो गया। केशू और गोंडूने भी अपने अपने हाथोंको फैला दिया। अगर अुस हालतमें पिताजीने हमको देख लिया होता, तो अुन्होंने कैमेरा लाकर हमारी तस्वीरें खींच ली होतीं। 'कितना पानी है! अितना सारा पानी कहांसे आया? देखो तो, धूपमें कैसा चमकता है!' हम अेक-दूसरेसे कहने लगे। बड़ी देर तक हम समुद्रकी तरफ देखते रहे फिर भी जी नहीं भरा। अब अिस पानीका किया क्या जाय? बिलकुल क्षितिज तक पानी ही पानी फैला हुआ था और अुससे चुप भी न रहा जाता था। अुसके साथ हम भी नाचने लगे और जोर-जोरसे चिल्लाने लगे, "समुद् द्र! समुद् द्र!! समुद् द्र!!!" हर बार 'समुद्र' शब्दके 'मुद्र' को अधिकसे अधिक फुलाकर हम बोलते थे। समुद्रकी विशालता, लहरोंके खेल और दिगन्तकी रेखाका दृश्य पहली ही बार देखनेको मिला। अिससे हमें जो अत्यधिक आनन्द हुआ अुसे प्रकट करनेके लिअे हमारे पास अन्य कोअी साधन ही न था। जिस तरह समुद्रकी लहर अुभरकर, फूल-कर फट जाती है, अुस तरह हम समुद्रकी रट लगाकर तालके साथ नाचने लगे; लेकिन हम लहरें तो थे नहीं, अिसलिअे अन्तमें थक कर अिधर-अुधर देखने लगे तो अेक तरफ अेक अेक कमरे जितनी बड़ी अींटें चुनी हुअी हमने देखीं। अुनमें से कुछ टेढ़ी थीं तो कुछ सीधी। अुस समय मुझे दुकानमें रखी हुअी साबुनकी बट्टियों और

दियासलाअीकी डिब्बियोंकी अपमा सूझी। वास्तवमें वह मुरगांवका चह था, जो बड़ी बड़ी अींटोंसे बनाया गया था। शिवजीके सांड़की तरह समुद्रकी लहरें आ आकर अुस चहके साथ टक्कर ले रही थीं।

हम घर लौटे और समुद्र कैसा दिखता है अुसके बारेमें घरके अन्य लोगोंको जानकारी देने लगे। समुद्रके नक्कारखानेमें बेचारे दूध-सागरकी तूतीकी आवाज अब कौन सुनता?

सूर्य समुद्रमें डूब गया। सब जगह अंधेरा फैल गया। हम खाना खाकर चहके साथ लगे हुअे जहाज पर चढ़ गये। लोहेके तारोंका जो कठड़ा जहाजमें होता है, अुसके पासकी बेंच पर बैठकर गोंडू और मैं यह देखने लगे कि अूंट जैसी गर्दनवाले भारी बोझ अुठानेके यंत्र (क्रेन) बड़े-बड़े बोरोंको रस्सोंसे बांधकर कैसे अूपर अुठाते हैं और अेक तरफ रख देते हैं। हमारे सामनेके क्रेनने अेक बड़े ढेरमें से बोरे निकालकर हमारे जहाजके पेटको भर दिया। यंत्रोंकी घर्र घर्र आवाजके साथ मल्लाह जोर जोरसे चिल्लाते, 'आवेस! आवेस! — आन्या! आन्या!' जब वे 'आवेस' कहते तब क्रेनकी जंजीर कस जाती और 'आन्या' कहते तब वह ढीली पड़ जाती। कहते हैं कि ये अरबी शब्द हैं।

हम यह दृश्य देखनेमें मशगूल थे कि अितनेमें हमारे पीछेसे, मानो कानमें ही 'भों ओं ओं . . . . ' की बड़े जोरकी आवाज आयी। हम दोनों डरके मारे बेंचसे झट कूद पड़े और पागलकी तरह अिधर-अुधर देखने लगे। हमारे कानोंके परदे गोया फटे जा रहे थे। अितने नजदीक अितने जोरकी आवाज बर्दाश्त भी कैसे हो? कहां तो दूरसे सुनाअी देने-वाली रेलकी 'कू. . . अू . . . अू . . .' वाली सीटी और कहां यह भैंसकी तरह रेंकनेवाली 'भों ओं . . . ' की आवाज! आखिरकार वह आवाज रुक गअी; लकड़ीका पुल पीछे खींच लिया गया, आने-जानेके रास्ते परसे निकाला हुआ कंटीला कठड़ा फिरसे लगा दिया गया और 'घस घस' करते हुअे हमारे जहाजने किनारा छोड़ दिया। देखते देखते अंतर बढ़ने लगा। किसीने रुमालको हवामें फहराकर तो किसीने सिर्फ हाथ हिलाकर अेक-दूसरेसे विदा ली। अैसे मौकों पर चंद लोगोंको

कुछ न कुछ भूली हुअी बात जरूर याद आ जाती है। वे जोर-जोरसे चिल्लाकर अेक-दूसरेको वह बताते हैं और दूसरा आदमी अुसकी तसल्लीके लिअे 'हां हां' कहता रहता है, फिर भले अुसकी समझमें खाक भी न आया हो।

जमीनसे हमारा संबंध कट गया। और हम समुद्रके पृष्ठ पर जहाजके जरिये आगे बढ़ने लगे। यह सब मजा देखकर हम अपनी अपनी जगहों पर बैठ गये। जहाजमें सब जगह बिजलीकी बत्तियां थीं। रेलमें अलग ढंगके दीये थे। वहां खोपरेके और मिट्टीके मिले हुअे तेलमें जलनेवाली बत्तियां कांचकी हंडियोंमें लटकती रहती थीं। यहां दीवारोंमें छोटे छोटे कांचके गोलोंके अंदर बिजलीके तार जलकर धीमी रोशनी दे रहे थे।

समुद्रका और समुद्र-यात्राका वह हमारा प्रथम अनुभव था।

५७

छप्पन सालकी भूख

सन् १८९२ के करीब मैं पहली बार कारवार गया था। मार्मागोवा बंदरगाह परसे जब मैंने पहली बार चमकता समुद्र देखा, तब मैं अवाक् हो गया था। रातको नौ बजे हम स्टीमरमें बैठे। स्टीमरने किनारा छोड़कर समुद्रमें चलना शुरू किया, और मेरा दिमाग भी अपना हमेशाका किनारा छोड़कर कल्पना पर तैरने लगा। सुबह हुअी और हम कारवार पहुंचे। स्टीमरसे नावमें अुतरना आसान न था। प्रत्येक नावके साथ अुलांडियां (outriggers) बंधी हुअी थीं। मेरे मनमें सवाल अुठा कि जान-बूझकर अिस तरहकी असुविधा क्यों की होगी? बादमें मैं अुलांडियोंकी अुपयोगिताको समझ सका।

सफरकी थकान अुतरते ही हम समुद्रके किनारे फिरने जाने लगे। किनारे परसे समुद्रमें तीन पहाड़ दिखाअी देते थे। अुनमें से अेक देवगढ़का था, दूसरा मधलिंग-गढ़का और तीसरा था कूर्मगढ़का। देवगढ़

पर दीप-स्तंभ था। यह उसकी विशेषता थी। उस दीप-मीनारके पास अेक पतली ध्वज-डंडी मुश्किलसे दीख पड़ती थी। समुद्र-किनारे खेलते-खेलते थक जानेके बाद दीप-मीनारका जलता दीया सर्व प्रथम देखनेकी हमारे बीच होड़ लगती थी। कभी-कभी मनमें यह विचार उठता था कि पानीके किसी विशाल पट परसे जब हम कारवार आये तब रातको स्टीमरमें से देवगढ़ क्यों न देखा?

किसी स्टीमरके आनेके वक्त देवगढ़की ध्वज-डंडी पर लाल ध्वज चढ़ाया जाता था। उसे देखकर कारवार बंदरगाहके नजदीककी ध्वज-डंडी पर भी ध्वज चढ़ाया जाता था। यहांका आदमी दूरबीन लेकर देवगढ़की ओर ताकता रहता था। वहां ध्वज दिखाअी देने पर वह यहां भी ध्वज चढ़ाता था। कभी-कभी मैं दूर देवगढ़ पर चढ़ा हुआ ध्वज देख सकता था और भाअू गोंदूको आश्चर्यचकित कर देता था।

अेक दफा मैंने पिताजीसे पूछा, "देवगढ़ पर दीया कौन जलाता है? ध्वज कौन फहराता है?" अुन्होंने जवाब दिया, "वहां अेक खास आदमी रखा गया है। शाम होते ही वह दीया जलाता है। दूरसे आती हुअी आगबोटको देखकर वह ध्वज चढ़ाता है। देवगढ़का दीया देखकर नाविकोंको पता चलता है कि कारवारका बंदरगाह आ गया। वे जानते हैं कि दीयेके नीचे चट्टान है। अिसलिअे वे दीयेके पास नहीं जाते।"

"दीप-मीनारकी संभाल करनेवाले मनुष्यके लिअे खानेकी क्या सुविधा होगी? वह मीठा पानी कहांसे लाता होगा?" मैंने सवाल किया।

"नावमें बैठकर खाने-पीनेकी सब चीजें वह कारवारसे ले जाता है। देवगढ़ पर शायद टांका या कुआं होगा, जिसमें बारिशका पानी जमा कर रखते होंगे।"

"क्या हम वहां नहीं जा सकते? चलें, हम भी अेक दफा वहां हो आयें। वहां हमेशा रहनेमें तो कैसा मजा आता होगा। शाम होते ही दीया जलाना; और आगबोटकी सीटी बजते ही ध्वज चढ़ाना। बस,

इतना ही काम? बाकीका सारा समय अपना! हम जिस तरह चाहें व्यतीत कर सकते हैं। न कोअी हमसे मिलने आवेगा, न हम किसीसे मिलने जायंगे। चलें, अेक दफा हम वहां हो आयें।"

पिताजीने हमारे घरके मालिक रामजीसेठ तेलीसे पूछा। अुन्होंने अपने जहाजके कप्तानसे बातचीत की। और दूसरे ही दिन देवगढ़ जाना तय हुआ। हम सब गाड़ीमें बैठकर बंदरगाह पर गये। बड़ी किश्तीमें बैठने पर खूब मजा आया। पाल फैले और डोलते डोलते हम चले। जहाज सुन्दर डोलता था, लेकिन जल्दी आगे बढ़नेका नाम न लेता था। बहुत समय लगा तो पिताजीने रामजीसेठसे कारण पूछा। रामजीसेठने कप्तानसे पूछा। अुसने कहा, "पवन अनुकूल नहीं है, टेढ़ा है। पवनकी दिशाका खयाल करके पाल चढ़ाये गये हैं। जहाज आगे बढ़ता है, लेकिन देवगढ़ पहुंचते-पहुंचते शाम हो जायेगी।" मुझे तो कोअी आपत्ति न थी। सारा दिन डोलनेका आनन्द मिलेगा और शाम होते ही दीप-मीनारका दीया नजदीकसे देखनेको मिलेगा। लेकिन अितनी अच्छी बात पिताजीके ध्यानमें न आयी। अुन्होंने कहा: "यह तो ठीक नहीं है।" कप्तानने कहा, "पवन प्रतिकूल है। अिसके सामने हम क्या करें? थोड़ी दूर जानेके बाद यदि यही पवन जोरसे बहने लगा तो अितना अंतर काटना भी मुश्किल है।" रामजीसेठने पिताजीसे पूछा, "अब क्या करें?" पिताजीने कहा, "और कोअी अुपाय ही नहीं है। वापस जायेंगे।"

हुक्म हुआ, "वापस चलो।" पालोंकी व्यवस्था बदल दी गयी। किस तरह यह सब फेरफार किया जाता है, यह देखनेमें मैं मशगूल था। अितनेमें हमारा जहाज बंदरके तक वापस आ पहुंचा। अितनी दूर जानेमें अेक घंटा लगा था। लेकिन वापस आनेमें पांच मिनट भी न लगे! घर लौटते वक्त सिर्फ तांगेके घोड़े ही जल्दी नहीं करते।

हम जैसे गये वैसे ही खाली हाथ लौट आये। फीके मुंह मैं घर आया, मानो अपनी फजीहत हुअी हो। सहपाठियोंसे मैंने अितना भी न कहा कि हम देवगढ़ जानेको निकले थे।

अिसके बाद करीब पांच साल तक मैं कारवार रहा। लेकिन फिर कभी मैंने देवगढ़ जानेकी कोशिश न की। सूर्यास्तके समय देवगढ़का दीवा दिखने पर मैं अपने मनसे यह सवाल पूछता था कि अुस परीके देशमें क्या होगा? चालीस वर्षके बाद, यानी आजसे दस वर्ष पहले फिर अेक दफा मैं कारवार गया था। लेकिन तब भी देवगढ़ न जा सका।

अिस बार यह निश्चय करके ही कारवार गया कि देवगढ़ देखे बिना नहीं लौटूंगा। वहांके मित्रोंसे मैंने कह दिया था कि देवगढ़के लिअे अेक दिन जरूर रखें।

देवगढ़में देखने लायक खास तो कुछ नहीं है। लेकिन छप्पन सालका बचपनका मेरा संकल्प देवगढ़के साथ संलग्न था। अुसको मुक्त करनेकी जरूरत थी।

देवगढ़ कारवारके किनारेसे लगभग तीन मील दूर समुद्रमें आया हुआ अेक बेट है। कारवार बंदरगाहकी यह सबसे बड़ी शोभा है। समुद्रकी सतहसे पहाड़ीकी अूंचाअी २१० फुट है और अुस परकी दीप-मीनार ७२ फुट अूंची है।

शराबबंदीके कारण कस्टम्सवालोंको समुद्रका पहरा देना पड़ता है। अुसके लिअे अुनके पास अेक बाफर* होती है। अुसके द्वारा हमें ले जानेकी व्यवस्था की गअी थी। हमारा यह सैरका कार्यक्रम दूसरे कर्तव्यरूप कार्यक्रमोंके आड़े न आवे अिसलिअे हम सुबह जल्दी अुठे और बंदरगाह पर पहुंच गये। हम अितने अुत्सुक नहीं थे कि सुबहकी प्रार्थना और जलपान घर पर करते। खलासी लोग जरा देरसे आये, अतः घोड़ेकी तरह दौड़ती हुअी हमारी बाफरके साथ चल रही हमारी प्रार्थना सुननेके लिअे कारवारके पहाड़के पीछेसे सविता नारायण भी आ पहुंचे। सविता नारायणको जन्म देकर कृतार्थ प्राची कितनी खिल अुठी थी! समुद्रके पानी भी प्राचीकी प्रसन्नताके कारण चमकती लहरोंके साथ आये थे। मैंने जमीनकी ओर देखा। दाहिनी ओर कारवारका बंदरगाह

* भापके अेंजिनसे चलनेवाली नाव – स्टीमलॉंच।

छोटी-बड़ी नौकाओंको जगाता था और खेलाता था। अुसके पासकी घाटीके नारियलके पेड़ पवनकी राह देखते खड़े थे। शनिवारकी तोप, जो आजकल छूटती नहीं है, ध्वजदंड परसे मुंह फाड़कर शाहक डराती थी। अुसके बाद सरोके पेड़ कारवारकी चौड़ाअीको नापते हुअे काळी नदी तक फैले थे। जिस तरह भारतीय युद्धके राजा विश्वरूपके मुंहमें दौड़े, अुसी तरह तीन-चार जहाज काळी नदीके मुंहमें घुस रहे थे। और सदाशिव-गढ़का पहाड़ सहज भ्रूसंकोच करके सारे प्रदेशकी रक्षा करता था।

प्रार्थना पूरी होने पर हमारी बाफरने समुद्रकी पीठ पर जो रास्ता आंका था और अुस पर जो डिज़ाअिन शीघ्रतासे अदृश्य हो रही थी अुस ओर मेरा ध्यान गया; अुस डिज़ाअिनमें मुक्तवेणीकी हरेक खूबी प्रकट हुअी थी।

तुझे देवगढ़ दिखाये बगैर रहूंगा ही नहीं, अैसा निश्चय करके व्यवस्थाके सब ब्यौरोंकी ओर सावधानीसे ध्यान रखनेवाले भाअी पद्मनाभ कामतने मुझे दक्षिणकी ओरके पहाड़की तराअीके नीचे फैला हुआ चंद्रभागी किनारा दिखाया। किसी समय युरोपियन स्त्रियां वहां नहाती होंगी। अिसलिअे अुसका नाम Ladies Beach (युवती-तट) पड़ा है।

गोवाकी संस्कृतिसे ओतप्रोत कवि वोरकर भी हमारे साथ सफरमें आये थे। हमारे आनंदकी वृद्धि करनेके लिअे भाअी कामत अपने साथ चित्रकार श्री रमानंदको लाये थे। रमानंदने पिताकी और बड़े मेहमानोंकी सन्निधिमें शोभा दे अैसी नम्रता धारण करके ठीक-ठीक आत्म-विलोपन किया था। लेकिन बीच समुद्रमें आते ही पहाड़, बादल, सूरज, पक्षी, जहाजके पाल और समुद्रकी अूर्मियां अिन सबके प्रभावके नीचे अुनकी कलाधर आत्मा हमारी हस्तीका भान भूल गयी और वे अनेक दिनोंके भूखे किसी खाअूकी तरह आसपासके काव्यका अनिमेष दृष्टिसे भक्षण करने लगे। हमने अंगुलि-निर्देश करके अुनकी ओर दूसरोंका ध्यान खींचा। लेकिन अिससे अुनका ध्यान नहीं बंटा। सिर्फ नन्हीं कुन्दाकी चंचल आंखें राव और घूमती थीं।

हमारे कवि तो शास्त्रोक्त भक्तिसे हमारी प्रार्थना पूरी होनेकी प्रतीक्षा कर रहे थे। प्रार्थना पूरी होते ही अुन्होंने सागरकी लहरोंका अेक खलासी गीत छेड़ा। गीतका प्रकार चाहे खलासी ढंगका हो, लेकिन अंदरके भाव खलासी हृदयके न थे। अिस गीतके द्वारा भोले खलासी नहीं बोलते थे, बल्कि मस्तीमें आये हुअे कवि अपनी अभिजात भावनाके फव्वारे छोड़ रहे थे। यह सच है कि अुस दिन हमारी टोलीमें कोअी स्वस्थ (Sober) न था। हिन्दू स्कूलके आचार्य श्री कुलकर्णी भी आनंदमें आ गये थे। चि० सरोजने तो अपना स्थान छोड़कर नाविकके आगे खड़ा रहना पसंद किया था। अपने स्वभावके प्रति-कूल जाकर अुसने अग्रगामित्व स्वीकार किया था। यह देखकर मुझे आनन्द हुआ। मैंने अुसको मंचर सरोवरमें काव्यका पान किये हुअे नारायण मलकानीकी याद दिलाअी। अितने संकेतसे ही हम दोनों सारी वस्तुस्थितिका मूल्यांकन कर सके!

समुद्रके पानी परसे आने-जानेके अनेक प्रकार हैं और हरेक प्रकारमें अलग-अलग रस होता है। लहरोंके थपेड़े खाते हुअे बाहु-बलसे तैरते-तैरते दूर अंदर तक जानेमें अेक प्रकारका आनंद है। छातीके नीचे अुछलती लहरों पर सवार होनेका लुत्फ जिसने अुठाया है वह कभी अुसको भूल नहीं सकता। नदीके पानीकी तरह समुद्रका पानी हमें डुबा देनेके अिन्तजारमें नहीं रहता। समुद्रका पानी किसीका भोग लेगा तो निरुपाय होकर ही। नहीं तो अुसकी नीयत हमेशा तैराकोंको तारनेकी ही रहती है।

संकरी और लम्बी नावमें बैठकर अेक ही डांड़से हरेक लहरके सामने चढ़-अुतर करना अेक दूसरा आनंद है। दो लहरोंके बीच नाव टेढ़ी हो जाय तो मुसीबतमें आ जायेंगे। अितना अगर संभाल लिया तो समुद्रके आनंदके साथ अेकरूप होनेके लिअे अिससे अधिक अच्छा साधन मिलना मुश्किल है।

बड़ी नावमें दो-दोकी टुकड़ीमें बैठकर बल्ले मारनेका सांघिक आनंद आनंदका तीसरा प्रकार है। हम मौन धारण करके यह आनंद

नहीं लूट सकते। तालका नशा इतना मादक होता है कि उससे गायन अचूक फूट निकलता है।

वाफरमें बैठनेका आनंद इन तीनोंसे कुछ कम है। वह इसलिये कि उसको चलानेमें मानवका बाहुबल बिलकुल खर्च नहीं होता। नियंत्रण-चक्र हाथमें पकड़नेवालेकी भुजाको कसरत होती है। उतने ही पुरुषार्थका अवकाश वाफरमें मिलता है। लेकिन वाफरके द्वारा पानीको चीरते हुये जानेका आनंद सारे शरीरको मिलता है। वाफर जब सीधी दौड़ती जाती है तब उसकी गति हमारी रग-रगमें पहुंचती है। मोटर चलानेके आनंदसे वाफर चलानेका आनंद अनेक गुना बढ़कर है।

इस आनंदको लूटते-लूटते और यह विचार करते-करते कि समुद्रका पानी यहां कितना गहरा होगा, हम देवगढ़की ओर चले। मुझे एक विचार आया, जो पानी सबसे नीचे है वह ऊपरके पानीके भारसे कुचल नहीं जाता होगा? ऊपरके पानीसे नीचेका पानी अधिक गाढ़ा और घना होना ही चाहिये। अमुक मछलियां तो इस गाढ़े पानीको बींधकर नीचे उतर ही नहीं सकती होंगी। पारेके सरोवरमें अगर हम पड़ें तो लकड़ीके टुकड़ेकी तरह उसके ऊपर ही तैरते रहेंगे। अमुक प्रकारकी मछलियोंका भी नीचेके गाढ़े पानीमें यही हाल होता होगा।

ज्यों-ज्यों देवगढ़का बेट नजदीक आता गया, त्यों-त्यों आस-पासके छोटे-छोटे बेट और चट्टानें स्पष्ट दीखने लगीं। आकाश और समुद्र जहां मिलते हैं वह क्षितिज-रेखा भी आज बहुत ही स्पष्ट थी। मानो कोई सूझसे दिखा रहा है कि यहां पृथ्वी पूरी होती है और स्वर्ग शुरू होता है।

दो जहाज अपने पालमें पवन भरकर सफरको रवाना हुये थे। उन पालोंके पेटमें पवनके साथ उगते सूर्यकी किरणें भी घुस गयी थीं। ऐसा महसूस होता था कि इस भारसे पाल फट जायेंगे। पाल इतने चमकते थे कि वे रेशमके हैं या हाथी-दांतके, यह तय करना मुश्किल था। जब पवन पालमें घुसता है तब पेलेके पानकी डिज़ाइन उसमें अधिक शोभती है।

अब हम देवगढ़के बिलकुल नजदीक आ गये थे। सारी पहाड़ी टेकरी छोटे-बड़े पेड़ोंसे ढंकी हुअी थी। अूपरकी दीप-मीनार अपना दरजा संभालकर आकाशकी ओर अंगुलि-निर्देश कर रही थी। अब वाफरके लिअे आगे जाना असंभव था। बाकीका थोड़ा और छिछला अंतर काटनेके लिअे हमारी वाफरने अपने साथ अेक नन्हा-सा किंकर बांध लिया था। अुस छोटीसी नावमें हम अुतरे और बेटके किनारे पहुंचे। अुतरते ही पके बेरके लाल-लाल फलोंने हमारा स्वागत किया। हम अूपर चढ़ते-चढ़ते बड़े-बड़े वृक्षोंकी शाखायें तथा वरगदकी जड़ें निहारते-निहारते दीप-मीनारकी तलहटी तक पहुंचे। दीप-मीनारके दीपकार अेक भले मुसलमान थे। अुन्होंने हमारा स्वागत किया। बेट पर दीप-मीनारके कारण कुछ लोग रहते थे। अुनके कारण थोड़े बकरे और मुरगे भी रहते थे (और समय समय पर बा-कायदा मरते भी थे)। समुद्र किनारेसे अुड़ते-अुड़ते आकर यहांके पेड़ों पर आराम करनेवाले और प्राकृतिक काव्यके फव्वारे छोड़नेवाले पक्षी तो अृषि-मुनियों जैसे ही पवित्र माने जाने चाहिये।

वाफरमें बैठकर हमने सुबह आत्माकी अुपासना की थी, यहां अेक चट्टान पर बैठ कर सबोंने पेटकी अुपासना की। आसपासकी शोभा अघाकर देखनेके बाद दीप-मीनारके पेटमें होकर हम अूपर गये।

दीयेमें से 'विश्वतो' निकलती किरणोंको खूबीसे मोड़कर पानीके पृष्ठभागके समानांतर अुनका बड़ा प्रवाह दौड़ानेके लिअे अनेक प्रकारके बिल्लोरी कांचसे बनायी हुअी दो डालोंको हमने सर्वप्रथम देखा। पेरावोला और हाअीपरबोलाके गणितका अुसमें पूरा अुपयोग किया जाता है। शंकुछेदका * रहस्य जो जानता है वही अिसका रहस्य समझ सकेगा। अुसके बाद अुस दीयेका बुरका अेक ओर खिसकाकर हमने दूर तक सामुद्रीय शोभा निहारी और अितनेसे संतोष न पाकर हम दीयेके आसपासकी गैलरीमें जाकर स्वतंत्रतासे दसों दिशाअें देखने लगे।

---

* Conic sections.

जिस दृश्यको देखनेकी अभिलाषा मैं छप्पन सालसे सेता आया था, वह दृश्य आज देखा। आंखोंको पारण मिला। ऐसा लगता था मानो सारा वेट अेक बड़ा जहाज है, दीप-मीनार अुसका मस्तूल (mast) है, और हम अुस पर चढ़कर चारों ओर पहरा देनेवाले खलासी हैं। यह सच है कि जहाजके मस्तूलकी तरह यह दीप-मीनार डोलती न थी, लेकिन अभी-अभी बाफरका सफर किये हुअे हमारे 'पियक्कड़' दिमाग अिस त्रुटिको दूर कर रहे थे।

अितनी अूंचाअीसे चारों ओर देखनेमें अेक अनोखा आनंद आता है। कुतुबमीनार परसे हिन्दुस्तानकी अनेक राजधानियोंका स्मशान देखनेसे मनमें जो विषाद पैदा होता है सो यहां नहीं होता। यहांसे दिखनेवाले समुद्रमें प्राचीन कालसे आजतक अनेक जहाज डूब गये होंगे, लेकिन अुसकी गमगीनी यहांके वातावरणमें बिलकुल नहीं दीख पड़ती। समुद्रमें भूत और भविष्यके लिअे स्थान ही नहीं होता। वहां वर्तमानकाल और सनातन अनंतकाल, अिन दोनोंका ही साम्राज्य चलता है। जब तूफान होता है तब लगता है कि यही समुद्रका सच्चा और स्थायी रूप है। और जब आजकी तरह सर्वत्र शांति होती है तब लगता है कि तूफान तो माया है। सचमुच समुद्रका मुंह बुद्ध भगवानकी शांति और अुनके अुपशमको व्यक्त करनेके लिअे ही सिरजा गया है।

अितने बड़े समुद्रको आशीर्वाद देनेकी शक्ति पितामह आकाशमें ही हो सकती है। आकाश शांत चित्तसे चारों ओर फैल गया था और समुद्र पर रक्षणका ढक्कन ढांकता था। ढक्कन पर कुछ भी डिज़ाअिन न थी; वह पक्षियोंसे सहन न होता था। अतः वे अुस पर तरह तरहकी रेखाअें खींचनेका अस्थायी प्रयत्न करते थे। जिस तरह बच्चे किसी गंभीर आदमीको हंसानेके लिअे अुसके सामने डरते डरते थोड़ी बानर-चेष्टाअें करके देखते हैं, अुसी तरह समुद्रका नीला रंग आकाशकी नीलिमाको हंसानेका प्रयत्न कर रहा था।

भगवानका अैसा विराट दर्शन होते ही भगवद्गीताका ग्यारहवां अध्याय याद आना चाहिये था, लेकिन अितने प्राचीन कालमें जानेके

पहले अुत्तेजित चित्तने आरामके लिअे अेक नजदीकका ही प्रसंग पसंद किया। बीस साल पहले मैं लंकाके दक्षिणी छोर पर देवेन्द्रसे भी आगे मातारा गया था, तब वहांकी दीप-मीनार पर चढ़कर दोपहरकी धूपमें बैठा ही, बल्कि जिससे भी अनेक गुना विशाल, दृश्य देखा था। वहां नजरको त्रिज्या बनाकर मनुष्य जितना चाहे अुतना बड़ा वर्तुल खींच सकता था। अुस वर्तुलका दक्षिणार्ध हिन्द महासागरको दिया गया था और अुत्तरार्ध नारियलके पत्तोंको लहरें अुछालते और दोपहरकी धूपमें चमकते बनसागरको अर्पण हुआ था। यहां देवगढ़ परसे पूर्वकी ओर सूर्यनारायणके पादपीठकी तरह शोभायमान पर्वत दिखाअी देता था। अुसके नीचे फैला हुआ कारवारका समुद्र शांतिसे चमकता था। अुस परकी नावोंकी डिज़ाअिन बिलकुल हलकी हलकी थी। और पश्चिमकी ओर तो अरबस्तानकी याद दिलाता अेक अखंड महासागर ही था। यह दृश्य हृदयको व्याकुल करनेवाला था।

'नमोऽस्तु ते सर्वत अेव सर्व'—अितने ही शब्द मुंहसे निकल सके।

* * *

अिस बीच हमारे लज्जाशील चित्रकारने अेक कोनेमें बैठकर पासकी अेक बड़ी चट्टानका और आसपासके समुद्रका अेक चित्र खींचा। घर आते ही अुन्होंने मुझे यह भेंट कर दिया। आज मेरी छप्पन सालकी भूख तृप्त हुअी थी। अिस प्रसंगके स्मारकके तौर पर मैंने अुसको प्रसन्नतासे स्वीकार किया।

दीप-मीनारका काव्य आखिर पूर्णताको पहुंचा।

मअी, १९४७

५८

मरुस्थल या सरोवर

किसी घटनाके नियमित हो जानेसे क्या उसकी अद्‌भुतता मिट जाती है?

छः घंटे पहले पानी कहीं भी नजर नहीं आता था। उत्तरसे लेकर दक्षिण तक सीधा समुद्र-तट फैला हुआ है। पश्चिमकी ओर जहां आकाश नम्र होकर धरतीको छूता है वहां तक — क्षितिज तक — पानीका नामोनिशान नहीं है, अेक भी लहर नहीं दीखती। यह स्थान पहली बार देखनेवालेको लगेगा कि यह कोअी मरुस्थल है। बारिशके कारण केवल भींग गया है। या यों लगेगा कि यह कोअी दलदल है, जिस पर केवल घास नहीं है। जहां तक दृष्टि पहुंच सकती है वहां तक सीधी समतल जमीन देखकर कितना आनंद मालूम होता है। अैसी समतल जमीन तैयार करनेका काम किसी अिंजीनियरको सौंपा जाय, तो उसे बेहद मेहनत करनी पड़ेगी। मगर यह है कुदरतकी कारीगरी। अूंचे अूंचे पहाड़ोंमें भव्यता होती है, जब कि अैसे समतत* प्रदेशोंमें विशालता, विस्तीर्णता होती है। हम अिस विशालताका पान करनेमें मग्न थे, अितनेमें दूर क्षितिज पर जहाजके जैसा कुछ नजर आया। जमीन पर जहाज? क्या बात है? अितनेमें दक्षिणसे लेकर अुत्तर तक फैली हुअी अेक भूरी रेखा गहरी होने लगी। बीच बीचमें अुस पर सफेद लहरें दिखाअी देने लगीं। पानीका कटक आया। सेनापतिके हुक्मके अनुसार 'अेक-कतार' में लहरें आगे बढ़ने लगीं। आया, आया, पानी आगे आया! वह आबे पट पर फैल गया! सूरज आकाशमें चढ़ता जाता था, धूप बढ़ती जाती थी और लहरोंका अुन्माद भी बढ़ता जाता था। क्या ये लहरें अीश्वरका सौंपा

* सम-तत = stretched evenly. अुदाहरणके लिअे, गंगामुखके पासका सुन्दरवनका प्रदेश समतत कहलाता था।

हुआ कोअी असाधारण कार्य करनेके लिअे चली आ रही हैं? वे यमदूत जैसी नहीं, बल्कि देवदूतके जैसी मालूम होती हैं। जंगलमें जैसे भेड़ियोंकी टोलियां छलांग मारती, कूदती-फांदती आती हैं, वैसे ही लहरें आगे बढ़ने लगीं। जहां नीरव भींगा हुआ मरुस्थल था, वहां अुछलती गरजती लहरोंका सागर फैल गया। ज्वार पूरे जोशमें आ गया। लहरें आती हैं और किनारेसे टकराती हैं। जरा ताककर अुनकी ओर घंटे आधे घंटे तक देखते रहिये, तुरन्त मनमें स्फुरित होगा कि लहरें जड़ नहीं बल्कि सचेतन हैं। अुनका भी स्वभाव-धर्म है। चारों ओर पानी ही पानी दिखाअी देता था। बायीं ओरके ताड़-वृक्ष पानीमें डोलने लगे। मालूम होता था मानो अभी डूब जायेंगे। भानजेको लम्बे अर्सेके बाद मिलने आया हुआ देखकर समुद्रकी मौसी मरजाद-वेल स्नेहसे तर हो गअी है। और लहरोंका मद तो अुतरता ही नहीं है। हाथीके समान दौड़ रही हैं, और किनारे पर वज्र-क्रीड़ाका अनुभव कर रही हैं। कितना अद्भुत दृश्य है! जमीन ढालू हो, अुतार हो, और पानी नदीकी तरह बहता हो, तब कोअी आश्चर्य नहीं मालूम होता। नीचेकी ओर बहते रहना तो पानीका स्वभाव-धर्म है। मगर समतल भूमि पर, जहां पानी नहीं था वहां बारिश या बाढ़के बिना पानी दौड़ता हुआ आये और जमीन पर फैलता जाये, यह कितने अचरजकी बात है! जहां अभी अभी हम दौड़ते और घूमते थे वहां पांव न जम सकें अैसी जलाकार स्थिति कैसे हुअी होगी? कितने थोड़े समयमें कितना बड़ा विपर्यास! जहां हवामें हाथ हिलाते हुअे हम घूम रहे थे, वहां अब अुछलती हुअी लहरोंके बीच हाथकी पतवारें चलाकर तैरनेका आनंद लूट रहे हैं। मानो घोड़े पर बैठकर सैर करने निकले हों। अिस ज्वारके समय यदि कोअी यहां आकर देखे तो अुसे लगेगा कि खारे पानीका यह छलकता हुआ सरोवर हजारों वर्षोंसे यहां अिसी तरह फैला हुआ होगा। किन्तु थोड़ी देर खड़े रहकर देखनेकी तकलीफ कोअी अुठाये तो अुसे मालूम होगा कि अितने बड़े महायुद्धके जैसे आक्रमणका भी अंत आता है। लहरोंने अपनी लीला जिस तरह फैलाअी, अुसी तरह अुसे समेटनेका भी समय आया। अीश्वरका कार्य मानो

समाप्त हुआ। ईश्वरने मानो अपनी प्राणशक्ति वापस खींच ली। अब एक एक लहर किनारेकी ओर दौड़ती आती है, फिर भी यह साफ दिखाई दे रहा है कि पानी पीछे हट रहा है।

चला; पानी हटने लगा। क्या समुद्रके उस पार बड़ा गड्ढा है, जिसे भर देनेके लिये यह सारा पानी दौड़ता जा रहा है? आगेकी लहरोंको वापस लौटते देखकर बादमें आयी हुई लहरें बीचमें ही विरस हो जाती हैं, और दौड़ते दौड़ते ही हंस पड़ती हैं। सागरके पानीका अंदाज भला कौन लगाये? उसे किस तरह नापें? इतना पानी आया क्यों और जा क्यों रहा है? क्या उसे कोई पूछनेवाला नहीं है? या कोई पूछनेवाला है इसीलिये वह नियमित रूपमें आता है और जाता है? ज्यों-ज्यों सोचने लगते हैं, त्यों-त्यों इस घटनाकी अद्भुतताका असर मन पर होने लगता है। ज्वार और भाटा क्या चीज है? समुद्रका श्वासोच्छ्वास? उनका उपयोग क्या है? ज्वार और भाटा यदि न होते तो समुद्रका क्या हाल होता? समुद्र-जीवी प्राणियोंके जीवनमें क्या क्या परिवर्तन होता? चंद्र और सूर्यका आकर्षण और पृथ्वीकी सतहसे सागरका विभाजन आदि चर्चाएँ तो ठीक हैं; मगर इनके पीछे उद्देश्य क्या है यह जाननेकी ओर ही मन अधिक दौड़ता है। पर यह जिज्ञासा अभी तक तृप्त नहीं हुई है।

जितनी बार हम ज्वार और भाटा देखते हैं, उतनी ही बार वे समान रूपसे अद्भुत लगते हैं। और इस बातकी प्रतीति होती है कि ईश्वरकी सृष्टिमें चारों ओर यह ज्ञानमय प्रभु सनातन रूपसे विराजमान है।

'सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः' कहकर हृदय उसे प्रणाम करता है। सृष्टि महान है तो उसका सिरजनहार विभु कैसा होगा? उसे कौन पहचानेगा? क्या खुद उसे इस बातकी परवाह होगी कि कोई उसे पहचाने?

बोरडी, १ मई, १९२७

५९

चांदीपुर

मुझे डर था कि पिछली बार चांदीपुरमें जो दृश्य मैंने देखा था वह अबकी बार देखनको नहीं मिलेगा। अतः मनको समझाकर कि विशेष आशा नहीं रखनी चाहिये, चांदीपुरके लिअे हम चल पड़े। फिर भी चांदीपुर तो चांदीपुर ही है! अुसकी सामान्य शोभा भी असामान्य मानी जायगी।

कलकत्ता-कटकके रास्ते पर बालासोर या बालेश्वर नामका अेक कस्बा है। चांदीपुर वहांसे आठ मील पूर्वकी ओर समुद्र-किनारे बसा हुआ है। सरकारके फौजी विभागने अिस स्थानका कुछ अुपयोग किया है। मगर अिससे अुसका महत्त्व बढ़ा नहीं है। यहांसे तीन मीलकी दूरी पर जहां बूढ़ी-बलंग नदी समुद्रसे मिलती है, वहां सुन्दर बन्दरगाह बनाया जा सकता है। हवा खानेका सुन्दर स्थान भी वह बन सकता है। मगर अभी तक वैसा बन नहीं पाया है। आज चांदीपुरका महत्त्व अुसकी सनातन प्राकृतिक शोभाके कारण ही है। अिसीलिअे मैंने अुसे पूर्व दिशाकी बोरडीका नाम दिया है।

बम्बअीके अुत्तरमें घोलवड़ स्टेशनसे डेढ़ मील पर बोरडी नामक जो स्थान है, वहांका समुद्र जब भाटेके समय पीछे हटता है, तब डेढ़ दो मीलका पट खुला छोड़ देता है और अुसका पानी लगभग क्षितिजके पास पहुंच जाता है। सारा समुद्र-तट मानो देवताओंका या दानवोंका भींगा हुआ टेनिस-कोर्ट हो, अितना सीधा और समतल मालूम होता है। और जब ज्वारके समय पानी बढ़ने लगता है तब देखते ही देखते सारा तट पानीसे भरकर सरोवरकी तरह छलकने लगता है। मुहूर्तमें गीला मरुस्थल और मुहूर्तमें छिछला सरोवर, अैसी यह प्रकृतिकी लीला देखकर मुझे विस्मय हुआ था। अुसका वर्णन जब मैंने लिखा तब स्वप्नमें भी यह खयाल नहीं हुआ

कि ठीक किसी प्रकारके ऐसे स्थानका सर्जन प्रकृतिने पूर्वकी ओर भी कर रखा है।

राष्ट्रभाषा-प्रचारके सिलसिलेमें जब मैं उससे पहले कलकत्तासे उत्कल आया था, तब बालासोरका काम पूरा करके चांदीपुर देखनेके लिये खास तौर पर यहां आया था। रास्तेमें जगह-जगह पानीके गड्ढोंमें उगे हुए नील-कमल देखकर मेरे हर्षका पार नहीं रहा था। कमल यानी प्रसन्नताका प्रतीक। सुन्दरता, कोमलता, ताजगी और पवित्रता जब एकत्र हुईं तब उन्होंने कमलका रूप धारण किया। कमल जब सफेद होता है तब वह तपस्विनी महाश्वेताका स्मरण कराता है। यही कमल जब लाल होता है तब गंधर्व-नगरी पर राज्य करनेवाली कादंबरीकी शोभा दिखलाता है। किन्तु नील-कमल तो प्रत्यक्ष कुंजविहारी श्रीकृष्णकी ही भूमिका अदा करता मालूम होता है। संभव है हमारे देशमें नील-कमल अधिक देखनेको नहीं मिलते, इसलिये मुझे ऐसा लगा हो। मगर जिस मार्ग पर नील-कमलोंको देखकर मुझे अपार आनंद हुआ उसमें कोई संदेह नहीं।

बालासोरसे चांदीपुरका रास्ता लगभग सीधा है। किनारेके डाक-बंगलेके दरवाजे तक पहुंच जाते हैं तब तक भी समुद्रका दर्शन नहीं होता। मगर जब होता है तब वह अपनी विशालतासे चित्तको हर लेता है। पिछली बार जब हम गये थे तब ज्वार धीरे धीरे बढ़ रहा था, और नाजुक लहरें क्षितिजके साथ समानान्तर रेखा बनाकर धीमे धीमे आगे बढ़ रही थीं। क्षितिजसे किनारे तक आते समय लहरें इतनी सीधी और समानान्तर आती थीं, मानो कोई दो-तीन मील लम्बी तनी हुई रस्सीको खींचकर आगे ला रहा हो। मेरे साथ यदि कोई विद्यार्थी होता तो मैं उसे समझा देता कि नोटबुकमें जो रेखायें खींचते हैं, वे किसी तरह सुन्दर और समानान्तर खींचनी चाहिये। जमीन जब सब ओरसे समतल होती है तब अंग्रेज लेखक उसे टेनिस-कोर्टकी उपमा देते हैं। मगर कहां टेनिस-कोर्ट और कहां मीलों तक फैली हुई लम्बी और चौड़ी सिकता-स्थली!

यह सारा दृश्य जी भरकर देखा। मन तृप्त होने पर भी देखा। सामनेसे देखा, बाजूसे देखा। हम कितने पुण्यशाली हैं, अिस धन्यताके भानके साथ देखा। और फिर मनमें विचार आया : अब अिसका क्या करना चाहिये? अुसके बारेमें लिखना तो था ही। राजाको जब रत्न मिलता है तब वह अुसे अपने खजानेमें पहुंचा ही देता है। रमणियोंके हाथमें जब फूल आते हैं तब वे अपने जूड़ेमें जब तक अुन्हें लगा नहीं लेतीं तब तक अुन्हें संतोष नहीं होता। प्रकृतिके अुपासक लेखकको जब कोअी दृश्य पान करनेके लिअे मिलता है, तब वह जब तक अुसे लेख-बद्ध या कविता-बद्ध नहीं करता तब तक अुसे चैन नहीं पड़ता। मगर यह तो घर जानेके बाद ही हो सकता है। अभी यहां क्या करना चाहिये? प्रकृतिका विस्तार चौड़ा हो या अूंचा, अुसका आस्वाद केवल आंखोंसे नहीं लिया जा सकता। पांवोंको भी अुसका हिस्सा देना ही पड़ता है।

हम डाक-बंगलेकी अूंचाअीसे खिसकती और हंसती हुअी बालू पर दौड़ते हुअे नीचे अुतरे। अितनेमें अिधर-अुधर दौड़ते और पृथ्वीके अुदरमें लुप्त होते हुअे बड़े बड़े माणिक हमने देखे। कैसा सुन्दर अुनका लाल चमकीला तरल रंग था! मखमलमें जैसी फीकी और गहरी लाली होती है, वैसी ही छटा प्रकाशके कारण माणिकमें भी दिखाअी देती है। यही लावण्य हमने अिन दौड़नेवाले रत्नोंमें देखा। ये केकड़े जितने आकर्षक थे, अुतने ही भयावने भी थे। डर लगता था कि आकर कहीं काट लेंगे तो अुनके जैसा ही लाल खून पांवोंमें से निकलने लगेगा। मगर वे जितने डरावने थे अुतने ही डरपोक भी थे। मनुष्योंको देखकर झट अपने घरोंमें छिप जाते थे। हम अुनके पीछे दौड़े और अुनकी दौड़धूप देखनेका आनंद प्राप्त किया।

दौड़ते-दौड़ते हमने डिब्बियोंके जैसी छोटी-बड़ी सीपें देखीं। अुनके अूपरकी आकृतियां देखकर मुझे विश्वास हो गया कि अिनके आकार देखकर ही यहांके मंदिरोंके कलश तैयार किये गये होंगे। सुपारीके आकारकी अपेक्षा यह आकार कलाकी दृष्टिसे कहीं ज्यादा सुन्दर है।

नि० मदालसाने अैसी कभी डिब्बियां चुन लीं। अुनके आरपार सुराख होनेसे अुनकी माला बनानेकी कल्पना सहज सूझ सकती थी।

समुद्रका तट, अुसकी लहरें, लाल केकड़े और ये सीपें अिन सबकी बातें करते करते हम वापस लौटे। कुछ नील-कमल भी हमने साथ ले लिये और भारतवर्षके दर्शनमें अेक और कीमती वृद्धि हुअी अैसे संतोषके साथ घर लौटे।

अबकी जब फिरसे बालासोर आये, तब अिस सारे दृश्यका प्रत्यक्ष स्मरण हो आया और अुसे श्रद्धाकी अंजलि अर्पण करनेके लिअे फिर चांदीपुर जानेका कार्यक्रम हमने तय किया।

आकाशमें बादल घिरे हुअे थे। फिर भी हमने यह आशा रखी थी कि चांदीपुर पहुंचने पर पानीमें से निकलते हुअे सूर्यके दर्शन करेंगे। अतः साढ़े तीन बजे अुठकर नित्यविधि पूरी की; चार बजे डॉ० भुवनचंद्रजीकी मोटर मंगवाअी और मोटर-वेगसे आठ मीलका अंतर तय किया। रास्तेमें न तो खड्डे थे, न श्रीकृष्णकी आंखोंसे होड़ करनेवाले नील-कमल थे। मुझे लगभग यही विश्वास था कि वे लहरें भी हमें देखनेको नहीं मिलेंगी। अष्टमीका चांद आकाशमें फीका चमक रहा था। अतः मैंने माना था कि यहां सिर्फ छलकता हुआ शांत सरोवर ही दिखाअी देगा। हम अपने परिचित डाक-बंगलेके आंगनमें आये और मैंने देखा कि पानी तो कबका वापस लौट चुका है। दूर मटियाला पानी बालूके ढेरके समान मालूम होता था। सिर्फ बालूका पट अधिकाधिक खुलता जा रहा था। यदि हम चार-छह ही मिनट पहले पहुंचे होते, तो सूर्यको पानीमें पांव रखते हुअे देख पाते। आसमानमें बादल थे, पर सूर्यके पासका क्षितिज स्वच्छ और सुन्दर था। बादलोंके धब्बे सूर्यकी शोभाको बढ़ा रहे थे। सूर्यको देखकर अपना हमेशाका श्लोक भी बोलना मुझे नहीं सूझा। मैंने केवल अंजलि बनाकर अर्घ्य अर्पण किया और दूर समुद्रसे निकले हुअे सूर्यनारायणका अुपस्थान किया। मनमें मनुका श्लोक प्रकट हुआ:

आपो नारा अिति प्रोक्ता आपो वै नर-सूनवः।
ता यदस्य अयनं जातम् अिति नारायण स्मृतः॥

अिसमें मि० अमृतलालने गीत गाया:

'प्रबल प्रभात स्फुरित तव गगने।'

नीचे बालू पर पहुंचते हमें देर न लगी। बालूके केकड़ोंने अपने-अपने बिलोंमें घुसकर हमारा स्वागत किया।

समुद्रके लौटनेवाले पानीने तुरन्त ही हमें किनारेसे पूछा: 'कहां तक जाना है?' पानीके निमंत्रणका अिनकार भला कैसे किया जाय?

हम आगे बढ़े। बीच बीचमें दो-चार अंगुल गहरा पानी देखकर पैर छलछलाते हुअे चलने लगे। कभी सूर्यको देखनेका मन हो जाता, तो कभी पीछे मुड़कर किनारेकी ओर देखनेका भी हो जाता। थोड़े झरोंके पेड़, अेक-दो कुटियां और लाअिट-हाअुसका झंडा चढ़ानेका अूंचा स्तंभ—अिनसे अधिक आकर्षक वहां कुछ नहीं था। अिससे तो पांवतलेके पानीमें प्रतिबिंबित बादलोंकी शोभा ही अधिक आनंद देती थी। पीछे हटनेवाले पानीकी लहरियोंके पीछे पीछे हम कितने ही दूर चले जाते। किन्तु हम यह बात भूले नहीं थे कि हमारे सामने दूसरा भी कार्यक्रम है, और समयके बन्धनके बाहर यहां अधिक मौज नहीं की जा सकती। किनारेसे कितनी दूर आ गये, अिसका हिसाब लगानेके लिअे कदम गिनते गिनते हम वापस लौटे। दो दो फुटके कदम भरते हुअे हमने अेक हजार कदम गिने और दौड़ते हुअे मछलियोंकी रत्नभूमि तक पहुंचे। अूपर चढ़कर देखते हैं तो लहलह पानी धीरे-धीरे हमारे पीछे आ रहा है और पानीको आता हुआ देखकर कुछ मछुअे बालूके पटमें अपना जाल खंभोंके सहारे फैला रहे हैं!

पुरानी कहानियां समाप्त होती हैं, 'खाया, पिया और राज किया' वाक्यसे। हमारे वर्णन ज्यादातर पूरे होते हैं अिन शब्दोंके साथ: 'प्रार्थना की और बादमें नाश्ता किया।' अेक भाअीने बताया कि आजकल यहां जब फौजी आदमी तोपें छोड़ते हैं तब भूकंपकी तरह सारी धरती कांप अुठती है। तैयार हुआ ढालखानेका माल अच्छी तरह अुतर गया है या नहीं, यह जांचनेका स्थान यहीं है। आवाज चाहे जितनी बड़ी हो, क्रांतिके बाद जिस प्रकार शांतिकी स्थापना होती

है, उसी प्रकार आवाज आकाशमें विलीन हो जाती है और अंतमें नीरवता ही बाकी रहती है।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

मई, १९४१

६०

सार्वभौम ज्वार-भाटा

हरेक लहर किनारे तक आती है और वापस लौट जाती है। यह अेक प्रकारका ज्वार-भाटा ही है। वह क्षणजीवी है। बड़ा ज्वार-भाटा बारह बारह घंटोंके अंतरसे आता है। वह भी अेक तरहकी बड़ी लहर ही है। बारह घंटोंका ज्वार-भाटा जिसकी लहर है, वह ज्वार-भाटा कौनसा है? अक्षय-तृतीयाका ज्वार यदि वर्षका सबसे बड़ा ज्वार हो, तो सबसे छोटा ज्वार कब आता है?

हम जो श्वास लेते हैं और छोड़ते हैं वह भी अेक तरहका ज्वार-भाटा ही है। हृदयमें धड़कन होती है और उसके साथ सारे शरीरमें खून घूमता है, वह भी अेक तरहका ज्वार-भाटा ही है। बाल्यकाल, जवानी और बुढ़ापा भी बड़ा ज्वार-भाटा है। जिस प्रकार ज्वार-भाटेका क्रम विशालसे विशालतर होकर सारे विश्व तक पहुंच सकता है। जहां देखें वहां ज्वार-भाटा ही ज्वार-भाटा है। राष्ट्रोंका ज्वार-भाटा होता है। संस्कृतियोंका ज्वार-भाटा होता है। धार्मिकतामें भी ज्वार-भाटा होता है। हरेक भाटेके बाद ज्वारको प्रेरणा देनेवाले तो हैं रामचंद्र और कृष्णचंद्र जैसे अवतारी पुरुष। समुद्रके ज्वार-भाटेको प्रेरणा देनेवाले चंद्र परसे ही क्या राम और कृष्णको चंद्रकी अुपमा दी गयी होगी? कवि कहते हैं कि दोनोंका रूप-लावण्य आह्लादक था, अिसी परसे अुन्हें चंद्रकी अुपमा दी गयी है। और कवि जो कहते हैं वह ठीक ही होना चाहिये। मगर अैसा क्यों न कहा जाय कि

धर्मके भाटेको रोकनेवाले और नये ज्वारको गति देनेवाले वे दोनों धर्मचंद्र थे, अिसीलिअे अुन्हें चंद्रकी अुपमा दी गअी है? यह कारण अब तक भले न बताया गया हो, मगर आजसे तो हम यही मानेंगे कि धर्म-सागरके चंद्रके नाते ही अुनका नाम रामचंद्र और कृष्णचंद्र रखा गया है।

जलके स्थान पर स्थल और स्थलके स्थान पर जल जो कर सकती है, वह 'अघटित-घटना-पटीयसी' अीश्वरकी माया कहलाती है। अिस मायाका यहां हमें रोज दर्शन होता है। फिर भी हम भक्ति-नम्र क्यों नहीं होते? अद्भुत वस्तु रोज होती है, अिसलिअे क्या वह निःसार हो गअी? मेरे जीवन पर तीन चीजोंने अपने गांभीर्यसे अधिकसे अधिक असर डाला है: हिमालयके सुतुंग पहाड़, कृष्ण-रात्रिका रत्नखचित गहरा आकाश और विश्वात्माका अखंड-स्तोत्र गानेवाला महार्णव। तीन हजार साल पहले या दो हजार साल पहले (हजारका यहां हिसाब ही नहीं) भगवान बुद्धके भिक्षु तथागतका संदेश देश-विदेशमें पहुंचाकर किसी समुद्र-तट पर आये होंगे। सोपारासे लेकर कान्हेरी तक, वहांसे घारापुरी तक और थाना जिले व पूना जिलेकी सीमा पर स्थित नाणाघाट, लेण्याद्रि, जुन्नर आदि स्थानों तक, कार्ला और भाजाके प्राचीन पहाड़ों तक और अिस तरफ नासिककी पांडव-गुफाओं तक शांति-सागर जैसे बौद्ध भिक्षु जिस समय विहार करते थे, अुस समयका भारतीय समाज आजसे भिन्न था। अुस समयके प्रश्न आजसे भिन्न थे। अुस समयकी कार्य-प्रणाली आजसे भिन्न थी। किन्तु अुस समयका सागर तो यही था। अुन दिनों भी यह अिसी प्रकार गरजता होगा। होगा क्या, गरजता था। और 'दृश्यमात्र नश्वर है, कर्म ही अेक सत्य है; जिसका संयोग होता है अुसका वियोग निश्चित है; जो संयोग-वियोगसे परे हो जाते हैं, अुन्हींको शाश्वत निर्वाण-सुख मिलता है।'—यह संदेश आजकी तरह अुस समय भी महासागर देता था। आज वह जमाना नहीं रहा। महासागरका नाम भी बदल गया। मगर अुसका संदेश नहीं बदला। ज्वार-भाटेसे जो परे हो गये, अुन्हींको शाश्वत शांति

मिलनेवाली है। वे ही बुद्ध हैं। वे ही सु-गत हैं। वे सदाके लिअे चले गये। ज्वार फिरसे आयेगा। भाटा फिरसे आयेगा। परन्तु वे वापस नहीं आयेंगे। तथागत सचमुच सु-गत हैं।

बोरडी, ७ मअी, १९२७

६१

अर्णवका आमंत्रण

समुद्र या सागर जैसा परिचित शब्द छोड़कर मैंने अर्णव शब्द केवल आमंत्रणके साथ अनुप्रासके लोभसे ही नहीं पसन्द किया। अर्णव शब्दके पीछे अूंची-अूंची लहरोंका अखंड तांडव सूचित है। तूफान, अस्वस्थता, अशांति, वेग, प्रवाह और हर तरहके बंधनके प्रति अमर्ष आदि सारे भाव अर्णव शब्दमें आ जाते हैं। अर्णव शब्दका धात्वर्थ और अुसका अुच्चारण, दोनों अिन भावोंमें मदद करते हैं। अिसीलिअे वेदोंमें कअी बार अर्णव शब्दका अुपयोग समुद्रके विशेषणके तौर पर किया गया है। खास तौरसे वेदके विख्यात अघमर्षण सूक्तमें जो अर्णव-समुद्रका जिक्र है, वह अुसकी भव्यताको सूचित करता है।

अैसे अर्णवका संदेश आजके हमारे संसारके सामने पेश करनेकी शक्ति मुझे प्राप्त हो, अिसलिअे वैदिक देवता सागर-सम्राट् वरुणकी मैं वंदना करता हूं।

जहां रास्ता नहीं है वहां रास्ता बनानेवाला देव है वरुण। प्रभंजनके तांडवसे जब रेगिस्तानमें बालूकी लहरें अुछलती हैं, तब वहां भी यात्रियोंको दिशा-दर्शन करानेवाला वरुण ही है। और अनंत आकाशमें अपने पंखोंकी शक्ति आजमानेवाले त्रिखंडके यात्री पक्षियोंको व्योममार्ग दिखानेवाला भी वरुण ही है। और वेदकालके भुज्युसे लेकर कल ही जिसकी मृत्यु अुगी है अैसे खलासी तक हरेकको समुद्रका रास्ता दिखानेवाला जैसे वरुण है, वैसे ही नये नये अज्ञात क्षेत्रोंमें

प्रवेश करके नये नये रास्ते बनानेवाले यमराज या अगस्तिको हिम्मत और प्रेरणा देनेवाला दीक्षागुरु भी वरुण ही है।

वरुण जिस प्रकार यात्रियोंका पथ-प्रदर्शक है, अुसी प्रकार वह मनुष्य-जातिके लिअे न्याय और व्यवस्थाका देवता है। 'ऋतम्' और 'सत्यम्' का पूर्ण साक्षात्कार अुसे हुआ है; अिसलिअे वह हरेक आत्माको सत्यके रास्ते पर जानेकी प्रेरणा देता है। न्यायके अनुसार चलनेमें जो सौंदर्य है, समाधान है और जो अंतिम सफलता है, वह वरुणसे सीख लीजिये। और यदि कोअी लोभी, अदूरदृष्टि मनुष्य वरुणकी अिस न्यायनिष्ठाका अनादर करता है, तो वरुण अुसको जलोदरसे सताता है, जिससे मनुष्य यह समझ ले कि लोभका फल कभी भी अच्छा नहीं होता।

अपना मूल्य घट न जाये अिस खयालसे जिस प्रकार परम-मंगल, कल्याणकारी, सदाशिव रुद्ररूप धारण करते हैं, अुसी प्रकार रत्नाकर समुद्र भी डरपोक मनुष्यको अट्टहास्य करनेवाली लहरोंसे दूर रखता है। कोमल वनस्पति और गृह-लंपट मनुष्य अपने किनारे पर आकर स्थिर न हो जायें, अिसलिअे ज्वार-भाटा चलाकर वह सब लोगोंको समझाता है कि तुम लोगोंको मुझसे अमुक अन्तर पर ही रहना चाहिये।

समुद्रके किनारे खड़े रहकर जब लहरोंको आते और जाते देखा, अमावस्या और पूर्णिमाके ज्वारको आते और जाते देखा, और बुद्धि कोअी जवाब नहीं दे सकी तब दिल बोल अुठा, 'क्या अितना भी समझमें नहीं आता? तुम्हारे श्वासोच्छ्वासकी वजहसे जिस प्रकार तुम्हारी छाती फूलती है और बैठती है, अुसी प्रकार विराट सागरके श्वासोच्छ्वासकी यह धड़कन है; अुसका यह आवेग है। जमीन पर रहनेवाले मनुष्यने जो पाप किये और अुत्पात मचाये हैं, अुनको क्षमा करनेकी शक्ति प्राप्त हो अिसीलिये महासागरको अितना हृदयका व्यायाम करना पड़ता है!

जो लहरें दुर्बल लोगोंको डराकर दूर रखती हैं, वही लहरें विक्रमके रसियोंको स्नेहपूर्ण और फेनिल निमंत्रण देती हैं और कहती

हैं: 'चलिये! अिस स्थिर जमीन पर क्यों खड़े हैं? अिस तरह खड़े रहेंगे तो आप पर जंग चढ़ने लगेगा। लीजिये, अेक नाव, हो जाअिये अुस पर सवार, फैला दीजिये अुसके पाल और चलिये वहां जहां पवनका प्राण आपको ले जाय। हम सब हैं तो सागरके बच्चे, किन्तु हमारा शिक्षागुरु है पवन। वह जैसे नचाये वैसे हम नाचते हैं। आप भी यही व्रत लीजिये, और चलिये हमारे साथ।' अिस दिलमें अुमंग होती है, वह अैसे निमंत्रणको अस्वीकार नहीं कर सकता।

बचपनमें सिंदबादकी कहानी आपने नहीं पढ़ी? सिंदबादके पास विपुल धन था, जमीन-जागीर आदि सब कुछ था। अपने प्रेमसे अुसका जीवन भर देनेवाले स्वजन भी अुसके आसपास बहुत थे। फिर भी जब समुद्रकी गर्जना वह सुनता था तब अुससे घरमें रहा नहीं जाता था। लहरोंके झूलेको छोड़कर पलंग पर सोनेवाला पामर है। दिलने कहा: 'चलो!' और सिंदबाद समुद्रकी यात्राके लिअे चल पड़ा। अुसमें काफी हैरान हुआ। अुसे मीठे अनुभवोंकी अपेक्षा कड़वे अनुभव अधिक हुअे। अतः सही-सलामत वापस लौटने पर अुसने सौगंद खाअी कि अब मैं समुद्र-यात्राका नाम तक नहीं लूंगा।

किन्तु अंतमें यह था तो मानवी संकल्प। अिस संकल्पको सम्राट् वरुणका आशीर्वाद थोड़े ही मिला था! कुछ दिन बीते। गृहस्थी जीवन अुसे फीका मालूम होने लगा। रातको वह सोता था, किन्तु नींद नहीं आती थी। लहरें अुसके साथ लगातार बातें किया करती थीं। अुत्तर-रात्रिमें जरा नींदका झोंका आ जाता तो स्वप्नमें भी लहरें ही अुछलतीं और अपनी अंगुलियां हिलाकर अुसे पुकारतीं। बेचारा वहां तक जिद पकड़कर रहे? अनमना होकर जरा-सा घूमने जाता, तो अुसके पैर अुसे बगीचेका रास्ता छोड़कर समुद्रकी सफेद और चमकीली बालूकी ओर ही ले जाते। अंतमें अुसने अच्छे अच्छे जहाज खरीदे, मजबूत दिलवाले खलासियोंकी नौकरी पर रखा, तरह तरहका माल सायमें लिया और 'जय दरिया पीर' कहकर सब जहाज समुद्रमें आगे बढ़ा दिये।

यह तो हुआ काल्पनिक सिंदबादकी कहानी। किन्तु हमारे यहांका सिंहपुत्र विजय तो ऐतिहासिक पुरुष था। पिता उसे कहीं जाने नहीं देता था। उसने बहुत आजिजी की, किन्तु सफल नहीं हुआ। अंतमें ऊबकर उसने शरारत शुरू की। प्रजा त्रस्त हुई और राजाके पास जाकर कहने लगी: 'राजन्, या तो आपके लड़केको देशनिकाला दे दीजिये या हम आपका देश छोड़कर बाहर चले जाते हैं।' पिता बड़े बड़े जहाज लाया। उनमें अपने लड़केको और उसके शरारती साथियोंको बिठा दिया और कहा, 'अब जहां जा सकते हो, जाओ। फिर यहां अपना मुंह नहीं दिखाना।' वे चले। उन्होंने सौराष्ट्रका किनारा छोड़ा, भृगुकच्छ छोड़ा, सोपारा छोड़ा, दाभोळ छोड़ा; ठेठ मंगलापुरी तक गये। वहां पर भी वे रह नहीं सके। अतः हिम्मतके साथ आगे बढ़े और ताम्रद्वीपमें जाकर बसे। वहांके राजा बने। विजयके पिताने अपने लड़केको वापस आनेके लिअे मना किया था; किन्तु उसके पीछे कोअी न जाये, अैसा हुक्म नहीं निकाला था। अतः अनेक समुद्र-वीर विजयके रास्ते जाकर नयी नयी विजय प्राप्त करने लगे। वे जावा और बालिद्वीप तक गये। वहांकी समृद्धि, वहांकी आबहवा और वहांका प्राकृतिक सौंदर्य देखनेके बाद वापस लौटनेकी अिच्छा भला किसे होती? फिर तो घोघाका लड़का सारा पश्चिम किनारा पार करके लंकाकी कन्यासे विवाह करे यह लगभग नियम-सा बन गया।

अिधर बंगालके नदीपुत्र नदी-मुखेन समुद्रमें प्रवेश करने लगे। जिस बंदरगाहसे निकलकर ताम्रद्वीप जाया जा सकता था, उस बंदरगाहका नाम ही उन लोगोंने ताम्रलिप्ति रख दिया। अिस प्रकार ताम्रद्वीप — लंकामें अंग-बंगके बंगाली, अुड़ीसाके कलिंग और पश्चिमके गुजराती अेकत्र हुअे। मद्रासकी ओरके द्रविड़ तो वहां कबके पहुंच चुके थे। अिस प्रकार पूर्व, पश्चिम और दक्षिण भारत अब अपने-अपने अर्णवोंके आमंत्रणके कारण लंकामें अेक हुआ।

भगवान बुद्धने निर्वाणका रास्ता ढूंढ निकाला और अपने शिष्योंको आदेश दिया कि 'अिस अष्टांगिक धर्मतत्त्वका प्रचार दसों दिशाओंमें

करो।' खुद अुन्होंने अुत्तर भारतमें चालीस साल तक प्रचार-कार्य किया। अपना राज्य आसेतु-हिमाचल फैलानेके लिअे निकले हुअे सम्राट् अशोकको दिग्विजय छोड़कर धर्म-विजय करनेकी सूझी। धर्म-विजयका मतलब आजकी तरह धर्मके नाम पर देश-देशांतरकी प्रजाको लूटकर, गुलाम बनाकर, भ्रष्ट करना नहीं था, बल्कि लोगोंको कल्याणका मार्ग दिखाकर अपना जीवन कृतार्थ करनेका अष्टांगिक मार्ग दिखाना था। जो भगवान बुद्ध खुद गैंडेकी तरह अकुतोभय होकर जंगलमें घूमते थे, अुनके साहसिक शिष्य अर्णवका आमंत्रण सुनकर देश-विदेशमें जाने लगे। कुछ पूर्वकी ओर गये, कुछ पश्चिमकी ओर। आज भी पूर्व और पश्चिम समुद्रके किनारों पर जिन भिक्षुओंके विहार पहाड़ोंमें खुदे हुअे मिलते हैं। सोपारा, कान्हेरी, घारापुरी आदि स्थल बौद्ध भिक्षुओंकी विदेश-यात्राके सूचक हैं। अुड़ीसाकी खंड-गिरि और अुदय-गिरिकी गुफायें भी किसी बातका सबूत दे रही हैं।

जिन्हीं बौद्ध-धर्मी प्रचारकोंसे प्रेरणा पाकर प्राचीन कालके ओसावी भी अर्णव-मार्गसे चले और अुन्होंने अनेक देशोंमें भगवद्-भक्त ब्रह्मचारी औशुका संदेश फैलाया।

जो स्वार्थवश समुद्र-यात्रा करते हैं, अुन्हें भी अर्णव सहायता देता है। किन्तु वरुण कहता है, "स्वार्थी लोगोंको मेरी मनाही है, निषेध है। किन्तु जो केवल शुद्ध धर्म-प्रचारके लिअे निकलेंगे, अुन्हें तो मेरे आशीर्वाद ही मिलेंगे। फिर वे महिन्द या संघमित्ता हों या विवेकानंद हों। सेंट फ्रान्सिस जेवियर हों या अुनके गुरु अिग्नेशियस लोयला हों।"

अब अर्णवकी मदद लेनेवाले स्वार्थी लोगोंके हाल देखें। मकरानी लोग बलूचिस्तानके दक्षिणमें रहकर पश्चिम सागरके तटकी यात्रा करते थे। जिसलिअे हिन्दुस्तानकी तिजारत अुन्हींके हाथमें थी। आग्रहके साथ वे अुसको अपने ही हाथोंमें रखना चाहते थे। अतः अेक वरुणपुत्रको लगा कि हमें दूसरा दरियायी रास्ता ढूंढ़ निकालना चाहिये। वरुणने अुससे कहा कि अमुक महीनेमें अरबस्तानसे तुम्हारा जहाज भर-समुद्रमें छोड़ोगे तो सीधे कालीकट तक पहुंच जाओगे। अेक-दो

महीनों तक तुम हिन्दुस्तानमें व्यापार करना और वापस लौटनेके लिये तैयार रहना; जितनेमें मैं अपने पवनको भुलटा बहाकर जिस रास्ते तुम आये उसी रास्तेसे तुम्हें वापस स्वदेशमें पहुंचा दूंगा। यह किस्सा ई० स० पूर्व ५० सालका है।

प्राचीन कालमें दूर दूर पश्चिममें वाकिंग नामक समुद्री डाकू रहते थे। वे वरुणके प्यारे थे। ग्रीनलैंड, आइसलैंड, ब्रिटेन और स्कैन्डिनेवियाके बीचके ठंडे और शरारती समुद्रमें वे यात्रा करते थे। आजके अंग्रेज लोग उन्हींके वंशज हैं। समुद्र किनारे पर स्थित नॉर्वे, ब्रिटेन, फ्रांस, स्पेन और पुर्तगाल देशोंने बारी बारीसे समुद्रकी यात्रा की। जिन सब लोगोंको हिन्दुस्तान आना था। बीचमें पूर्वकी ओर मुसलमानोंके राज्य थे। उन्हें पारकर या टालकर हिन्दुस्तानका रास्ता ढूंढ़ना था। सबने वरुणकी उपासना शुरू की और अर्णवके रास्तेसे चले। कोई गये उत्तर ध्रुवकी ओर, कोई गये अमरीकाकी ओर। चंद लोगोंने अफ्रीकाकी उलटी प्रदक्षिणा की और अंतमें सब हिन्दुस्तान पहुंचे। समुद्र यानी लक्ष्मीका पिता। उसमें जो यात्रा करे वह लक्ष्मीका कृपापात्र अवश्य होगा। जिन सब लोगोंने नये नये देश जीत लिये, धनदौलत जमा की। किन्तु वरुणदेवका न्यायासन वे भूल गये। वरुणदेव न्यायका देवता है। उसके पास वीरुध भी है, पुण्यप्रकोप भी है। जब उसने देखा कि मैंने जिनको समुद्रका राज्य दिया, किन्तु जिन लोगोंने राजाके उचित न्याय-धर्मका पालन नहीं किया, तब वरुणराजाने अपना आशीर्वाद वापिस ले लिया और जिन सब लोगोंको जलोदरकी सजा दी। अब ये देश हिन्दुस्तान और अफ्रीकासे जो संपत्ति लाये थे, उसका उपभोग आपसमें लड़नेके लिये करने लगे हैं और अपने प्राणोंके साथ वह सारी संपत्ति जलके उदरमें पहुंचा रहे हैं। समुद्र-यान हो या आकाश-यान हो, अंतमें उसे समुद्रके जलके उदरमें पहुंचना ही है। अब वरुणराजा क्रुद्ध हुये हैं। उन्हें अब विश्वास हो गया है कि सागरसे सेवा लेनेवालोंमें यदि सात्विकता न हो तो वे संसारमें उत्पात मचानेवाले हो जाते हैं। अब तक उन्होंने विज्ञानशास्त्रियों और ज्योतिषशास्त्रियोंको, विद्यार्थियों और लोकसेवकोंको

समुद्र-यात्राकी प्रेरणा दी थी। अब वे हिन्दुस्तानको नये ही किस्मकी प्रेरणा देना चाहते हैं: हिन्दुस्तानके सामने अेक नया 'मिशन' रखना चाहते हैं। क्या अुसे सुननेके लिअे हम तैयार हैं?

हम पश्चिम समुद्रके किनारे पर रहते हैं। दिन-रात पश्चिम सागर*का निमंत्रण सुनते हैं। अब तक हम बहरे थे। यह संदेश हमारे कानों पर जरूर पड़ता था; किन्तु अंदर तक नहीं पहुंच पाता था। अब यह हालत नहीं रही है। युरोपकी महाप्रजाने हमारे अूपर राज्य जमाकर हमें मोहिनीमें डाल रखा था। अब यह मोहिनी अुतर गयी है। अब हमारे कान खुल गये हैं। संसारके नक्शेकी ओर हम नयी दृष्टिसे देखने लगे हैं। अब हम समझने लगे हैं कि महासागर भूखंडोंको तोड़ते नहीं, बल्कि जोड़ते हैं। अफ्रीकाका सारा पूर्व किनारा और कलकत्तासे लेकर सिंगापुर आल्बनी (ऑस्ट्रेलिया) तकका पूर्वकी ओरका पश्चिम किनारा हमें निमंत्रण देता है कि "अीश्वरने तुम्हें जो ज्ञान, चारित्र्य और वैभव दिया है, अुसका लाभ यहांके लोगोंको भी पहुंचाओ।" अेक ओर अफ्रीका है, दूसरी ओर जावा है, बाली है, ऑस्ट्रेलिया है, टास्मानिया है और प्रशांत महासागरके असंख्य टापू हैं। ये सब अर्णवकी वाणीसे हमें पुकार रहे हैं। जिन सब स्थानोंमें सागरसे प्रेरणा लेकर अनेक मिशनरी गये थे। किन्तु वे अपने साथ सब जगह शराब ले गये, वंश-वंशके बीचका अूंच-नीच भाव ले गये। अीसा मसीहको भूलकर सिर्फ अुनका बायबल ले गये। और जिस बायबलके साथ अुन्होंने अपने अपने देशका व्यापार चलाया। अर्णव अुन्हें जरूर ले गया था। किन्तु वरुण अुन पर नाराज हुआ है। हम भारतवासी प्राचीन कालमें चीन गये, यवनोंके देश ग्रीस तक गये, जावा और बालीकी ओर गये। हमने 'सर्वे सन्तु निरामयाः' की

* हमारे अिस पड़ोसीको हम 'अरबी समुद्र' के नामसे पहचानते हैं, यह विचित्र बात है! विलायतसे आनेवाले गोरे लोग अुसे 'अरबी समुद्र' भले कहें। हमारे लिअे तो वह अम्बवी समुद्र या पश्चिम सागर है। यही नाम हमें चलाना चाहिये।

संस्कृतिका विस्तार किया। किन्तु हमने उन स्थानोंमें अपने साम्राज्यकी स्थापना करनेकी दुर्बुद्धि नहीं रखी। दूसरोंके मुकाबलेमें हमारे हाथ साफ हैं। अतः वरुणका हमें आदेश हुआ है — अर्णव हमें आमंत्रण दे रहा है और कह रहा है, "दूसरे लोग विजय-पताका लेकर गये; तुम अहिंसा धर्मकी तिरंगी अभय-पताका लेकर जाओ और जहां जाओ वहां सेवाकी सुगंध फैलाते रहो। शोषणके लिये नहीं, बल्कि पिछड़े हुओं लोगोंके पोषण और शिक्षणके लिये जाओ। अफ्रीकाके शालिग्राम वर्णके तुम्हारे भाई तुम्हें पुकार रहे हैं। पूर्वकी ओरके केसरी सुवर्ण वर्णके तुम्हारे भाई तुम्हारी राह देख रहे हैं। जिन सब लोगोंकी सेवा करनेके लिये जाओ और सब लोगोंसे कहो कि अहिंसा ही परम धर्म है। ऊंचनीच भाव, अभिमान, अहंकार जैसी हीन वृत्तियोंको जिस धर्ममें स्थान नहीं हो सकता। भोग और ऐश्वर्य, दोनों जीवनके जंग हैं (जीवनको दूषित करनेवाले हैं)। संयम और सेवा, त्याग और बलिदान, यही जीवनकी कृतार्थता है। यह धर्म जिन लोगोंने समझा है, वे सब निकल पड़ो। पूर्व सागर और पश्चिम सागरके बीचमें दक्षिणकी ओर घुसनेवाला हजारों मीलका किनारा तैयार करके हिन्दुस्तानको हिन्द महासागरमें जो स्थान दिया गया है, वह समुद्र-विमुख होनेके लिये हरगिज नहीं है। वह तो अहिंसाके विश्वधर्मका परिचय सारे विश्वको करानेके लिये है।"

यूरोपके महायुद्धके अंतमें दुनियाका रूप जैसा बदलनेवाला होगा वैसा बदलेगा। किन्तु असंख्य भारतीय प्रवास-वीर अर्णवका आमंत्रण सुनकर, वरुणसे दीक्षा लेकर, धीरे-धीरे देश-विदेशमें फैलेंगे, इसमें कोई संदेह नहीं है। सागरके पृष्ठ पर हमारे अनेकानेक जहाज डोलते हुये देख रहा हूं। उनकी अभय-पताकाओंको आकाशमें लहराते देख रहा हूं और मेरा दिल झूल रहा है। अर्णवके आमंत्रणको अब मैं खुद शायद स्वीकार नहीं कर सकता, फिर भी नौजवानोंके दिलों तक उसे पहुंचा सकता हूं, यही मेरा अहोभाग्य है। वरुण-राजाको मेरा नमस्कार है! जय वरुणराजकी जय!!

- अक्तूबर, १९४०

६२

दक्षिणके छोर पर

१

धनुष्कोटीमें मैं पहले-पहल आया अुसको अब करीब बीस साल हो चुके हैं। जहां तक मुझे स्मरण है, श्री राजाजीने मेरे साथ श्री वरदाचारीजीको भेजा था। वरदाचारी ठहरे रामायणके भक्त। रास्ते भर रामायणकी ही रसिक बातें चलीं। हम धनुष्कोटी पहुंचे और वरदाचारीजीकी सनातनी आत्मा श्राद्ध करनेके लिअे तड़पने लगी। अेक योग्य ब्राह्मणका पता लगाकर वे अिस विधिमें मशगूल हो गये और हम लोग आमने-सामने गरजनेवाले रत्नाकर और महोदधिकी भव्य शोभा देखनेके लिअे स्वतंत्र हो गये।

दो नदियोंका संगम या प्रयाग अनेक स्थानों पर देखनेको मिलता है। संगमका काव्य आर्योंके हृदय या मस्तिष्क तक पहुंचा कि तुरन्त अुन्हें वहां यज्ञ-याग करनेकी सूझी ही है। यज्ञ-यागके लिअे अैसे प्रकृष्ट या प्रशस्त स्थानको वे प्र-याग कहते हैं।

जब दो नदियां मिलती हैं तब अधिकतर अंग्रेजी Y के जैसी आकृति बनती है। महाराष्ट्रमें कहाड़के पास दो नदियां आमने-सामने आकर मिलती हैं और बादको समकोणमें अेक ओर बहती हैं। अुनकी अंग्रेजी T जैसी पांच किनारोंकी आकृति बनती है। दो नदियां आमने-सामने आकर अेक-दूसरेको गले लगाती हैं, अिसलिअे अुसे प्रीति-संगम कहते हैं।

गंगासे जहां यमुना मिलती है वहां पर भी लगभग T के जैसी ही आकृति बनती है। सिर्फ अुसमें गंगा सीधी जाती है और यमुना किसी आग्रहके बिना और कुछ संभ्रम (घुमाव)के साथ गंगासे मिलती है।

यमुना प्रथम तो 'आत्मनि अप्रत्यय' दिखाअी देती है। किन्तु गंगासे मिलते ही दोनों बहनें अुल्लासके अुन्मादमें आ जाती हैं; और

अिस डरसे कि यदि अेक-दूसरेमें झट ओतप्रोत हो गयीं तो मिलनेका आनंद मिट जायगा, दूर दूर तक दोनों कम-ज्यादा मिला ही करती हैं। धर्मकवियोंने अिस स्थानको 'प्रयाग-राज' जैसा गौरवभरा नाम यों ही नहीं दिया है।

किन्तु जब कोअी नदी सागरसे मिलती है तब यह सागर-सरिता-संगमका अुन्माद शिव-पार्वतीके मिलनके समान अद्‌भुत-रम्य होता है। जिसका वर्णन भक्तवृत्तिसे या संतानकी भाषामें हो ही नहीं सकता। मनुष्यको यह भूल कर कि वह मनुष्य है, और अपनी शक्तिसे भी अधिक अूंचे अुड़कर सागर-सरिताके अिस अ-समान संगमका वर्णन करना होगा।

मगर धनुष्कोटीमें तो विष्णु और महादेवके मिलनके समान दो समुद्रोंका सागर-संगम है। रत्नाकर मानार (Manar)की ओरसे आता है। महोदधि पाल्क (Palk) की सामुद्रधुनीका प्रतिनिधि है। अिन दोनोंको झट कैसे मिलने दिया जाय? पृथ्वीने मानो राम-धनुषकी कमानदार कोटि बीचमें आड़ी डालकर अेक कोस तक अिन दोनोंको मिलनेसे रोका है। अिधर रत्नाकर अुछलता है तो अुधर महोदधि गरजता है और पवनकी सूचनाके अनुसार वे अपने-अपने प्रवाहको दौड़ाते हैं।

और अिन दोनोंका सलाह-मशविरा कैसा अनोखा होता है! महोदधि यदि हरा रंग धारण करता है तो रत्नाकर पूरा नीला हो जाता है; और जब रत्नाकर पर हरा रंग चढ़ता है तब महोदधि आकाशको भी दीक्षा दे सके अैसा गहरा नीला रंग बहाने लगता है।

जब तक अुन्हें लगता है कि मिलनेकी अिच्छा होने पर भी मिला नहीं जा सकता, तब तक दोनों क्रोधसे तमतमाते रहते हैं। क्षण क्षणमें नया क्रोध जताते हैं। और अेक बार मिलनेकी छूट मिली कि अैसी शांति और सहजता चेहरे पर दिखाकर दोनों मिलते हैं, मानो मिलनेकी दोनोंको कोअी अुत्सुकता ही नहीं थी। मिलना था अिसलिये मिल लिये! व्याकुलताको मानो दूर ही छोड़ दिया।

जहां दोनोंका प्रत्यक्ष मिलन होता है, वहां तो सरोवरकी शांति ही फैली रहती है। और इसमें आश्चर्य क्या है? अद्वैतमें आनंदकी परिसीमा ही हो सकती है, उन्मादको स्थान कैसे हो सकता है?

धनुष्कोटीके छोर पर खड़े खड़े अेक बार गोल चक्कर लगाकर देख लेना चाहिये। जहांसे चलकर आते हैं उतनी जमीनकी जीभको छोड़ दें तो सब ओर महासागरकी विशाल जलराशिका क्षितिजके साथ बनता वलय ही देखनेको मिलता है।

रंगून या कराची जाते समय बीच समुद्रमें चारों ओर समुद्र-वलय और क्षितिज-वलय मिलकर अेक हो जाते हैं, उसकी मस्ती कुछ कम नहीं होती। मनमें यह कल्पना आये बिना नहीं रहती कि पानीके इस क्षितिज-विस्तार पर आकाशका उतना ही बड़ा किन्तु अनंत गुना ऊंचा ढक्कन रखा हुआ है, और इस बड़े भारी डिब्बेमें अेक छोटे जहाज पर बैठे हुअे 'तुच्छ' हम मोतियोंकी तरह संगृहीत किये गये हैं। ज्यों-ज्यों उस परिस्थिति पर हम अधिक सोचते हैं, त्यों-त्यों मनमें अपनी तुच्छताका अधिकाधिक भान हमें होने लगता है।

धनुष्कोटीकी बात इससे अलग है। पृथ्वीके साथ हम अनुबद्ध हैं, पैर तले मजबूत जमीन है और यह जमीन धीरे धीरे फैलकर अेक विशाल देश और खंडकी ओर ले जा सकती है—यह खयाल हमें न सिर्फ आश्वासन देता है, बल्कि प्रचंड आत्म-विश्वासके अधिकारी बनाता है। धनुष्कोटीके छोर पर मैं जितनी बार पहुंचा हूं, उतनी बार मुझे मनुष्यके आत्म-गौरवका भान विशेष रूपसे हुआ है। इसीलिअे वहां अपनी 'भूमिका' पर स्थिर रहकर मैं सागरकी उपासना कर सका हूं।

जब जब मैं मंडपम् छोड़कर पुल परसे पामबन गया हूं, तब तब जिस प्रदेशका 'रघुवंश' में लिखा हुआ कालिदासका वर्णन मुझे याद आया है। कालिदासकी वर्णन-शक्ति मुझमें भले न हो,

किन्तु अिस बारेमें मेरे मनमें तनिक भी संदेह नहीं कि मैं अुनका समान-धर्मा हूं। मैं 'कवियशःप्रार्थी' थोड़े ही हूं कि कालिदासके साथ अपना नाम देनेमें संकोच करूं? मुझ पर हंसनेवाले टीकाकारोंको मैं अेक टीकाकार कविका ही वचन सुना दूंगा: 'पर्वते परमाणौ च पदार्थत्वं प्रतिष्ठितम्।'

मगर मैं जब धनुष्कोटीके पास आता हूं, तब कालिदासको भूल जाता हूं और लंकामें किस तरह पहुंचा जाय अिस अुधेड़बुनमें पड़े हुअे हनुमानकी दृष्टिसे दक्षिणकी ओर देखने लगता हूं। जिन जिन वानर-यूथ-गुरुओंने सेतुकी कल्पना की और अुसे कार्यरूपमें परिणत किया, अुनकी दृष्टिसे तलाअीमानारकी दिशामें देखने लगता हूं। और अिस प्रकार कल्पनाको दौड़ाते दौड़ाते जब थक जाता हूं, तब चारों धामकी यात्रा पूरी करके रामेश्वर पहुंचे हुअे वृद्ध यात्रियोंका हृदय धारण करके कल्पना करता हूं: "अेक पूर्ण जीवन लगभग पूरा करके मैंने भारत-वर्षके जितने ही विशाल जीवन-प्रदेशकी यात्रा कर ली। अब वापस लौटकर क्या करना है? अिहलोकका काम ज्यों त्यों पूरा कर लिया। सफलता मिली हो या विफलता, वही जीवन फिरसे नहीं बिताना है। अब तो यह सारा जीवन पीठके पीछे रहे यही अच्छा है। मुड़कर अुसकी ओर देखनेका स्मरण-रस भी अब नहीं रहा है। अब तो साम्प-रायका, परजीवनका परमार्थकी दृष्टिसे विचार करनेमें ही श्रेय है।" जब अिस प्रकारकी विचार-परंपरा मनमें अुठती है, तब मन अेक प्रकारसे बेचैन हो अुठता है, और दूसरे प्रकारसे परम शांतिका अनुभव करता है।

अबकी बार जब मैं धनुष्कोटी आया, तो परंपराके अनुसार मैंने महोदधिमें स्नान किया। महोसागरसे क्षमा भी मांगी। किन्तु मनमें तो अेक ही विचार आया कि यहां अब फिरसे नहीं आना होगा। सीलोन कभी जाना है। मगर धनुष्कोटीके जो दर्शन किये, वे अंतिम हैं। यह विचार मनमें क्यों आया, कहना मुश्किल है। किन्तु अिसमें संदेह नहीं कि मनमें तृप्तिका विचार अिसी बार अुत्पन्न हुआ।

२

रामेश्वर-धनुष्कोटीके बाद कन्याकुमारी। अेक स्थान यदि भव्य है तो दूसरा भव्यतर है। यहां दो नहीं बल्कि तीन सागरोंका संगम है। संगमका यह वायुमंडल अभेद-भक्तिके आनंदके समान है। 'यहां हिन्द महासागर पूरा होता है,' 'यहां बम्बईका यानी पश्चिम समुद्र शुरू होता है' और 'यहां बंगालका पूर्व समुद्र शुरू होता है'—यों न तो यहां कह सकते हैं, न मान सकते हैं। यहां भारतवर्षका दक्षिणका छोर है और तीनों सागर अुसको तीनों ओरसे लिपटे हुअे पड़े हैं। संगम तो हम कहते हैं। सागरोंके लिअे यहां संगमके जैसा कुछ भी नहीं है। संगमकी कल्पना हमारी है। सागरोंसे यदि पूछेंगे तो वे कहेंगे कि जिस भेदका अस्तित्व ही नहीं है, अुसके मिट जानेकी बात भी भला कैसे करें? 'सं-गम' की कल्पना ही बिलकुल गलत है। कहना ही हो तो अुसको 'सं-भवन' कहिये। जहां पूर्ण अेकता है वहां किसी भी हिस्सेको चाहे जो नाम दे सकते हैं। नाम और रूपका द्वैत यहां फीका पड़ जाता है, धुल जाता है, और फिर शुद्ध अद्वैत ही अपनी अखंड मस्तीमें गर्जना करता है।

कन्याकुमारीमें मैंने जिस भव्यताका अनुभव किया है, वैसी भव्यता हिमालयको छोड़कर और गांधीजीके जीवनको छोड़कर अन्यत्र कहीं भी अनुभव नहीं की है।

कन्याकुमारीका महत्त्व मैंने पहले-पहल गांधीजीके ही मुंहसे सुना था। वे शायद ही किसी दृश्यका वर्णन करते हैं। किन्तु कन्याकुमारीसे आश्रममें लौटनेके बाद अुन्होंने मेरे सामने अिस स्थानका अुत्साहपूर्वक वर्णन किया था।

सन् १९२७ में जब मैंने अुनके साथ दक्षिण हिन्दुस्तानकी यात्रा की थी, तब नागर-कोविल पहुंचते ही अुन्होंने अपने मेजबानसे खास तौर पर सिफारिश की कि 'काकाको कन्याकुमारी जाना है; मोटरका बंदोबस्त कर दीजिये।' अुस दिन अुन्होंने दो बार पूछताछ की कि काकाके कन्याकुमारी जानेका प्रबंध हुआ या नहीं।

पू० बाको ललचानेमें मुझे कोई कठिनाई नहीं हुई। दूसरे दो भाई भी हमारे साथ हो गये।

जिस दृश्यकी प्रशंसा पू० बापूजीके मुंहसे सुनी थी, वह दृश्य देखनेकी मेरी भुत्कंठा बहुत बढ़ गयी थी। यहां पहुंचनेके बाद तो मुझका नशा ही चढ़ गया। उसके बाद जितनी बार यहां आया हूं, वही नशा मुझ पर चढ़ा है।

और आश्चर्यकी बात तो यह है कि जिस नशेके साथ ही मनमें ब्रह्मचर्यके बारेमें भी गहरे विचार उठे बिना नहीं रहते। देवी कन्याकुमारीका यह स्थान है, जिसीलिये ये विचार मनमें उठते हों, ऐसी बात नहीं है। मैंने तो ऐसा कभी नहीं माना। स्वामी विवेकानंदने जिस स्थान पर वही नशा अनुभव किया था, यह जाननेके कारण भी यहां आते ही मेरे मनमें ब्रह्मचर्यके विचार नहीं उठते। गांधीजीकी भव्यताकी सभ्य साधनाके साथ भी ये विचार संलग्न नहीं हैं। किन्तु ये विचार स्वयंभू रूपसे मनमें उठते ही हैं।

जिस समय (ता० ५-१-१९४७) तीसरी दफा मैं वहां आया हूं। आते ही सबसे पहले समुद्रकी लहरें, आकाशके बादल, पूर्व-पश्चिमके क्षितिज और पीछेकी पहाड़ियां—सब स्नेहियोंको मैंने देख लिया।

आज पौषका महीना है और शुक्ल पक्षकी त्रयोदशी है। आज चंद्र रोहिणीमें या मृगमें होना चाहिये। हम मंजिल-व-मंजिल मोटरकी रफ्तारसे कन्याकुमारीकी ओर जब दौड़ रहे थे, तभीसे चंद्र आकाशमें ऊंचा चढ़कर जिस ताकमें बैठा था कि कब सूर्यास्त हो और कब मैं आकाश पर अधिकार करूं। संध्याको अपना वर्ण-विलास फैलानेके लिये चंद्रने अधिक अवकाश नहीं दिया। फिर भी जितना अवकाश मिला उतनेमें ही संध्याने रंगोंके अनेक सुन्दर दृश्य दिखला दिये।

सूर्यास्त देखनेकी हमारी बड़ी अभिलाषा थी। किन्तु पश्चिमके बादलोंने कुछ अलाहना देते हुये हमसे कहा, 'क्या किसीका अस्त देखनेकी भुत्कंठा रखी जा सकती है? वास्तवमें सूर्यका अस्त होता ही नहीं है। आपकी दृष्टिसे ही प्रकाशका अस्त होता है। उसके लिये

सूर्यको देखनेके बदले उदय या अस्तके अवसरों पर वह जो अेक-रूपता धारण करता है उसके रंगको ही क्यों नहीं देख लेते?'

उदये सविता रक्तो रक्तश्चास्तमने तथा।
संपत्तौ च विपत्तौ च महताम् अेक-रूपता॥

यह श्लोक बादलोंने भी बचपनमें कंठस्थ कर लिया होगा!

सूर्य जब क्षितिजके नीचे गया, तब बादलोंके गवाक्षोंमें से सूर्य-प्रकाशकी लाल किरणें ऊपर तक फैलीं। और ऊपर फैलीं उससे भी अधिक दक्षिण तथा उत्तरकी ओर फैल गयीं। गवाक्ष अधिक नहीं थे, किन्तु जो थे वे बहुत बड़े थे। अतः किरणें अैसी दीखती थीं मानो लाल रंगके पट्टे खींचे गये हों। और आकाश अपने वैभवमें प्रतिष्ठित मालूम होता था। मैंने माना था उससे कुछ अधिक समय तक यह शोभा कायम रही; जिससे उसीको देखते रहनेकी अभिलाषा रखने-वाला मन कुछ तृप्त-सा हुआ।

जहां कुमारीके न-हुअे-विवाह-के अक्षत बिखरे हुअे हैं, उस ओरकी शिला पर हम लहरोंका तांडव देखनेके लिअे जा बैठे। देखते ही देखते संध्या पश्चिममें विलीन हो गयी और चंद्रका राज्य आरम्भ हुआ। बादलोंने आकाशको घेर लेनेका मनसूबा अभी पूरा नहीं किया था, जितनेमें दक्षिणकी ओरके बादलोंमें से अेक बड़ा सितारा चमकने लगा। यह दूसरा कौन हो सकता था? स्वयं अगस्ति महाराज दक्षिण-पूर्व दिशा पर आरूढ़ हो रहे थे। सौभाग्यसे यमुना और याममत्स्य भी तिरछी रेखामें आकाशमें दिखाअी दिये। दक्षिण दिशाका ध्यान करनेका फल मिला। संतुष्ट हुअी आंखोंसे हमने उत्तरकी ओर दृष्टि डाली। वहां आकाशमें देवयानी (कैसियोपिया) का M ऊपर तक चढ़ा हुआ था। उसके नीचे लगभग क्षितिजके पास अेक ताड़के जितनी ऊंचाअी पर उसी ताड़के पत्तेका आसन बनाकर ध्रुवकुमारने हमें अपना सुभग दर्शन दिया। देवयानी और ध्रुवको देखते देखते दृष्टि पश्चिमकी ओर मुड़ी; वहां हंसने बताया कि श्रवण तो कबके अस्त हो गये हैं। अतः पूर्वकी ओर देखा। ब्रह्महृदयने कहा कि ब्रह्ममंडलका विस्तार जितनेमें हो वहीं होना चाहिये।

हमने फिर दक्षिणकी ओर मुंह किया। अगस्ति अितना अूंचा नहीं आया था कि हम अुनकी कुटियाकी कल्पना कर सकें। किन्तु व्याध तो दिखना ही चाहिये। व्याध चाहे जितना तेजस्वी हो, तो भी बादलोंके मोटे स्तरको वह किस तरह वींध सकता है? फिर हमने अपनी दृष्टिसे बादलोंका स्तर भेदनेका प्रयत्न किया। संदेह हुआ कि बादलोंका जो हिस्सा कुछ विशेष अुजला मालूम होता है अुसीके पीछे व्याध होना चाहिये। बादलोंके अुस पार व्याधका प्रकाश और अिस पार हमारी दृष्टि — दोनोंके हमलेसे बादल पतले हुअे; और जिस प्रकार पतले परदेके पीछेसे नाटकके पात्र दिखाअी देते हैं, अुसी प्रकार व्याध दिखाअी देने लगा। देखते ही देखते व्याध पूर्ण रूपमें सामने आया और अुसके बाद व्याध, अगस्ति, यमुना और याम्यमत्स्यकी शोभा तेलुगु अक्षरोंकी शिरोरेखा जैसी दिखाअी देने लगी।

अभी मृग दिखाअी देगा, रोहिणी चमकेगी, प्रश्वन झांकेगा, अैसी आशासे हम आकाशकी ओर ताक रहे थे, अितनेमें रजनीनाथने अपने आसपास कुंडल फैलाया और अिस सुवर्ण-वलयके साथ आकाशमें बादल भी बढ़े। आकाशमें चंद्रिका फैली हो तो भी क्या? रातके बादल हमारा ध्यान बहुत आकर्षित नहीं कर सकते थे। अतः हमने अत्यन्त काले समुद्रके गंभीर जल पर नाचते सफेद फेनकी चमकती हुअी रेखाओंकी पंक्तियां देखकर ही आंखोंको तृप्त किया।

समुद्रके जल पर और आकाशके बादलों पर विविध रंगोंके नाच जी भरकर देखनेके बाद यह गंभीरता अितनी तृप्तिदायक मालूम हुअी कि अिस तृप्तिके साथ स्थितप्रज्ञका आदर्श गानेमें और संध्याकी अुपासना करनेमें अनोखा आनंद आया। यह सागर पूर्ण है। अुस पर फैला हुआ आकाश पूर्ण है। अिन दोनोंके दर्शनसे जीवनकी संध्याके समय हृदयमें अुद्भूत हमारा शांति-प्रधान आनंद भी पूर्ण है। अब अिस त्रिविध पूर्णतामें से कुछ भी निकाल लीजिये या कुछ भी अुसमें जोड़ दीजिये, पूर्णत्वमें कोअी कमी नहीं होगी। पायी हुअी पूर्णता कम हो सकती है, क्योंकि वह सच्ची पूर्णता नहीं है। सोची हुअी पूर्णता स्थायी है; क्योंकि अिस विरासतके साथ ही

हम पैदा हुये थे। वहां तक पहुंचनेमें विलंब हुआ यही दोष है। जो पूर्णता साथी वह आत्मसात् हो गयी। अब वहांसे चढ़ने-उतरनेका प्रश्न ही नहीं है।

जो विराट् है, अनन्त है, बृहत्तम है, उसके साथ अेकरूप होनेके बाद जो जीवन स्वाभाविक रूपमें जिया जा सकता है, वही सच्चा ब्रह्मचर्य है। वासनाको दबा देने पर वह फिर कभी उछल सकती है। वासनाको मार डालने पर वह भूतकी तरह हैरान कर सकती है। वासनाको तृप्त करनेके उपाय किये जायं तो व्यसनकी तरह वह सदाके लिअे चिपक जायगी और बढ़ेगी। वासनाका स्वागत किया जाय तो दिमागमें वह मंडराने लगेगी। वासनाका तो मुकाबला करके उससे पूछना चाहिये कि तू कौन है? मित्रके रूपमें शत्रुता करने आयी है या जीवनको समृद्ध करनेकी साधनाके रूपमें आयी है? वासना जब तक स्पष्ट और खुली नहीं होती, तब तक ही वह मोहक मालूम होती है। मोह अस्पष्टताका होता है, अेकांगी दर्शनका होता है। वासनाके वश होनेमें मुख्य मदद अंधेपनकी ही होती है। वासनाका अंधा विरोध भी उसको मजबूत ही बनाता है। दो आंखोंसे देखकर हम वासनाको पहचान नहीं सकते। उसकी और महादेवजीकी तरह तीन आंखोंसे देखना चाहिये। फिर उसकी शत्रुता अपने-आप खतम हो जाती है।

वासनाका सामना केवल तपस्यासे नहीं हो सकता; सच तो यह है कि प्रज्ञाके स्थिर होनेके बाद वासनाका विरोध ही नहीं करना पड़ता।

जीवनमें जब तक हमें अपूर्णताका भान है, तब तक हम यह नहीं कह सकते कि ब्रह्मचर्य सिद्ध हुआ है। अपूर्णता स्वयं बाधक नहीं है। बालकमें अपूर्णता कम नहीं होती। वह निर्मल भावसे जीवन जीता रहता है और उसकी अपूर्णता स्वाभाविक क्रमसे कम होती जाती है। अपूर्णताका भान हुआ कि तुरंत मनुष्य पामर बन जाता है। सागरकी तरह पूर्ण होनेके बाद लहरें चाहे जितनी उछलती-कूदती रहें, पानीका जत्था चाहे जहां दौड़ता रहे; किन्तु सागरको बहनेकी आवश्यकता नहीं रहती। वह 'आत्मनि तृप्तः' है, इसीलिअे उसकी अपनी मर्यादा

छोड़नेकी जरूरत नहीं होती। अुसको अपनी मर्यादाका भान ही नहीं है; अिसीलिअे अनायास, अभावित रूपमें मर्यादाका पालन अुसके द्वारा होता रहता है। यही सच्चा ब्रह्मचर्य है।

प्रार्थना पूरी की और पिछले चार दिनके संस्मरण लिखनेकी अूर्मि जागी। कुछ लिखनेके बाद ही नींद आ सकी।

दूसरे दिन ब्राह्म-मुहूर्तमें भूतकी तरह मैं समुद्र-तट पर जा बैठता, किन्तु बारिशने रोक दिया। प्रार्थनाके समय समुद्र-तट पर जाते-जाते फिरसे आकाशकी ओर देखा। दक्षिण दिशा कितनी साफ, सुन्दर और पारदर्शक थी कि पूर्वकी ओर जमे हुअे बादलों पर मनमें गुस्सा आया। अुन्होंने यदि दक्षिणका अनुकरण किया होता तो अुनका क्या बिगड़ जाता?

दक्षिण दिशामें त्रिशंकु बराबर खड़ा था। जय-विजय अुसके द्वारपालोंका काम कर रहे थे। 'कैरीना' या झूठा क्रॉस अेक ओर जाकर पड़ा था। अुन दोनोंके बीच कुछ अैसे सुन्दर तारे चमक रहे थे, जो वर्धा या बंबअीके लोगोंको जीवनमें कभी भी देखनेको नहीं मिलते।

अुत्तरकी ओर सप्तर्षि पूर्ण नम्रताके साथ फैले हुअे थे। ध्रुव रातकी तरह करीब करीब जमीनको छूने जा रहा था। स्वाति और चित्रा सिर पर चमक रहे थे। हस्त कुछ टेढ़ा हो गया था। पश्चिमकी ओर चंद्र अस्त हो चुका था, किन्तु चंद्रिका अभी अपना अस्तित्व बता रही थी। पुनर्वसुकी नावमें से केवल प्रश्वन ही बादलोंको भेदकर झांक रहा था। अकेला तारा अेकाकी अपने स्वभावके अनुसार प्रश्वन और मघासे किट्टी करके दूर जा कर खड़ा हो गया था। मघाका हंसिया फाल्गुनीके चौकोनको संभाल रहा था। पूर्वकी ओर विशाखाके नीचे गुरु और शुक्र शोभायमान थे। और ये दोनों काफी अूंचे चढ़ आये थे, अिसलिअे पतली अनुराधा, टेढ़ी ज्येष्ठा और नुकीला मूल अुनको सहारा दे रहा था। गुरु और शुक्र जब पारिजातके पास आते हैं, तब अिन तीनोंकी तुलना सुन्दर होती है। और मंगलके अुनके पास न होनेका दुःख नहीं होता।

मुझे हिन्दुस्तानकी एक ज्योतिर्मयी व्याख्या सूझी है। कन्याकुमारीके दक्षिणमें यदि हम जायें तो ध्रुव दिखाई नहीं देता; और कश्मीरके उत्तरकी ओर जायें तो दक्षिण दिशामें अगस्ति दिखाई नहीं देता। अतः मैंने यह व्याख्या बनाई है कि जिस प्रदेशमें ध्रुव और अगस्ति दोनों दिखाई पड़ते हैं वही हमारा भारत देश है।

प्रार्थनाके बाद, सब प्राणियोंको जो उदर-भरण नामक यज्ञकर्म करना पड़ता है उसे हमने भी पूर्ण किया और नहानेके लिये तैयार किये हुये कुंडमें उतरे। नये ढंगसे बनाये हुये इस कुंडमें समुद्रका पानी निरन्तर आता रहता है। बाधा कुंड चार फुट गहरा है। बाकीका आठ फुट गहरा है। कपड़े बदलनेके लिये दो कमरे भी बनाये गये हैं। इस तरहकी सुंदर व्यवस्था धार्मिक पुण्यको कम करती है, ऐसा नहीं मानना चाहिये। नहाकर हम कन्याकुमारीके दर्शन करने गये। यह मंदिर त्रावणकोरके हिन्दू राज्यमें है, अतः हरिजनोंके लिये वह बहुत समयसे खुला कर दिया गया है। मंदिरके द्वार पर सरकारका घोषणापत्र लगा है कि जो जन्म या धर्मसे हिन्दू हैं, वे ही इस मंदिरमें प्रवेश कर सकते हैं।

मंदिरका स्थापत्य सादा किन्तु प्रशस्त है। पत्थरके खंभों पर छतके तौर पर पत्थर ही आड़े रखनेके कारण अन्दरसे सारा मंदिर तहखानेकी तरह मालूम होता है। देवीकी मूर्ति पूर्व दिशाकी ओर देखती है। किन्तु उस ओरका बाहरका दरवाजा बंद होनेसे देवीको समुद्रका दर्शन नहीं होता, न समुद्रको देवीका दर्शन होता है! बेचारे बंगाल-सागरने कभी यह दावा नहीं किया होगा कि वह जन्म या धर्मसे हिन्दू है! और समुद्र होनेके कारण मर्यादाका अतिलंघन करके भी वह मंदिरमें प्रवेश कर नहीं सकता!!

कन्याकुमारीकी कथा बड़ी करुण है। यहांके किनारे पर बिखरी हुई अक्षतके जैसी सफेद मोटी रेत, माणिकके चूर्ण जैसी लाल रेतका गुलाल और स्याहीचूसके तौर पर क्षुपयोगमें लायी जानेवाली काली रेत—ये सब प्राकृतिक चीजें इस करुण कहानीको और भी करुण बनानेमें मदद करती हैं। संसारके सभी महाकाव्य यदि करुणान्त होते हैं,

तो हिन्द महासागरकी अधिष्ठात्री देवी कन्याकुमारीकी कथा भी कल्पान्त हो यही अुपयुक्त है। कारण इसमें जो गहराअी होती है, अुसीके द्वारा जीवनकी प्रतीति हो सकती है।

दुःखं सत्यं सुखं माया; दुःखं जन्तोः परं धनम्।
. . . . दुःखं जीवन-हृद्गतम्॥

छिछला जीवन मानता है कि सुख ही जीवनकी अनुभूति है, जीवनका सार-सर्वस्व है। अिस भ्रमको मिटानेका काम दुःखको सौंपा गया है। दुःखसे परास्त न होकर जो मनुष्य जीवनकी साधनाके तौर पर दुःखको स्वीकार करता है, वही सुख-दुःखसे परे होकर जीवन-समृद्धिका आनंद भोग सकता है। यह आनंद सुख-दुःखातीत होनेके कारण सागरके जैसा गंभीर और आकाशके जैसा अनंत होता है।

अिस आनंदके भाग्यमें किसीके साथ विवाह-वद्ध होना नहीं लिखा है!

दिसम्बर, १९४७

६२

कराची जाते समय

[अेक पत्रसे]

बम्बअीके जागरणका ऋण अदा करनेके लिअे मैं जल्दी सो गया था। सुबह चार बजे अुठा। स्टीमर डोलती हुअी आगे बढ़ रही थी। यहां कहीं भी जमीन दिखाअी नहीं देती। अूपर आकाश और नीचे पानी। पानी पर मनुष्यका कितना विश्वास है! जमीनके नजरसे ओझल रहते हुअे भी दिनरात वह समुद्र पर यात्रा कर सकता है। संस्कृतमें पानीको जीवन कहते हैं। 'प्यासके समय जो पेटमें अुतरता है वह है जीवन; और तूफानके समय जिसके पेटमें हमें अुतरना पड़ता है वह है मरण।' अैसे पानीके लिअे हमारे पूर्वजोंने दो भिन्न शब्दोंकी कल्पना नहीं की।

प्रार्थनाके लिअे साथियोंको जगाअूं या नहीं, अिसका विचार थोड़ी देर मनमें चला। फिर मनके साथ तय किया कि जहाजके हिंडोलेमें सोये हुअे अिन बच्चोंको जगानेके बजाय सबकी ओरसे अकेले ही धीमी आवाजमें प्रार्थना कर लेना अच्छा है। लेकिन अिसको सामुदायिक प्रार्थना कैसे कहें? मनमें आया, चलो समीपके कैनवासके मोटे परदे हटाकर देख लूं कि प्रार्थनामें साथ देनेके लिये कोअी तारे जागते हैं या नहीं? अनुराधाने कहा कि 'हम अभी अभी जागे हैं। कृष्णचंद्रके आनेकी तैयारी है।'

अितनेमें अपने दो सींग अूंचे करके चंद्र बोला, 'तैयारीको कोअी सींग अुसने बाकी नहीं है। मैं आ ही गया हूं।' अुसने बायें हाथमें पारिजात धारण किया था; अिससे वह विशेष सुंदर मालूम होता था। देखते ही देखते अभिजितने क्षितिज परसे सिर अूंचा किया और बादमें स्वाति, अभिजित और पारिजातके त्रिकोणका अेक बड़ा पिरामिड पूर्व-क्षितिज पर खड़ा हो गया। अिन सबको साथमें लेकर मैंने अपनी प्रार्थना पूरी की।

अितनेमें चंद्र कुछ अूपर आया और हमारे जहाजसे लेकर चंद्रके पांवों तक अेक सुनहरी पट्टी पानी पर चमकने लगी। मुझे लगा, चंद्रलोक जानेके लिये यह कितना आसान और सीधा रास्ता है! जहाजसे अुतरकर चलनेकी ही देर है। किन्तु पाश्चात्य लोग कहते हैं कि चंद्रलोकमें पागल लोग ही रहते हैं। अतः फिर सोचा कि अितनी मेहनतके बाद यदि वहां अपने समान-धर्मी और जाति-भाअी ही मिलनेवाले हों, तो यह तकलीफ क्यों अुठाअी जाय?

* * *

मुझे आकाशके बादल बहुत पसंद हैं। छोटा हो या बड़ा, सफेद हो या काला, पूरा हो या टूटा-फूटा, बादल मुझे आनंद ही देता है। मगर रातके बादल मुझे बिलकुल पसंद नहीं। अुनका आकार और रंग आकर्षक भले ही हो, मगर तारोंके बीच वे भूतोंकी तरह — या हत्यारोंकी तरह — लुकते-छिपते जाते हैं, यही मुझे पसंद नहीं है।

अुषःकालके पहले आकाश कितना सात्त्विक रमणीय मालूम होता था! चांदनीमें समुद्रकी लहरें — लहरें काहेकी? नाजुक वीचिमाला

था हल्का स्मित करने पर सागरदादाके चेहरे पर पड़ी हुआी शिकनें —ठीक गिनी जा सकें अितनी स्पष्ट थीं। मगर अिन विघ्नसंतोषी बादलोंने बीचमें आकर सब कुछ चौपट कर दिया।

हम जोरोंसे आगे बढ़ रहे थे। पूर्वकी ओर, यानी हमारे दाहिनी ओर, जमीन दिखाअी दे रही है या केवल भ्रम है, अिस अुधेड़बुनमें मैं पड़ा था। अितनेमें यकायक दीये दिखाअी दिये। विश्वास हुआ कि हम श्रीकृष्णकी द्वारिकाके समीप पहुँचे हैं। थोड़े अंतर पर दीयोंका दूसरा झुंड चमक रहा था। अुसमें अेक दीपस्तंभका प्रकाश किसी वृद्धकी स्मृतिकी तरह बीच-बीचमें स्पष्ट हो अुठता था। अुसके बाद अेक मिलकी चिमनीसे धुअेंकी अेक शांत नदी क्षितिजके साथ समानांतर बहने लगी।

आकाशके तारोंको देखा और तेरा स्मरण हुआ। पता नहीं, सुबहकी अुषाके साथ तेरी क्या दोस्ती है? हम मिले अुससे पहले ही बोरडीमें मैंने पूर्व दिशाको अनसूया नाम दे दिया था। 'जीवननो आनंद' (जीवनका आनन्द) में 'अनसूया प्राची' वाली टिप्पणी अवश्य देख लेना।

* * *

३०–१२–'३७

६४

समुद्रकी पीठ पर

[कलकत्तासे रंगून जाते हुअे]

शामके चार बजे होंगे। हमारा जहाज रवाना हुआ। धूप सौम्य हो गअी थी। मंद-मंद हवा बह रही थी। पानी पर नाचनेवाली सूर्यकी चमकमें पीलापन आने लगा था। लाल लाल 'बोया' से कतराकर जहाज आगे बढ़ने लगा। दोनों किनारों पर जहाज दिखाअी देते थे; छोटी छोटी नावें दिखाअी देती थीं। सेंट विलियमका किला छोड़कर हम आगे बढ़े। कुछ बंदरोंमें छोटे-मोटे जहाज बनाये जा रहे थे। दोनों ओरकी जमीन पानीकी सतहसे बहुत अूँची न थी। अतः दोनों ओर दूर दूरका प्रदेश दिखाअी देता था। किन्तु चित्तको तृप्ति हो

अैसा कोली दृश्य न था। अिस तरहकी बड़ी नदियां जहां समुद्रसे मिलने जाती हैं, वहांके किनारे बहुत गंदे होते हैं। ज्वार-भाटेके कारण भींगे हुअे कीचड़में दौड़धूप करनेवाले केकड़ोंके सिवा और कुछ दिखायी ही नहीं देता।

ज्यों ज्यों हम आगे बढ़ते गये, नदी चौड़ी होती गअी। दूरके किनारे पर जब सफेद बालू दिखाअी दी, तभी जाकर मनको कुछ शांति महसूस हुअी। सुन्दरबनका प्रदेश पार किया; रात होनेसे पहले हम डायमंड हार्बरके पास आ पहुंचे। हमारा जहाज अब लहरोंके साथ डोलने लगा। जरा देर तक जहाजके डेक पर खड़े रहकर हमने हिन्दुस्तानके किनारेको लुप्त होते देखा। किन्तु बादमें तो चक्कर आने लगे। अतः खाना खाकर हम सो गये। सोनेके पहले प्रार्थनाके अंतमें गिरधारीने रवीन्द्रनाथका 'आगुनेर परशमणि छोंआओ प्राणे' यह सुन्दर गीत गाया। अुसे सुननेके लिअे कअी लोग जमा हो गये। और अुस गीतके प्रतापसे हमारे बिस्तर अच्छी तरह फैलानेमें किसीको अीर्ष्या नहीं हुअी।

सुबह सबसे पहले मैं जागा। अरुणोदय भी नहीं हुआ था। आकाशमें जिस प्रकार चांद चलता है, अुसी प्रकार जहाज अकेला अकेला पानी काटता हुआ चला जा रहा था। अुस समयकी शांति कैसी अनोखी थी! जहाजके पेटमें यंत्ररूपी हृदय यदि अपनी धड़कन न सुनाता, तो बाहरकी शांति जितनी सुन्दर न मालूम होती। चारों ओर समुद्र मानो लोहे या सीसेके ठंडे रसके समान फैला हुआ था। मैं जहाजके छत पर जा खड़ा हुआ। ज्यों ज्यों जहाज डोलता था, त्यों त्यों पानी अूपर चढ़ता या नीचे जाता था। चारों ओर लहरें ही लहरें! लहरें जब अेक-दूसरेसे टकराती हैं तब अुनमें से फेन निकलता है। अंधेरेमें भी यह फेन चमकता है, और जिस चमककी टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओंसे बिचित्र प्रकारकी आकृतियां तैयार होती हैं। जहाज जब डोलता है, तब अुसका असर हमारे दिमाग पर होता है। अुसमें यदि हम लहरोंके अखंड और सनातन नृत्यकी लीला निहारने लगें तब तो अुसका नशा ही चढ़ने लगता है।

आगे जाकर लहरें अुठनी बंद हो गयीं। सागरका हृदय जगह जगह अूपर अुठता और नीचे बैठता था। सामान्यतः लहरोंको अूपर अुठते और फूटते हुअे देखनेमें अेक तरहका आनन्द मालूम होता है। किन्तु अुसमें अुतना गांभीर्य नहीं होता। ध्वनिकाव्यका रहस्य जिस प्रकार शब्दोंमें स्पष्ट करनेसे कम हो जाता है, अुसी प्रकार लहरोंके फूटनेसे होता है। किन्तु जब लहरें अंदर ही अंदर अुछलती हैं और समा जाती हैं, तब अुनका सूचन विविध, अनंत और अस्पष्ट या अव्यक्त रहता है। अंधेरा होते हुअे भी हवा जब साफ होती है तब व्योम और सागरका मिलन-वर्तुल हमारा ध्यान खींचे बिना नहीं रहता। क्षितिजके पास लहरोंका सवाल ही नहीं होता। समुद्रके कालेपनकी तुलनामें अंधेरा आकाश भी अुजला मालूम होता है। वेदकालके अृषियोंको जिस प्रकार जीवन-रहस्य दिखाअी दिया होगा, अुसी प्रकार क्षितिज रातके समय दिखाअी देता है। अृषियोंको अनंत कालके आध्यात्मिक तत्त्व अनंत आकाशमें चमकनेवाले तारोंके समान स्पष्ट मालूम होते हैं, जब कि पार्थिव जीवनका भविष्यकाल अुनकी आर्ष दृष्टिके सामने भी सागरकी वारि-राशिके समान अज्ञात और अव्यक्त ही रहता है।

अिस प्रकार ध्यान और कल्पनाका खेल चल रहा था, अितनेमें

'आंबारेर गाये गाये परश तव
सारा रात फोटाक तारा नव नव।'

यह शोभा कम होने लगी और अरुणोदयने पूर्व दिशा निश्चित कर दी। मैंने यह काव्य देखनेके लिअे जीवतराम (कृपालानी) को जगाया। किन्तु अुनके अुठनेके पहले ही गिरधारी जागा और कहने लगा, 'मुझे बताअिये, क्या है, मुझे बताअिये।' मैं भला अुसको क्या बताता? वहां कोअी पक्षी या जहाज थोड़े ही था जो अंगुली दिखाकर कुछ बताता? मैंने अुससे कहा, 'वह जो लाल आकाश दिखाअी पड़ता है अुसे देखो। थोड़ी देरमें वहां सूरज अुगेगा।'

अब समुद्रने अपना रंग बदला। पूर्वकी ओरसे मानो लाल जामुनी रंगका प्रपात बहता चला आ रहा था। और आश्चर्य तो

यह था कि पश्चिमकी ओर भी अुसी रंगकी प्रतिक्रिया हुअी थी। हां, पश्चिमकी ओर समुद्रसे अधिक आकाशने ही अुस रंगको ग्रहण कर लिया था। पूर्वकी प्रसन्नता बढ़ने लगी। लाल रंगमें चमक आ गअी। कुंकुमका सिंदूर बना, और सिंदूरसे सुवर्ण बना। बम्बअीकी ओर रहने-वाले हम लोग पश्चिम किनारेके समुद्रमें होनेवाले सूर्यास्तकी शोभा कअी बार देख सकते हैं, किन्तु सागर-मंथनसे निकली हुअी लक्ष्मीके समान अुदय हो रही अुषाकी वर्धमान शोभा देखनेका आनंद अनोखा ही होता है। आकाश ज्यों ज्यों हंसने लगा, समुद्रके मुख पर आनंद और लज्जाकी रेखाअें बढ़ने लगीं, मानो दो हमअुम्र नौजवानोंके बीच विनोद चल रहा हो।

अेक ओर प्रभातका यह विकास देखनेके लिअे दिल ललचाता था, तो दूसरी ओर जहाजके डोलनेसे सिरमें चक्कर आने लगे थे। मनमें आया, थोड़ी देरके लिअे लहरें रुक जायं और जहाज स्थिर हो जाय तो कितना अच्छा हो। मगर समुद्रकी लहरें और मनुष्यके मनोरथ कभी रुके हैं? अूबकर आरामकुर्सी पर लेटनेका मैं सोच रहा था, अितनेमें बालसूर्यका बिम्ब पानीमें नहाकर बाहर निकला। अुगते हुअे सूर्यके बिंब पर अेक विशिष्ट तरलता होती है: मानो सूर्य ठंडे पानीमें से कांपता हुआ बाहर निकल रहा हो। और पानीमें जो प्रकाश बिखरा होता है वह अैसा दीखता है मानो सूर्यका धुला हुआ अंगराग हो। सूर्यका बिंब पूरा बाहर निकला कि मैंने सविता-नारा-यणका ध्यानमंत्र गाया: 'ध्येयः सदा सवितृ-मंडल-मध्यवर्ती' इत्यादि।

जीवतरामसे अिस प्रकारकी गंभीरता जरा भी सहन नहीं होती। वे यकायक बोल अुठे, 'बस कीजिये। कैसी वानर-भाषा बोल रहे हैं!' मैंने अुनसे कहा, 'आप गलती कर रहे हैं। यह आपकी भाषा नहीं है, यह तो संस्कृत है।' विनोदमें भक्तिका अुभार नष्ट हो गया। प्रार्थना ज्यों त्यों पूरी की। और जहाजमें रोज जिसमें से पार होना पड़ता है अुस भयंकर दिव्यकी चिन्ता करने लगे। शौचके लिअे जहाजके डेक परसे नीचे जाना होता है। नीचेका हिस्सा वैसे भी हमेशा गंदा रहता है। किन्तु सुबहके समय तो वह मानो नरकके

साथ मुकाबला करता है। वहांकी हवा गंदी और खारी होती है। जगह जगह लोग कै कर देते हैं। बॅजिनकी भापसे निकलनेवाली अेक तरहकी दुर्गंध और खलासियोंके रसोड़ेसे ठीक अुसी समय निकली हुअी प्याज और मछलीकी बदबू — दोनोंके मिश्रणमें से पार होकर शौचकूपमें प्रवेश करनेकी अपेक्षा समुद्रमें कूदना मुझे कम कष्टदायी मालूम होता। हमारे बसकी बात होती तो तीन दिन तक हम शौच जाना ही छोड़ देते। किन्तु —

जा तो आये, पर हम तीनोंके चेहरे अैसे हो गये थे कि अेक-दूसरेकी ओर देखनेकी भी अिच्छा नहीं होती थी। कोअी टोली झगड़ा करनेके लिअे जाये और काफी मार खाकर वापस लौटे, तब जिस प्रकार अपने सर्वसाधारण अनुभवका कोअी जिक्र तक नहीं करता, अुसी प्रकार हमने अिस दिव्यका नाम तक नहीं लिया।

मैंने गिरधारीसे कहा, 'चलो, खाने बैठो।' अुसने कहा, 'मुझे भूख नहीं है।' जीवतरामने भी खानेसे अिनकार कर दिया। मैंने कहा, 'भले आदमी, धूप बढ़ेगी तब चक्कर आने लगेंगे। फिर खाना असंभव हो जायगा। अभी ठंडा पहर है। पेट भरकर खा लो। धूपके पहले सब हजम हो जायगा।' गिरधारी पूछने लगा, 'कसरत किये बिना हजम हो जायगा?' मैंने जवाब दिया, 'हम सब लोगोंकी ओरसे यह जहाज ही कसरत कर रहा है। अतः तुम अुसकी फिक्र मत करो।' गिरधारी मेरी बात समझ नहीं पाया। वह मेरा मुंह ताकता रहा। हम तीनोंने पेटभर खा लिया। तीनोंमें जीवतराम पक्के थे। अुन्होंने केवल रसवाले फल ही खाये। मैंने अपनी पसंदकी चीजें खायीं और अूपरसे अेक पूरा नींबू चूस लिया। बेचारे गिरधारीको अुत्तम केलोंका स्वाद लग गया। अुसने पेट भर कर केले ही खाये। लेकिन अेक दो घंटोंके भीतर ही वह अितना पछताया कि बादमें सारी यात्रामें अुसने केलेका कभी नाम तक नहीं लिया।

दोपहर हुअी। मैं अपनी कमजोरी जानता था। मैंने अपना बिस्तर बिछाकर हाथ-पांव फैला दिये। हाथमें दूसरा नींबू लिया और आंखें मूंदकर लेट गया। मद्रासकी ओरका कोअी जहाज

कलकत्ता जा रहा होगा। अुसे दूरसे देखकर लोग कहने लगे, 'वह देखो जहाज, वह देखो जहाज।' अितनेमें दोनों जहाजोंने 'भों भों...' करके अेक-दूसरेका अभिवादन किया। किन्तु मैंने तो आंखें मूंदकर कल्पनाके द्वारा ही यह सारा दृश्य देख लिया। गिरधारीसे रहा नहीं गया। वह चटसे अुठकर खड़ा हो गया। ज्यों ही वह खड़ा हुआ, अुसके केलोंने पेटमें रहनेसे अिनकार कर दिया। वह बबड़ा गया। मैंने लेटे लेटे ही अुसे पानी दिया। अदरकका टुकड़ा दिया। थोड़ा शांत होनेके बाद वह मेरे बिस्तर पर आकर लेट गया। किन्तु अेक बार बिलोया हुआ पेट क्या तुरन्त शांत हो सकता है?

हम डेक पर लेटे थे। वहां अेक ओर अूपरकी कैबिनमें दो देशी अीसाअी बैठे थे। अुनमें से अेकको कै होने लगी। वह ज्यों-ज्यों जोरसे कै करता था, त्यों-त्यों अुसका मित्र अुसका मजाक अुड़ाता था। 'वन हिगिन्स, अुलटी करोअिंग' आदि मित्रके अुद्गार अुसकी कै से भी अधिक जोरोंसे निकलने लगे। गिरधारी घड़ीभर हंसता था और फिर पछताता था।

अैसा करते करते शाम हो गयी। शामको मुझमें कुछ जान आयी। हमने फिरसे कुछ खा लिया; किन्तु वह किसीको अनुकूल नहीं आया। शामकी शोभा मैंने बैठे बैठे ही निहारी। लोग कहते थे, 'अब हम काले पानीमें आये हैं।' और सचमुच पानीका रंग डर पैदा करे अितना काला था। लोग कहते, 'अब अंदमान दिखाअी देगा।' कोअी कहता, 'नहीं, हमारा जहाज अुससे काफी दूर है। वह टापू नहीं दिखाअी देगा।'

संध्याकी शोभा कुछ निराली ही थी। प्रातःकालके रंग और संध्याके रंग समान नहीं होते। अुदय और अस्त समान हो ही कैसे सकते हैं? अुदय वर्धमान बाल्यकाल है, जब कि अस्त विजयी वीरके निधनके समान शोकपूर्ण होता है। अुषाके मुख पर मुग्ध हास्य होता है, जब कि संध्याकी मुखमुद्रा पर क्षणजीवी अुल्लास और विलास होता है। समुद्रके रंग फिर बदलने लगे। सूर्य अस्त हुआ और देखते ही देखते धीरे धीरे तारोंका पारिजात खिलने लगा।

जहाज पर बिजलीके सौम्य दीये तो कभीके चमकने लगे थे। मुझे ये दीये बचपनसे ही बहुत पसंद हैं। वे इतने सौम्य होते हैं कि समीपका सब कुछ दिखाओ देता है; फिर भी वे आंखोंको चौंधिया नहीं पाते। अंधेरेको नष्ट करके अपना साम्राज्य जमानेकी महत्त्वाकांक्षा उनमें नहीं होती। अंधेरेके साथ मीठा समझौता करके 'तुम भी रहो, हम भी रहेंगे' की जीवन-नीति वे पसंद करते हैं। शहरोंके बिजलीके दीये नये अध्यापककी तरह अपना सारा प्रकाश उंड़ेल देना चाहते हैं, जहाजके दीये योगियोंके समान 'आत्मन्येव संतुष्ट' होते हैं।

बिस्तर पर लेटे लेटे हम इन दीयोंकी बातें कर रहे थे। इतनेमें हमारा जहाज 'भों ओं. . .' करके रंभाया। मैं तुरंत समझ गया कि उसने कहीं दूसरी भैंस देखी है। इतनेमें दूरसे रंभानेकी आवाज आओ। मैं उठकर बैठ गया। रातके समय समुद्रमें जहाज देखना मुझे बहुत पसंद है। बिजलीकी बत्तियोंकी अेक लम्बी पंक्ति और ऊंचे मस्तूल पर लगे दो लाल बड़े दीये भूतकी तरह जब अंधेरेमें दौड़ते हैं, तब अैसा लगता है मानो हमने परियोंके संसारमें प्रवेश किया है। जहाज ज्यों-ज्यों अपना रुख बदलता जाता है, त्यों-त्यों सामनेका दृश्य भी नये नये ढंगसे खिलता जाता है। और जहाज जब दूर चला जाता है और लुप्त होने लगता है, तब तो यह दृश्य नींदके कारण चलनेवाली स्मृति-विस्मृतिके बीचकी आंखमिचौनीके समान ही मालूम होता है। आकाशके तारोंकी ओर देखता देखता मैं सो गया।

तीसरे दिन सुबह पानी बरसने लगा। जहाजके अेक अीसाअी कारकुनने आकर हम सबको नीचे जानेको कहा। लोग अिसका कारण तुरन्त न समझ पाये। अुसने कहा, 'अेक बड़ा बवंडर आग्नेय दिशासे अिस ओर आता मालूम हो रहा है।' अिसको साअिक्लोन कहते हैं। साअिक्लोनमें यदि जहाज फंस जाय तो वह बहुत बड़ी आफत मानी जाती है। बहुतसे जहाज साअिक्लोनमें फंसकर डूब गये हैं। अुस कारकुनने कहा, 'यदि यहीं डेक पर आप लोग बैठे रहेंगे तो शायद आंधीसे अुड़ भी जायं।' लोग डरके मारे अेकके बाद अेक नीचे चले गये। हमने नीचे जानेसे साफ अिनकार कर दिया। अुसने हमें समझानेकी

कोशिश की। हमने कहा, 'आंधी आयेगी तो अिन बड़े बड़े रस्सोंको पकड़कर पड़े रहेंगे।'

'किन्तु बारिशसे आप भींग जायेंगे।'

'भींग जायेंगे तो सूख भी जायेंगे।'

हमारी जिद देखकर वह चला गया। पानी आया। अच्छा खासा आया। आंधीका घेरा तीन चार मीलका होता है। सौभाग्यसे वह हमारे जहाज तक नहीं आयी। धूमकेतुकी तरह अुसके चारों ओर पूंछें होती हैं। अैसी अेक पूंछका तमाचा हमारे जहाजको भी कुछ लगा। हम काफी भींग गये। अतः नीचे जानेके बदले अूपर कैबिनमें जा बैठे।

आखिर रंगून आया। बंदरगाह पर अुतरनेवाले लोगोंकी और अुन्हें लेने आये हुअे अिष्टमित्रोंकी भीड़का पार नहीं था। डॉ० प्राणजीवन मेहता खुद हमें लेनेके लिअे बंदरगाह पर आये थे। हमने देखा कि रंगूनमें जगह जगह रबरके रास्ते हैं। अतः गाड़ियां दौड़ती हैं तब सिर्फ घोड़ोंके टापोंकी ही आवाज सुनाअी देती है।

अुस दिन हमें अैसा लगता रहा, मानो हमारे पांवोंके नीचेकी जमीन डोल रही है। अेक दिनके आरामके बाद ही दिमागसे तीन दिनका समुद्र अुतर सका।

मार्च, १९२७

६५

सरोविहार

हमें रंगूनके समीपका प्रख्यात सरोवर देखना था। युरोप खंडकी आकृतिके जैसा बिल सरोवरका आकार भी टेढ़ा-मेढ़ा है। अुसमें कअी खाड़ियां, बंदरीप तथा जलडमरूमध्य हैं। रंगून कोंकणके ही अक्षांश पर है तथा समुद्रके पास है, लिहाजे वहांकी वनश्री भी मुझे कोंकणके जितनी ही खुशनुमा मालूम हुअी। चारों ओर बड़े बड़े वृक्ष। सृष्टिने मानो अपना सारा ही वैभव दिखानेके लिअे बाहर निकाला हो। वनश्री और जलदेवताका जहां मिलन होता है, वहां लक्ष्मी बिना बुलाये आ ही जाती है। हम तीसरे पहर अुस सरोवरके पास आ पहुंचे। काफी समय तक अुसके किनारे किनारे घूमे। सरोवरका सौंदर्य हर कोनेसे भिन्न भिन्न प्रकारका मालूम होता था। कुछ रूप-गर्वित वृक्ष सारे समय सरोवरके दर्पणमें अपना दर्शन किया करते थे।

घूमते-घूमते हमारा धीरज खतम हुआ। सरोवर तो अीश्वरने नौका-विहारके लिअे ही बनाया है। हबसी जॉनको बुलाकर हम अुसकी नावमें जा बैठे और बिना किसी अुद्देश्यके अनेक दिशाओंमें घूमते रहे। बीचमें अेक टापू था। अुसपे मुलाकात किये बिना भला वापस कैसे लौटा जा सकता था? टापू पर अेक सुंदर आराम-गृह बना हुआ था। अुसकी सीढ़ियोंकी दोनों दीवारों पर सीमेंटके बनाये हुअे दो भयानक अजगर लम्बे होकर पड़े थे। नाव चलाते चलाते अेक मोड़ लेते ही श्वेडेगॉन पॅगोडा अपने अूंचे शिखरके साथ दर्शन देता है। आगरेके किलेसे ताजमहल देखनेमें जो मजा आता है, वैसा ही मजा यहां मालूम होता था। वस्तुके समीप जाने पर अुसका सम्पूर्ण सौंदर्य प्रकट होता है; किन्तु अुसका काव्य तो दूरसे ही खिलता है। यह खूबी जाननेसे ही क्या चांद, सूरज तथा अगणित सितारे हमसे कितने दूर दूर विचरते होंगे?

शाम हुअी लिहाजे हमें मजबूरन वापस लौटना पड़ा। सरोवरने शकुंतलाकी तरह हमें वापस आनेका निमंत्रण तो दिया ही था। अतः दूसरे

दिन नहानेका कार्यक्रम तय करके हमारी अेक बड़ी टोली वहां जानेके लिअे रवाना हुअी। वहां पहुंचने पर हमारे साथके लोगोंने बताया, 'गोरे लोगोंके बोटिंग क्लबके कारण सरोवरमें नहानेकी मनाही है।' सुबह होते ही जिस प्रकार कुमुद बंद हो जाता है, अुसी प्रकार मेरा अुत्साह सिट गया। अितनी मेहनतके बाद रसपूर्ण सरोवरमें तैरनेके आनंदसे वंचित रहना भला किसको पसंद होगा? मगर हमारे साथी सत्याग्रही थोड़े ही थे! वे खुलेआम कानूनका विरोध करनेके बजाय चुपचाप कानून तोड़ना ही अधिक पसंद करनेवाले थे। अुन्होंने अेक अैसा अेकान्त स्थान बहुत पहलेसे ढूंढ़ लिया था, जहां न तो गोरे लोगोंकी नावें पहुंच सकती थीं, न अुनकी दृष्टि। मैंने यहां आते ही देखा कि अिस स्थानका सौंदर्य अन्य स्थानोंसे कतअी कम नहीं है। अेकांतमें चोरीसे नहानेमें कुछ अनोखा ही आनन्द आया। गिरधारीको तैरना नहीं आता था, अुसका श्रीगणेश भी यहीं हुआ। पानीमें तैरते रहनेका अनुभव पहले-पहल होने पर मनुष्यको जो आनंद होता है, अुसको यदि कोअी अुपमा देनी हो तो अंडा तोड़कर बाहर आये हुअे पक्षीके आनंदकी ही दी जा सकती है। धूप तेज हो गअी फिर भी गिरधारी बाहर आनेका नाम नहीं लेता था। आधा घंटा और पानीमें रहने देनेके लिअे वह मुझसे अंग्रेजीमें विनती करने लगा। अुसे न मानता तो वह बंगलामें विनती करता, मानो भाषा बदलनेसे विनतीमें अधिक जोर आता हो। अुसको मैं नाराज कैसे करता? हमने मनसोक्त जल-विहार किया।

यदि ययातिको भी यौवनका आनंद छोड़ना पड़ा, तो फिर हमारे तैरनेके आनंदका अंत हुआ अिसमें आश्चर्य ही क्या? थके हुअे किन्तु हल्के बदन हम वापस लौटे। रास्तेमें अनन्नासके बगीचे थे। अैसा मालूम होता था मानो दूर दूर तक कंटीले अनन्नासोंके फव्वारे ही जमीनमें से अूपर अुड़ रहे हों। अनन्नासका अितना बड़ा बगीचा मैंने पहले कभी नहीं देखा था। अतः पेटमें भूख होते हुअे भी और यहां अनन्नासकी प्राप्तिकी कोअी अुम्मीद न होते हुअे भी काफी देर तक हम वहां देखते खड़े रहे।

मार्च, १९२७

६६

सुवर्णदेशकी माता ऐरावती

ऐरावती कहें या ऐरावती? मैं समझता हूं कि वीरा नामकी घास परसे ही नदीका नाम वीरावती पड़ा होगा। जिसके किनारेकी पौष्टिक घास खाकर मदमत्त बने हुये हाथीको ऐरावत कहते होंगे; या फिर सिंधके ऐरावत जैसी महाकाय और गजगतिसे चलनेवाली सिंध नदीको देखकर किसी बौद्ध भिक्षुको लगा होगा, 'चलो, सिंधीको हम ऐरावती कहें।'

परन्तु ऐतिहासिक कल्पना-तरंगोंमें बहना बैठे-ठाले लोगोंका काम है। मुसाफिरको यह नहीं पुसाता।

ऐरावती नदी हिन्दुस्तानमें होती तो संस्कृत कवियोंने उसके बारेमें ऐरावती जितना ही लंबा-चौड़ा काव्य-प्रवाह बहा दिया होता। ब्रह्मदेशके कवियोंने अपनी जिस माताके विषयमें अनेक काव्य यदि लिखे हों तो हमें पता नहीं। ब्रह्मी भाषा न तो हमारी जन्मभाषा है, न शास्त्रभाषा या राजभाषा है। अपने पड़ौसीकी भाषा सीखनेकी प्रवृत्ति हममें है ही कहां? बरसों तक परदेशमें रहें तो हम वहांकी भाषा बोल सकते हैं, किन्तु अन्य भाषाके साहित्यका आस्वाद लेनेका श्रम हम कभी नहीं करते। कोई अंग्रेज ब्रह्मी भाषा सीखकर ब्रह्मी कविताका अंग्रेजी अनुवाद हमें दे दे तो ही शायद हम उसे पढ़ेंगे।

कोई भी देश ऐरावती जैसी नदी पर गर्व कर सकता है या उसका कृतज्ञ हो सकता है। ब्रह्मदेशमें रंगूनसे उत्तरकी ओर ठेठ मंडाले तक हम ट्रेनमें यात्रा कर चुके थे। वहांसे नजदीकके अमरापुरा जाकर हमने ऐरावतीके प्रथम दर्शन किये। यदि पहलेसे हमें मालूम हो जाता कि अमरापुराके समीप प्रचंड बौद्ध मूर्तियां हैं, तो हमने भगवान बुद्धके दर्शनसे ही ऐरावतीके विहारका आरंभ किया होता।

यहां पर भी नदीका पाट खूब चौड़ा है। नदीका प्रवाह धीरोदात्त गजगतिसे चलता है। ऐसी नदीकी पीठ पर नाव या 'वाफर' (स्टीमर) में बैठकर यात्रा करना जीवनका अेक बड़ा सौभाग्य ही है।

अमरापुरासे मंडाले वापस जाकर हम 'वाफर' में बैठे। समुद्रकी यात्रा अलग है और नदीकी यात्रा अलग। नदीमें लहरें नहीं होतीं। दोनों ओरका किनारा हमारा साथ देता रहता है। और हमें अैसा नहीं मालूम होता कि जीवनका नाम धारण किये हुअे किन्तु जान लेनेवाले अेक महाभूतके शिकंजेमें हम फंसे हुअे हैं। पृथ्वीके गोलेकी हवामें चलनेवाली सनातन यात्राके समान ही नदीकी यात्रा शांत और आह्लादक होती है। आज भी जब अिस अैरावतीकी यात्राका मैं स्मरण करता हूं, तब मुझे द्रौपदीके जैसी भामिनी नर्मदाकी चाणोद-कर्नाली तरफकी यात्रा, सीताके जैसी ताप्तीकी सागर-संगम तककी यात्रा, काशी-तल-वाहिनी भारतमाता गंगाकी यात्रा, मथुरा-वृंदावनकी कृष्णसखी कालिंदीकी यात्रा, कश्मीरके नंदनवनमें पार्वती वितस्ताकी यात्रा और वनश्रीके पीहर-सदृश गोमंतक प्रदेशकी और केरलकी जलयात्रा, सभी अेकसाथ याद आ जाती हैं। अिनमें भी मन तृप्त हो जाय अितनी लंबी यात्रा तो वितस्ता और अैरावतीकी ही है। अैरावती नदी सिंधु, गंगा, ब्रह्मपुत्रा और नर्मदाकी बराबरी करनेवाली है। अैरावतीका पाट और प्रवाह देखते ही मनमें अैसा भाव अुठता है, मानो यह किसी महान साम्राज्य पर राज्य करनेवाली कोअी सम्राज्ञी हो! आराकान और पेगुयोमा अैरावतीकी रक्षा अवश्य करते हैं, किन्तु अुसकी प्रतिष्ठा बनाये रखनेके लिअे वे आदरपूर्वक दूर ही खड़े रहते हैं।

हमारा जहाज चला। शाम होते ही जिस प्रकार कामधेनुके वत्स मांके पास दौड़े आते हैं, अुसी प्रकार आसपासके विस्तीर्ण प्रदेशके श्रमजीवी कृषीवलोंके ठटके ठट अैरावतीके किनारे अिकट्ठा होते हैं। हमारा जहाज मानो अेक चलता-फिरता बाजार ही था। कोअी छोटा-मोटा बंदरगाह आने पर वह लोगोंको न्योता देनेके लिअे भोंपू बजाता। बस, अुमड़ती हुअी चींटियोंकी तरह लोग दौड़ते दौड़ते आते और तरह तरहकी खाने-पीनेकी चीजें, कपड़े, बेंतके बर्तन, कारीगरीकी वस्तुअें तथा अन्य चीजें जहाज पर फैल जातीं। जहाजमें

भी चंद व्यापारी अपना अपना माल लिये हुये तैयार ही रहते। पक्षियोंके कलरवकी तरह लेन-देनका शोरगुल शुरू हो जाता। भाषा यदि हम समझते तो किस शोरगुलसे ऊब जाते। किन्तु यहां तो लोग लड़ें-झगड़ें या रोयें-चिल्लायें, हमारे लिये सब एक-सा ही था। मानो एक बड़ा नाटक खेला जा रहा हो। विनिमय पूरा होते ही जहाज छूटता था। व्यानेकी तैयारीमें हो जैसी भैंसकी तरह हमारा जहाज डोलता डोलता चलता था। जहाजके एक कर्मीने गोरे अधिकारीके साथ हमारा कुछ झगड़ा हो जानेसे यात्राके आरंभमें ही सारा मजा किरकिरा हो गया था। किन्तु मंद मंद पवनमें यह सब उड़ गया, और हम कुदरतकी तरह प्रसन्न हो गये।

फिर एक बंदरगाह आया। यहां कुछ विशेष व्यापार चलता होगा। छोटी-बड़ी असंख्य नावें नदीके किनारे कीचड़में लोट रही थीं। बैलोंकी पीठ पर जिस प्रकार मक्खियां भिनभिनाती हैं, उसी प्रकार देहाती बच्चे जिन नावोंके बीच कूद और खेल रहे थे। वहीं लोग गोदन गुदानेके बड़े शौकीन होते हैं। उनके केवड़ेके रंग जैसे चमड़े पर लाल और हरे गोदने बड़े ही सुन्दर मालूम होते हैं। महाराष्ट्रके गांवोंमें लोगोंका यह विश्वास है कि जिस जन्ममें शरीर पर जेवरोंकी आकृति गोदनेसे अगले जन्ममें सोनेके जेवर मिलते हैं और ललाट पर टीका या चंद्रमा गोदनेसे स्त्रीको अखंड सौभाग्य मिलता है। कुछ ऐसी तरहका विश्वास शायद यहांके लोगोंमें भी होगा, क्योंकि यहांके बहुतसे देहाती कमरसे घुटनों तक सारे शरीरमें तरह तरहकी आकृतियोंवाली लुंगी गुदाते हैं। इसीलिये जब वे नहानेके लिये नदीमें नंगे घुस पड़ते हैं, तब बगैर कपड़ोंके भी नंगे नहीं मालूम होते हैं। जहाज कहीं अधिक समय तक ठहरता, तब हम किनारे पर उतरकर आसपासके गांवोंमें घूम आते थे। वहीं घरों और मोहल्लोंसे हमारी आंखें अच्छी तरह परिचित हो चुकी थीं। उनकी भाषा यद्यपि हम समझ नहीं पाते थे, फिर भी उन निर्व्याज देहातियोंका जीवन हमारे लिये परिचित-सा हो गया था। राजनीतिज्ञ और व्यापारी लोगोंके राग-द्वेषोंको यदि हम अलग कर दें और धार्मिक तथा अधार्मिक लोगोंकी कल्पना-सृष्टिको एक ओर रख

दें, तो मनुष्य-जाति सर्वत्र समान ही है। मैं समझता हूं कि दुनियाभरमें सारे गांव रूप और स्वभावमें समान ही होंगे।

प्रवाहके साथ मानो ताल देनेवाले स्तूप और मंदिर भी बीच बीचमें मिल जाते थे। ऊंची ऊंची टेकरियां और शिखर मनुष्यको हमेशा ही प्रिय लगते हैं। अुसमें भी नील नदी जैसी ऐरावती जब चारों दिशाओंमें अपनी कृपाका अुत्पात फैलाती है, तब ये ऊंचे ऊंचे स्थान ही मनुष्यके लिअे आश्रय-स्थान बन जाते हैं। मनुष्य अुनके प्रति अपनी कृतज्ञता यदि मंदिर बनवाकर प्रकट न करे तो भला किस प्रकार करे? प्रकृतिने हमें सिखाया है कि हरे पत्तोंमें पीले परिपक्व फल अपनी सारी मस्ती दिखा सकते हैं। अिस सबकसे सीख कर यहांके लोगोंने पेड़ोंके बीचमें मंदिर बनवाकर अुन पर आकाशकी अनंतताका दर्शन करानेवाली सोनेकी अुंगलियां ऊंची अुठा रखी हैं। जो लोग यह मानते हैं कि प्रकृतिकी शोभाको मनुष्य बढ़ा नहीं सकता, अुन्हें अेक बार यहां आकर ये शिखर जरूर देखने चाहिये।

दोपहरका समय था। अंग्रेजी जाननेवाले अेक ब्रह्मी कॉलेजियनके साथ हम बातें कर रहे थे। अितनेमें अेक शांत आवाज सुनाअी दी। छिदवीन नदी अपना कर-भार लेकर ऐरावतीसे मिलने आयी थी। कितना भव्य था दोनोंका प्रेम-संगम! वह दृश्य अैसा था मानो रामदास और तुकाराम अेक-दूसरेसे मिल रहे हों अथवा भवभूति शतरंज खेलनेवाले कालिदासको अपना 'अुत्तर-रामचरित' सुना रहे हों।

कल्पना द्वारा तो मैं छिदवीनके अज्ञात प्रदेशमें धान-राज्यों तककी सैर कर आया। हाथमें तीर-कमान या कुल्हाड़ी लेकर घूमनेवाले कअी निश्चिंत और निर्भय वनवासी मुझे वहां मिले। जरा-सा संदेह होने पर जान लेनेवाले और विश्वास बैठ जाने पर जान न्योछावर करनेवाले अिन प्रकृतिके बालकोंका दर्शन सभ्यताके कीचड़को धो डालनेवाले मंगल-स्नान जैसा था। जहाजका पक्षी कितना ही क्यों न अुड़े, अंतमें जिस प्रकार वह जहाज पर ही लौट आता है, अुसी प्रकार कल्पना भी जंगलकी सैर करके फिर जहाज पर आ गयी। क्योंकि हम पकोकु बंदरगाह पर आ पहुंचे थे।

पकोकुके पास कीचड़वाली नदीमें नहाकर और वहींका आतिथ्य स्वीकार करके हम फिर जहाज पर सवार हुअे और मिट्टीके तेलके कुअें खनेके लिअे येनन‌ग्यांग तक गये। कहा जा सकता है कि यहां पर अमेरिकन मजदूरोंका राज चलता है। आसपास बनकी नहींके बराबर है। यहां अेक ओर अिन मिट्टीके तेलके कुओंका आधुनिक क्षेत्र और दूसरी ओर टेकरी पर स्थित छोटेसे प्राचीन बौद्ध मंदिरका तीर्थक्षेत्र, दोनोंको देखकर मनमें कभी विचार अुठे। मंदिरकी कारीगरीमें हाथीके मुंहवाला अेक पक्षी खुदा हुआ था। वैसे ही अन्य अनेक मिश्रण यहां दिखाअी दिये। निकटके मठमें कुछ बौद्ध साधु बालकोंके साथ सायंकालकी प्रार्थना या वैसी ही कोअी दूसरी विधि कर रहे थे। अैरावती मानो बिना किसी पक्षपातके मिट्टीके तेलके कुअोंके पंपोंका शोरगुल भी अपने हृदय पर वहन करती है और 'अनिच्चा वत संखारा अुप्पादव्यय-धम्मिणो' का शांत या चिरंतन संदेश भी वहन करती है। अमेरिकाका सामर्थ्य भले बेजोड़ हो, लेकिन वह भूखंड अभी बच्चा ही कहा जायगा न? अुसको जीवनका रहस्य अितनी जल्दी कैसे हाथ लगेगा? अुसे तो नदीके किनारे तीन तीन हजार फुट गहरे कुअें खोदकर मिट्टीका तेल निकालनेकी ही सूझेगी। संसारके सब सृष्ट पदार्थ पैदा होते हैं और मिट जाते हैं। सभी नश्वर और व्यर्थ हैं, असार हैं। सार तो केवल अिमुसे बचकर निर्वाण प्राप्त करनेमें है — अिस बातको कौनसा अमेरिकन मान सकता है? किन्तु अैरावती नदी नव-अुत्साहके कारण कभी ज्ञानसे अिनकार नहीं करेगी, और न ज्ञानके भारसे अुत्साहको खो बैठेगी। अुसे तो महासागरमें विलीन होना है और अिस विलीनताके आनंदको सदा जाग्रत और बहता रखना है।

येननजांगसे हम प्रोम तक गये और वहां अैरावतीसे विदा हुअे। यहांसे आगे चलकर यह महानदी अनेक मुखोंसे सागरको मिलती है। अैरावती सचमुच सुवर्णदेशकी माता है।

मार्च, १९२७

६७

समुद्रके सहवासमें

[अफ्रीका जाते समय]

बम्बईसे मार्मागोवा तक हिन्दुस्तानका पश्चिमी किनारा दिखाई देता था। मां जब तक आंखोंसे ओझल नहीं होती तब तक बच्चेको जिस प्रकार यह विश्वास रहता है कि मैं मांके साथ ही हूं, उसी प्रकार हिन्दुस्तानका किनारा दिखता रहा तब तक ऐसा नहीं लगा कि हमने हिन्दुस्तान छोड़ दिया है। मार्मागोवा छोड़कर हमारे जहाज 'कंपाला' ने स्वदेशके साथ समकोण बनाते हुये सीधे विशाल समुद्रमें प्रवेश किया। देखते देखते हिन्दुस्तानका किनारा आंखोंसे ओझल हो गया और चारों ओर केवल पानी ही पानी दिखाई देने लगा। रात हुई और आकाशकी आबादी बढ़ी। परिणामस्वरूप अकेलापन बहुत कम महसूस होने लगा। किन्तु जैसे जैसे हम भूमध्य-रेखाकी ओर बढ़ने लगे, वैसे वैसे हवा और बादलोंकी चंचलता बढ़ने लगी। मौसम अच्छा होनेसे समुद्र शांत था। लहरें जरा जरा-सी हंसकर बैठ जाती थीं। कुछ लहरें कच्ची छींककी तरह उठते-उठते ही शांत हो जाती थीं। समुद्रका रंग कभी आसमानी स्याहीकी तरह नीला हो जाता, तो कभी कालास्याह। और जहाज पानी काटता हुआ जब आगे बढ़ता, तब दोनों ओर झागका जो सफेद फेन फैलता, उसके अनेक अबरी बेलबूटे बन जाते। नीले रंगके साथ उनकी शोभा अेक किस्मकी मालूम होती, काले रंगके साथ दूसरे किस्मकी। शुरू शुरूमें समुद्रके चेहरे पर लहरोंके अलावा चमड़े पर पड़ी हुई झुर्रियोंकी-सी स्पष्ट छाप दिखाई देती। कभी कभी ये झुर्रियां लुप्त हो जातीं और पानी चमकते हुये बर्तनोंकी तरह सुन्दर दिखाई देता। जहाज आहिस्ता आहिस्ता डोलता हुआ चल रहा था। जहाज जब कदमें छोटे होते हैं, तब अधिक डोलते हैं। बड़े जहाज अपनी धीरगतिको आसानीसे नहीं छोड़ते। सामनेसे जब लहरें आती हैं, तब जहाज डोलनेके

अलावा घुड़सवारकी तरह आगे-पीछे भी हिलता है, जिसे अंग्रेजोंने 'पिचिंग' कहते हैं। यह 'पिचिंग' लम्बे समय तक जारी रहे तो मनुष्यको अच्छा नहीं लगता, वह अनुकूल भी नहीं आता। किन्तु अुसे रोका कैसे जाय? झूलते-झूलते अुकता जाने पर झूला बंद करके अुस परसे अुतरा जा सकता है। किन्तु यहां तो अेक बार जहाजमें बैठे कि आठ दिन तक अुसका हिलना और डुलना स्वीकार किये सिवा कोअी चारा ही नहीं रहता। कभी कभी मनमें संदेह पैदा होता है कि दोनों गतियोंके मिश्रणसे कहीं चक्कर तो न आने लगेंगे? मनमें यह डर भी पैठ जाता है कि चक्करकी शंका मनमें अुठी अिसीलिअे अब चक्कर भी आने लगेंगे। खाते समय स्वादपूर्वक खाते हों, तो भी मनमें यह संदेह बना रहता है कि खाया हुआ पेटमें रहेगा या नहीं? अिस संदेहको मिटाना आसान बात नहीं है। खैर जो हो, हमने तो अपने आठों दिन खूब आनंदमें बिताये। लोगोंने हमें डरा दिया था कि अन्तके चार दिन बड़े कठिन जायंगे; किन्तु वैसा कुछ भी नहीं हुआ। हां, भूमध्य-रेखा जिस दिन पार की अुस दिन कुछ समय तक हवा खूब तेज चली। किन्तु अुससे हम गमगीन नहीं हुअे।

चारों ओर जब पानी ही पानी होता है तब कुछ समय तक मजा आता है। बादमें सारा वायुमंडल गंभीर बन जाता है। यह गंभीरता जब कम हो जाती है तब आंखोंको अकुलाहट मालूम होती है। हमारी पूरी सृष्टि मानो अेक जहाजमें ही समा जाती है। विशाल समुद्रकी तुलनामें वह कितनी छोटी और तुच्छ लगती है! समुद्रकी दया पर जीनेवाली! अुसे छोड़कर चारों ओर पानी ही पानी होता है। अितने सारे पानीका आखिर अुद्देश्य क्या है? जमीन पर होते हैं तब हम चाहे अुतना विशाल खंड क्यों न देखें, मनमें कभी यह खयाल नहीं आता कि अितनी सारी जमीन किसलिअे बनाअी गयी है? विशाल और अनंत आकाशको देखकर भी अैसा नहीं लगता कि अितने बड़े आकाशका निर्माण किसलिअे हुआ है? किन्तु समुद्रका पानी देखकर यह विचार मनमें अवश्य अुठता है। जमीनकी अभ्यस्त आंखें पानीका अखंड विस्तार देखते देखते अकुला जाती हैं, और

अंतमें थककर क्षितिजमें छाये हुये बादलोंको देखकर विश्राम पाती हैं। मगर ये बादल तो अक्सर बिना आकारके और अर्थहीन होते हैं। आकाश जब मेघाच्छन्न हो जाता है तब अुसकी अुदासी असह्य हो अुठती है। अीश्वरकी कृपा है कि अिस अकुलाहटका भी अंतमें अंत आता है और खुली आंखें भी अंतर्मुख हो जाती हैं तथा मन गहरे विचारमें डूब जाता है।

रातके समय और खास कर बड़े तड़के तारे देखनेमें बड़ा आनंद आता था। किन्तु 'पूरा आकाश तो नहीं ही देखने देंगे' अैसा कहकर बादल बच्चोंकी तरह आकाशके चेहरे पर अपने हाथ घुमाते रहते थे। अुनकी दयासे जिस समय आकाशका जितना हिस्सा दिखाअी देता, अुसीको पढ़ लेना हमारा काम रहता था। गुरुवारका प्रातःकाल होगा। जहाज सीधा चल रहा था। अुसके मुख्य स्तंभके ठीक पीछे शर्मिष्ठा थी। स्तंभकी आड़में भाद्रपदाकी चौकोन आकृति जैसे वैसे जम गयी थी। नीचे अुतरते हुअे ध्रुवकी बगलमें देवयानी निकल रही थी। पौने पांच बजे और त्रिकाण्ड श्रवण सिर पर स्वस्तिककी जगह लटकने लगा। हंस, अभिजित और पारिजात, तीनोंका मिलकर अेक सुन्दर चंदोवा बन गया था। बायीं ओर गुरु, चंद्र और शुक्र अेक कतारमें आ गये थे। चंद्रकी चांदनी अितनी मंद थी कि अुसे छांछकी अुपमा भी नहीं दी जा सकती थी। सामने देखा तो बायीं ओर वृश्चिक अपने अनुराधा, ज्येष्ठा और मूलके साथ लटक रहा था, जब कि दायीं ओर स्वाति अस्त हो रही थी। बेचारा ध्रुवमत्स्य लगभग क्षितिजसे मिल गया था।

दूसरे दिन चंद्रका पक्षपात ध्रुवकी ओर हो गया। सप्तर्षिके दर्शन करके हम सोने जा रहे थे, अुस समय आकाशमें पुनर्वसुकी नावको हमारे साथ दक्षिणकी यात्रा पर रवाना हुअी देखकर बड़ी खुशी हुअी। पुनर्वसुकी नावमें बैठनेकी चित्राकी अभिलाषा अभी तक अतृप्त ही रही है। शायद मघा नक्षत्रकी अीर्ष्या अिसमें रुकावट डालती होगी। शनिवारके दिन चंद्र और शुक्रकी युति सुन्दर मालूम हुअी। आखिर आखिरमें अिन दोनोंने कुछ नीला-सा रंग धारण कर

लिया था। भाद्रपदकी चौड़ी नाली वहां खूब ऊंची चढ़ी हुई दिखती थी।

ध्रुव कलसे लुप्त हो गया था।

सुबह जब ऊषा स्वागत करनेके लिअे स्मित करती है, तब सारे क्षितिज पर चांदीके जैसी चमकीली किनारी बन जाती है। अिसके बाद समुद्र प्रसन्नताके साथ हंसने लगता है और सूरजके प्रगट होनेके लिअे गुलाबी अवकाश देता है।

शनिवारको सामनेसे आता हुआ अेक जहाज दिखाअी दिया। अपने दीवेका प्रकाश चमकाकर अुसने हमारे जहाजका अभिवादन किया। हमारे जहाजने भी अुसका अभिवादन किया ही होगा। दोनों जहाज यदि बहुत समीप आ जाते, तो दोनों भोंपू बजाते। किन्तु जहां आवाज नहीं पहुंचती, वहां प्रकाशके द्वारा बातें करनी पड़ती हैं। पूरे चार दिनके अेकान्तके बाद हमारे जहाजके जैसी ही दूसरी अेक सृष्टिको जीवन-पट पर विहार करते देखकर अत्यंत आनंद हुआ। हमारे जहाजके लोग अफ्रीकाके सपने देख रहे थे। सामनेवाले जहाजके यात्री हिन्दुस्तानके सपने देख रहे थे। हरेक जहाजके यात्रियोंके मनोव्यापारोंका योग लगाया जाय तो कैसा मजा आये!

जहाज परके यात्रियोंकी तीन जातियां होती हैं। प्रतिष्ठाकी वस्पृश्यता भोगनेवाले होते हैं पहले वर्गके यात्री। अुन्हें अधिक सुविधायें मिलती हैं, यह बात छोड़ दीजिये। किन्तु अुनका बड़प्पन अिस बातमें है कि अुनके राज्यमें दूसरा कोअी प्रवेश नहीं कर पाता। अूपरी डेकका बहुत-सा हिस्सा अुनके आराम और खेल-कूदके लिअे सुरक्षित रखा जाता है। दूसरे वर्गके यात्रियोंको भी अच्छी खासी सुविधायें मिलती हैं। लेकिन तीसरे वर्गके यात्रियोंकी गिनती तो मनुष्योंमें होती ही नहीं। अुनके झुंड भेड़-बकरियोंकी तरह कहीं भी ठूंस दिये जाते हैं। लगातार आठ दिन तक मनुष्यको पशु-जीवन बिताना पड़े, यह कोअी मामूली मुसीबत नहीं है।

और अब दूसरे और तीसरे वर्गके बीचमें अेक 'अिन्टर' का वर्ग बनाया गया है। वह पशु और मनुष्यके बीचका वानर-वर्ग कहा जा सकता है। अुसमें काफी भीड़ होते हुअे भी अितनी गनीमत है कि यात्री मनुष्यकी तरह सो सकते हैं।

हम जहाज पर हैं, यह मालूम होते ही अनेक लोग हमसे बातें करनेके लिअे आने लगे। अुसमें भी हमारे सुबह-शाम प्रार्थना करनेके समाचार जब जहाजके खलासियों तक पहुंचे, तब अुन्होंने हमें नीचेके डेक पर शामकी प्रार्थना करनेके लिअे बुलाया। करीब सभी खलासी सूरत जिलेके थे। भजनके पूरे रसिया। वे अनेक भजन जानते और ताल-स्वरके साथ गा सकते थे। अुनकी भजन-मंडली जब जमती तब वे सारे दिनकी थकावट और जीवनकी सारी चिन्ताअें भूल जाते थे। यह जानते हुअे भी कि नीले रंगकी पोशाक पहनकर सारे दिन यंत्रकी तरह काम करनेवाले लोग यही हैं, यह सच नहीं मालूम होता था। अुनके समक्ष मैंने अनेक प्रवचन किये। मैंने अुन्हें यह समझानेकी कोशिश की कि अुनका जीवन अेक तरहकी साधना ही है। मैंने यह भी बताया कि जमीन पर ही दीवारें खड़ी की जा सकती हैं; समुद्र पर नहीं। अतः खलासियोंके समाजमें जात-पांतकी दीवारें नहीं होनी चाहिये। अुन्हें तो दरिया-दिल बनना चाहिये।

हम लोग अिस प्रकार भजनमें तल्लीन रहते थे, अुसी बीच जहाज परके कअी गोवानी लोगोंने अेक रातको स्त्री-पुरुषोंके अेक नाचका आयोजन किया। अिसके लिअे अुन्होंने जो चंदा अिकट्ठा किया, अुसमें हमको भी शरीक किया। अिसलिअे हम हकदार प्रेक्षक बने!

गोवाके अीसाअी लोगोंमें युरेशियन नहीके बराबर हैं। धर्मसे अीसाअी किन्तु रक्तसे शुद्ध हिन्दुस्तानी लोगोंने पश्चिमके जो संस्कार अपनाये हैं, अुनका असर देखने लायक होता है। कुछ युगल नृत्य-कलाका संयमपूर्वक आनंद ले रहे थे; कुछ अैसे गंभीर, अलिप्त और यांत्रिक ढंगसे नाच रहे थे, मानो कोअी सामाजिक रस्म अदा कर रहे हों; जब कि कुछ युगल नृत्यके नियम मंजूर करें अुतनी पूरी छूट लेकर नृत्यमें तथा अेक-दूसरेमें लीन हो रहे थे। अेक दो युगलोंकी

अुन्न और अूंचाअी अितनी असमान थी कि मनमें यही विचार आता कि अितनी बड़ी विडंबनाका भोग अुन्हें कैसे बनना पड़ा। संकरी जगहमें अितने सारे लोगोंका नृत्य जैसे तैसे पूरा हुआ। अंत तक जागनेकी अिच्छा न होनेसे ग्यारह बजनेसे पहले ही हम लोग सो गये।

हमारा जहाज पश्चिमकी ओर यानी पृथ्वीकी दैनंदिन गतिसे अुलटी दिशामें चल रहा था। अतः लगभग हररोज हमें घड़ीके कांटे घुमाने पड़ते थे। जहाजकी ओरसे हमें सूचना मिलती थी कि 'मध्यरात्रिमें आधा घंटा कम करो' या 'अेक घंटा कम करो।' सृष्टिके नियमको समझकर हम अितना नुकसान अुठानेको तैयार हो जाते थे। अफ्रीका पहुंचने तक हमने कुल मिलाकर छाअी घंटे खोये थे। (बेल्जियन कांगो जाने पर अेक घंटा और खोना पड़ा था।)

भूगोलके तथ्य न जाननेवाले पाठकोंको अितना कह देना आवश्यक है कि रेखांशकी हर पंद्रह डिग्री पर अेक घंटा बढ़ाना या खोना पड़ता है। और प्रशांत महासागरमें जब जहाज अेशिया और अमेरिकाके बीच १८० रेखांश पर होते हैं, तब अुन्हें आते या जाते अेक पूरा दिन बढ़ाना या घटाना पड़ता है। अिस रेखांशको अंग्रेजीमें 'डेट लाअिन' कहते हैं। हमारे यहां जिस तरह अधिक मास आता है, अुसी तरह 'डेट लाअिन' पर जाते हुअे अेक अधिक दिन आता है, जब कि आते हुअे अेक दिनका क्षय होता है।

आठ दिनसे न तो कोअी अखबार देखनेको मिला, न डाक, न मुलाकाती, न कोअी शहर या गांव — यहां तक कि सौगंद खानेके लिअे कोअी पहाड़ या टापू भी देखनेको नहीं मिला! अैसी स्थितिमें जब घंटेके घंटे और दिनके दिन चुपचाप चले जाते हैं, तब वार और तारीखका भी ठिकाना नहीं रहता। हमारे जहाजकी अूंचाअीका हिसाब करते हुअे जब मैंने अिस बातकी जांच की कि हमारे अिर्दगिर्द क्षितिज तक कितना समुद्र फैला हुआ है, तब जहाजवालोंसे मालूम आ कि हमारी आंखें २५० वर्गमीलका समुद्र अेक भक्करमें पी सकती थीं।

कैसी महाशांति थी! वह भी डोलती, झूलती, बहती किन्तु स्थिर शांति आकाशके आशीर्वादके नीचे घुमड़ रही थी। Swelling and rolling peace—abiding and abounding. पता नहीं किस तरह, अिस शांतिके सेवनके साथ मुझमें मानव-प्रेम घुमड़ रहा था और सारी मनुष्य-जातिसे स्वस्ति, स्वस्ति, स्वस्ति कह रहा था। मानव-जातिका अितिहास आज भी कुल मिलाकर सुन्दर नहीं बन पाया है। अिसी समुद्रने कितने ही अन्याय और अत्याचार देखे होंगे। कितने ही गुलामोंकी आहें यहांकी हवामें मिली होंगी। और कितनी ही प्रार्थनाअें सूर्य, चंद्र और तारों तक पहुंच कर भी व्यर्थ गअी होंगी। अितना होते हुअे भी यदि मनुष्य-रक्तके कारण समुद्रमें लाली नहीं आअी, दुःखियोंकी आहोंसे यहांकी हवा कलुषित नहीं हुअी और लोगोंकी निराशासे आकाशकी ज्योतियां मंद नहीं पड़ीं, तो मनुष्य-जातिका थोड़ासा अितिहास पढ़कर मेरा मानव-प्रेम किसलिअे संकुचित या कम हो? यदि मैं अपने असंख्य दोषोंको भूलकर अपने आप पर प्रेम कर सकता हूं, और अपने विषयमें अनेक तरहकी आशायें बांध सकता हूं, तो मेरे ही अनंत प्रतिबिंबरूप मानव-जातिको मेरा प्रेम कम क्यों मिले?

अैसी भावनाके साथ अफ्रीकाकी भूमि पर विषम रूपसे चलने-वाले मनुष्य-जातिके अिसंड सहकारको देखनेके लिअे मैं मोम्बासा पहुंचा।

अिन आठ दिनोंमें खूब पढ़ने-लिखनेकी जो अुम्मीद मैंने रखी थी, वह पूरी नहीं हुअी। किन्तु ये आठ दिन जीवनके दर्शन, चिंतन और मननसे भरपूर थे।

नवंबर, १९५०

६८

रेखोल्लंघन

भूमध्य-रेखा (equator) पृथ्वीकी कटि-मेखला है। सीलोनके दक्षिणमें पहुंचा था तब यह सोचकर मन कितना अस्वस्थ हुआ था कि यहां तक आये फिर भी भूमध्य-रेखा तक नहीं पहुंच सके! सीलोनके दक्षिणमें गाल, देवेन्द्र और मातारा तक सब तब भी छठी डिग्रीसे ज्यादा दक्षिणमें नहीं आ सके। कन्याकुमारी गया तब मुश्किलसे आठवीं डिग्री तक ही पहुंचा था। चि० सतीश सिंगापुर था तब वहां आनेको एक बार अिच्छा हुअी थी—मुझे मिलनेके लिअे नहीं, परंतु भूमध्य-रेखा लांघ सकूंगा अिस लोभसे। फिर जब नक्शेमें देखा कि सिंगापुर भी भूमध्य-रेखाके अिस ओर ही है तब वह अुत्साह नहीं रहा।

लेकिन भूमध्य-रेखामें अैसा क्या है? जमीन पर या पानी पर सफेद, काली या पीली लकीर नहीं खींची गअी है। फिर भी भूमध्य-रेखाका प्रदेश काव्यमय है अिसमें कोअी शक नहीं।

अुस प्रदेशका स्मरण करता हूं और मुझे शान्तादुर्गा और अर्धनारी नटेश्वरका स्मरण होता है। शान्तादुर्गा एक ओर शुभंकरी शान्ता है, तो दूसरी ओर नवंकरी दुर्गा है। महादेवका भी अैसा ही है। अुनका दक्षिण मुख सौम्य शिव है और वाम मुख अुग्र रुद्र है। अर्धनारी नटेश्वर एक ओर स्त्रीरूप है, तो दूसरी ओर पुरुषरूप है। हमारे समन्वयवादी पूर्वजोंने हरि-हरेश्वरकी कल्पना अिसी तरह की है। शिव और विष्णु दोनोंके मिलनेसे हरि-हरेश्वर बने हैं।

भूमध्य-रेखा पर अिसी तरह परस्पर विरोधी अृतुओंका मिलन है। अुत्तर गोलार्धमें जब गर्मीका मौसम होता है तब दक्षिण गोलार्धमें जाड़ेका। अेकमें जब वसंत होता है तब दूसरेमें शरद्। भूमध्य-रेखा

अेक अैसा प्रदेश है जहां गर्मी और जाड़ेके मौसम हस्तांदोलन कर सकते हैं। और प्रौढ़ा शरद् भी बाल वसंतको खेला सकती है।

अैसी जगह अगर अखंड शान्ति ही रहे तो वहांका जीवन अलोना हो जाय! खिलाड़ी कुदरतसे यह कैसे सहा जाय? गंगा-यमुनाके धवल-श्यामल पानीका संगम तो हमेशा नाचा करे, और उत्तर-दक्षिणका मिलन नृत्य न करे, यह कैसे चले?

आज भूमध्य-रेखा पर आये हैं। यहां पवन अखंड रूपसे नाचता है। चंचलता नहीं स्थिर हुअी हो तो यहीं। यहांकी कुदरत अेक हाथसे गर्मीकी पीठ पर थपकियां देती है, तो दूसरा हाथ जाड़ेकी पीठ पर फेरती है।

भूमध्य-रेखा यानी तराजूमें तौला हुआ पक्षपात-रहित न्याय। उत्तर-ध्रुव दीख पड़े और दक्षिण-ध्रुव नहीं, अैसा यहां नहीं चल सकता। यहांके आकाशमें मृग नक्षत्रके पेटमें पहुंचा हुआ बाण अिधर या अुधर झुक या ढल नहीं सकता। सीधा पूर्वमें अुग कर खस्वस्तिक (Zenith) को छूकर वह पश्चिममें डूबेगा। यही अेक अन्य प्रदेश है जहां खस्वस्तिक विषुववृत्त पर विराजमान हो सकता है। जैसे भूमि पर भूमध्य-रेखा होती है, वैसे आकाशमें विषुववृत्त (celestial equator) होता है। अितना लिखते हैं वहां हमारा रंगीन अभिनंदन करनेके लिअे अेक अिन्द्र-धनुष आगे दाहिनी ओर निकल आया है। अब तृप्ति हुअी। लेकिन समस्त मानव तृप्तियोंकी तरह यह अगर अल्पजीवी न हो तो पेट फूट जाय। और पेट नहीं तो आंखें फूट जायें। यह कैसे पुसा सकता है? अब दक्षिण गोलार्धमें क्या क्या देखने-जाननेको मिलेगा, क्या क्या अनुभव होगा, अैसी अुत्सुकता जाग्रत होने लगी है। भूमध्य-रेखा पहली बार लांघ सके अुसकी धन्यता सदा साथ रहेगी।

मअी, १९५०

६९

नीलोत्री

(१)

अफ्रीकाकी यात्रा करनेमें अेक अुद्देश्य था अुत्तर-पूर्व अफ्रीकाकी माताके समान अुत्तर-वाहिनी नील नदीके अुद्गम-स्थान नीलोत्रीके दर्शनका। गंगोत्री और जमनोत्रीकी यात्रा करनेके बाद मुझे अैसा लगने लगा था कि नीलोत्रीकी यात्रा करनी ही चाहिये। वह दिन अब निकट आ गया था। जुलाअीकी पहली तारीखको सुबह ही हमने कंपाला छोड़कर जिंजाके लिअे प्रस्थान किया। अपने जरूरी कामके कारण श्री अप्पासाहब पन्त नैरोबी वापस चले गये और हम मोटर लेकर अपने रास्ते चल पड़े।

कंपालासे जिंजा तकका रास्ता सुन्दर है। अनेक छोटी-छोटी और चौड़ी पहाड़ियां चढ़ती-अुतरती हमारी मोटर हमारे और नीलोत्रीके बीचका बाकी बचा फासला काटती गयी और हमारी अुत्कंठा बढ़ाती गयी। यह कितने बड़े सौभाग्यकी बात थी कि जिंजा तक पहुंचनेके पहले ही हमारा संकल्प पूरा हुआ और हमें नीलोत्रीके दर्शन हो गये! दाअीं ओर विक्टोरिया या अुकेरेवेका सरोवर दूर तक फैला हुआ है। अुसमें से सहज-लीलासे छलांग मारकर नील नदी जन्म लेती है! हम नदीके पुल पर पहुंचे। मोटरसे अुतरे और दाअीं ओर मुड़कर रिपन फॉल्सके नामसे मशहूर अेक छोटे-से प्रपातमें हमने नील नदीके दर्शन किये।

प्रपातके तुषारोंसे पैर ढंक गये हैं। सिर पर मुकुट चमक रहा है। और पीछे अेक हरा-भरा वृक्ष मुकुटको अधिक सुशोभित कर रहा है। देवीके दोनों हाथोंमें धानकी पूलियां हैं और मुंह पर प्रसन्न वात्सल्य खिल रहा है—अैसी मूर्ति कल्पनाकी नजरमें आयी। मूर्ति गोरे रंगकी नहीं थी, बल्कि श्यामवर्णकी ओर जरा झुकती हुअी गोरी ही थी। सारे बदन पर पानीकी धारायें बह रही थीं। जिससे देवीके मुख परका हास्य अधिक सुन्दर मालूम हो रहा था।

जी भरकर दर्शन करनेके बाद हमने बायीं ओर देखा। दायीं ओरका पानी हमारी दिशामें दौड़ा चला आ रहा था। बायीं ओरका पानी हमसे दूर दूर दौड़ा जा रहा था। दोनोंका असर बिलकुल भिन्न था। हमें मालूम था कि दायीं ओर रिपन प्रपात है, और बायीं ओर जरा दूर ओवेन प्रपात है। हमारे देशमें अुसे कोअी प्रपात हरगिज नहीं कहेगा। पानीकी सतहमें कुछ फुटका अंतर पैदा हो जानेसे ही क्या प्रपात बन जाता है? प्रपात तो तभी कहा जा सकता है जब पानी धब-धब गिरता हो, जितना गिरे अुतना ही फिर अुछलता हो और फेन तथा तुषारके बादल अिर्दगिर्द नाचते हों।

यात्राके अंतमें लोग तुरन्त जाकर मंदिरोंमें जो देवताका दर्शन करते हैं, अुसे यात्रियोंकी परिभाषामें 'धूल-भेंट' कहते हैं। यात्रा पैदल की हो, सारे शरीर पर धूल छाअी हो और अुत्कंठाके कारण अुसी स्थितिमें दौड़कर अिष्ट देवताके चरणोंमें गिर रहे हों या मिल रहे हों, तो अुसे धूल-भेंट कहते हैं। हम तो मोटरकी रफ्तारसे आये थे। सुबह थोड़ा-सा पानी गिरा था; अिससे रास्ते पर भी धूल नहीं थी। अतः अिस प्रथम दर्शनको 'भीनी-भेंट' ही कह सकते थे। यदि 'भाव-भीनी' कहें तो वह और अधिक यथार्थ वर्णन होगा। मूर्ति गीली, जमीन गीली, आंखें गीली और अनेक मिश्र-भावोंसे ओतप्रोत हृदय भी गीला। 'अद्य मे सफलं जन्म, अद्य मे सफलाः क्रियाः' यह पंक्ति जिसने प्रथम गाअी होगी, वह मेरे जैसे असंख्य यात्रियोंका प्रतिनिधि ही होगा।

नीलमाताके अिस प्रथम दर्शनको हृदयमें संग्रह करके हमने जिजामें प्रवेश किया। गुजरात विद्यापीठके किसी समयके विद्यार्थी अेडवोकेट श्री चंदुभाअी पटेलके यहां हमारा डेरा था। पुराने विद्यार्थियोंके यहां आतिथ्य अनुभव करना जितना आनंद-दायक होता है, अुतना ही कड़ा और कठिन भी होता है। घरकी अच्छीसे अच्छी सुविधायें हमें देकर खुद अड़चन भोगनेमें वे आनंद मानते होंगे; किन्तु हमें संकोच अनुभव हुअे बिना कैसे रह सकता है?

अब हम नीलोत्रीके बिंबिवत् दर्शनके लिअे निकल पड़े। हम वहां पहुंचे जहां अमरसरका जल शिलाओंकी किनार परसे नीचे झुतरता है और नील नदीको जन्म देता है। जल्दी जल्दी पानीके पास जाकर पहले पैर ठंडे किअे। आचमन करके हृदय ठंडा किया और क्षणभरके लिअे अुस स्थानका ध्यान किया। मेरी आदतके अनुसार अीशोपनिषद्, मांडुक्य अुपनिषद् या अघमर्षण सूक्त मुंहसे निकलना चाहिये था। किन्तु अेकाअेक यह श्लोक निकला:

ध्येयः सदा सवितृ-मंडल-मध्यवर्ती
नारायणः सरसिजासन-सन्निविष्टः।
केयूरवान् मकर-कुंडलवान् किरीटी
हारी हिरण्मय-वपुर् धृत-शंख-चक्रः॥

नील नदीके तट पर भिन्न भिन्न समय पर और भिन्न भिन्न स्थान पर तीन बार नीलाम्बाका ध्यान किया और हर बार मुंहसे अचूक रूपमें यही श्लोक निकला। अब मुझे सिंध देशकी संस्कृतिके पुराणोंमें यह खोज करनी है कि क्या नील नदीका भगवान् सूर्य-नारायणके साथ कोअी खास संबंध है?

मैं यदि संस्कृतका कवि होता तो जिस नदीके पानीमें रहने-वाली मछलियों, पानी पर अुड़नेवाले बाबाल पक्षियों और अुसके किनारे लोटनेवाले किवोका (हिपोपोटेमस) की धन्यताके स्तोत्र गाता। नील नदीके किनारे जो बॉटर वर्क्स है, अुसकी देखभाल करनेके लिअे नियुक्त अेक गुजराती सज्जनके भाग्यसे अुन्हींकी भाषामें अीर्ष्या प्रकट करके मैंने संतोष माना: "आप कितने धन्य हैं कि आपको अहोरात्र नीलोत्रीके दर्शन होते रहते हैं, और यहांसे न हटनेके लिअे आपको तनख्वाह दी जाती है!" यह देखने या पूछनेके लिअे मैं वहां रुका नहीं कि अुनको जिस तरहकी धन्यता महसूस होती है या नहीं।

मेरी दृष्टिसे नदियां दो प्रकारकी होती हैं। पहाड़से निकलनेवाली और सरोवरसे निकलनेवाली। पहलीको मैं शैलजा या पार्वती कहूंगा; और दूसरीको सरोजा। (आशा है संसार भरके कमल मुझे क्षमा

करेंगे।) शैलजा नदियोंका अुद्गम बहुत छोटा, पतला और लगभग तुच्छ जैसा होता है। अतः अुनके प्रति आदर अुत्पन्न करनेके लिअे बड़े-बड़े माहात्म्य लिखने पड़ते हैं। गंगोत्रीके पास गंगाका प्रवाह कभी-कभी अितना छोटा हो जाता है कि सामान्य मनुष्य भी अुसके अेक किनारे अेक पैर और दूसरे किनारे दूसरा पैर रख कर खड़ा हो सकता है। सरोजा नदियोंकी बात अलग है। विशाल और स्वच्छ वारि-राशिमें से जीमें आये अुतना पानी खींचकर वे बहने लगती हैं। और अुनके चलने-बोलनेमें जन्मसे ही धनी श्रीमन्त होनेका आत्मभान होता है।

नीलोत्रीकी यात्रा करनेका अेक और भी अदम्य आकर्षण था। महात्मा गांधीके पार्थिव शरीरको दिल्लीके राजघाट पर अग्निसात् करनेके पश्चात् अुनकी अस्थि और चिता-भस्मका विसर्जन हिन्दुस्तान तथा संसारके अनेकानेक पुण्य-स्थानोंमें किया गया था। अुनमें से अेक स्थान नीलोत्री है।

हम जिंजा नगरीके सार्वजनिक मेहमान थे। अतः यहांके लोगोंने हमारी अुपस्थितिसे 'लाभ अुठाने' की ठानी और जहां चिता-भस्मका विसर्जन किया गया था, अुसके पास अेक कीर्तिस्तंभ खड़ा करनेकी बात तय हो चुकनेसे अुसका शिलान्यास मेरे हाथों करानेका प्रबंध किया।

२ जुलाअी, १९५० को अधिक आषाढ़ कृष्ण तृतीयाके दिन सुबह सैकड़ों लोगोंकी अुपस्थितिमें मैंने यह विधि पूरी की। अिस अुत्सवके लिअे गांधीजीका अेक बड़ा चित्र सामने रखा गया था। अुसकी नजर मुझ पर पड़ते ही मैं बेचैन हो अुठा। वैदिक विधि पूरी होनेके पश्चात् मैंने गांधीजीके जीवनके बारेमें थोड़ासा प्रवचन किया और बताया कि अफ्रीका ही अुनकी तपोभूमि है। फोटो वगैरा खींचनेकी आधुनिक विधिसे मुक्त होते ही किनारेके अेक पत्थर पर बैठकर नील-माताके शुभ्र जल-प्रवाह पर मैंने टकटकी लगाअी और अंतर्मुख होकर ध्यान किया। अुस समय मनमें विचार आया कि यूरोप, अफ्रीका और अेशिया, अिन तीनों महाखंडोंके बल्कि अमेरिकाके भी महान और सामान्य आबालवृद्ध स्त्री-पुरुष यहां आयेंगे, सार्वोदयके अृषि महात्मा

गांधीके जीवन, जीवन-कार्य और अंतिम बलिदानका यहां चिन्तन करेंगे और मनुष्य मनुष्यके बीचका भेदभाव भूलकर विश्व-कुटुंबकी स्थापना करनेका व्रत लेंगे। भविष्यके अिन सारे प्रवासियोंको मैंने यहांसे अपने प्रणाम भेजे।

(२)

नील नदीकी दो शाखायें हैं। श्वेत और नील। जिजाके समीप जिसका अुद्‌गम होता है वह श्वेत शाखा है। नीलशाखा भी सरोजा ही है। अीथियोपिया (जिसे हम हब्शियाना (अेबिसीनिया) कहते हैं) देशमें ताना नामक अेक सरोवर है। अिस सरोवरमें से नील शाखा निकलती है। ये शाखायें लाखों बरससे बहती रही हैं और अपने किनारे रहनेवाले पशु-पक्षी और मनुष्योंको जलदान देती रही हैं। मगर युरोपियन लोगोंको जिस चीजका पता न हो वह अज्ञात ही कही जायगी। अेक दृष्टिसे अुनका कहना सही भी है। दूसरे लोग नदीके किनारे रहते हुअे भी यदि अिसकी खोज न करें कि यह नदी असलमें आती कहांसे है और आगे कहां तक जाती है, तो यह नहीं कहा जा सकता कि अुन लोगोंको सारी नदीका ज्ञान है। मसलन्, तिब्बतके लोग मानसरोवरसे निकलनेवाली सांनपो (विशाल प्रवाह) नदीको जानते हैं। वे लोग अधिकसे अधिक अितना ही जानते हैं कि वह नदी पूर्वकी ओर बहती बहती जंगलमें लुप्त हो जाती है। अिधरसे हमारे लोग ब्रह्मपुत्रका अुद्‌गम खोजते खोजते अुसी जंगलके अिस ओरके सिरे तक पहुंचे। आगेका वे कुछ नहीं जानते। जब कभी अंग्रेजोंने प्रतिकूल परिस्थिति होते हुये भी अिन जंगलोंको पार किया, तभी वे यह स्थापित कर सके कि तिब्बतकी सांनपो नदी ही अिस ओर आती है और अन्य सभी छोटी-बड़ी नदियोंका पानी लेकर ब्रह्मपुत्र बनी है।

नील नदीका अुद्‌गम खोजनेवालोंमें मि० स्पीक अंतमें सफल हुअे और अुन्होंने यह सिद्ध किया कि जिजाके पास सरोवरसे जो नदी निकलती है वही मिस्र-माता नील है।

. ये स्पीक साहब हिन्दुस्तान सरकारकी नौकरीमें थे। अुन्हें पता चला कि प्राचीन हिन्दू लोग मिश्र यानी आजके अिजिप्तके बारेमें काफी जानकारी रखते थे। अुन्होंने जांच करके यह मालूम किया कि संस्कृत पुराणोंमें कहा गया है कि नील नदीका अुद्गम मीठे पानीके अमरसरसे हुआ है, अिसी प्रदेशमें चंद्रगिरि है, ठेठ दक्षिणमें मेरु पर्वत स्थित है, आदि। पुराणोंमें से कुछ संस्कृत श्लोकोंका अुन्होंने अनुवाद करवा लिया और अुसके सहारे नीलके अुद्गमकी खोज करनेका निश्चय किया।

वे पहले ज़ांज़ीबार गये और वहांसे सब तैयारी करके केनिया प्रदेश पार करके युगान्डा गये। वहां अुन्हें अमरसरवाला 'अच्छोद' सरोवर मिला। (अच्छ – सुअच्छ = स्वच्छ। अुद – अुदक = पानी। मीठे पानीके सरोवरको अच्छोद कह सकते हैं।) और वहांसे निकलनेवाली नील नदी भी मिली। अुन्होंने यह सिद्ध किया कि सुदान और अिजिप्तमें बहनेवाली नदी यही है। अिस बातको अभी पूरे सौ साल भी नहीं हुअे हैं।

अफ्रीका खंड सचमुच वहां रहनेवाली अनेक अफ्रीकन जातियोंका देश है। अिस प्रदेशके बारेमें युरोपियन लोगोंको पूरी जानकारी नहीं थी, यह कोअी वहांके लोगोंका दोष नहीं है। युरोपके और खास करके अरबस्तानके लोग अफ्रीकाके किनारे जाकर वहांके लोगोंको पकड़ लेते थे और अपने अपने देशमें ले जाकर अुन्हें गुलामके तौर पर बेचते थे। पकड़े हुअे लोगोंमें स्त्रियां भी होती थीं और बच्चे भी होते थे। किन्तु लुटेरे अुनका मनुष्यके नाते खयाल क्यों करने लगे?

कुछ मिशनरी लोगोंको सूझा कि अैसे जंगली लोगोंकी आत्माके अुद्धारके लिअे अुन्हें अीसाअी बनाना चाहिये। जिस गहन प्रदेशमें लोभी व्यापारी भी जानेकी हिम्मत नहीं कर पाते, वहां ये अुत्साही धर्म-प्रचारक पहुंच जाते और वहांकी भाषा सीखकर लोगोंको अीसा मसीहका 'शुभ-संदेश' सुनाते।

आगे चलकर युरोपके राजाओंने अफ्रीका खंडको आपसमें बांट लिया। अिसमें नियम यह रखा कि जिस देशके मिशनरियोंने जितना

प्रदेश ढूंढ़ निकाला (!) हो अुतना प्रदेश अुस देशके राजाकी मिलकियत माना जाय। अिसमें अेक बार अैसा हुआ कि स्टेन्ली नामक किसी मिशनरीने अिंग्लैंडके राजासे कांगो नदीके विस्तारका प्रदेश 'ढूंढने' के लिअे मदद मांगी। अिंग्लैण्डके राजाने अपनी पार्लियामेन्टसे यह मदद नहीं दी। अतः वह बेल्जियमके राजाके पास गया। राजा लिओपोल्ड लोभी और अुत्साही था। अुसने अुसे सब तरहकी मदद दी। परिणाम-स्वरूप जब अफ्रीका खंडका बंटवारा हुआ तब कांगो नदीके विस्तारका प्रदेश बेल्जियमके हिस्सेमें गया! बेल्जियम कांगोका यह प्रदेश करीब हिन्दुस्तान जितना बड़ा है। वहांसे रबड़ प्राप्त करनेके लिअे गोरे लोगोंने वहांके बाशिंदों पर जो जुल्म गुजारे, अुनका वर्णन पढ़कर रोंगटे खड़े हो जाते हैं, अैसा कहना अल्पोक्ति ही होगी। भावनाशील मनुष्य यदि ये वर्णन पढ़े तो अुसका खून जम जायगा। फिर भी गोरे लोगोंने वहांके बाशिंदोंको धीरे धीरे 'सुधारा' अवश्य है। अब ये लोग कपड़े पहनते हैं, बालोंमें तरह तरहकी मांगें निकालते हैं और शराब भी पीते हैं। अिस प्रकार अुनमें से बहुतसे अीसाअी बन गये हैं!

हमारे यहांके लोगोंने युगान्डामें जाकर कपासकी खेती बढ़ाअी। राज्यकर्ताओंकी मददसे वहां बड़ी बड़ी 'अेस्टेटें' बनाअीं और करोड़ों रुपये कमाये। हमने भी वहांके लोगोंको सुधारा है; दरजी-काम, बढ़अीगीरी, राजकाम, रसोअी-काम आदि धंधोंमें हमने अुनकी मदद ली, अिसलिअे वे लोग धीरे धीरे अिसमें प्रवीण हो गये। हिन्दुस्तानके कपड़ों और विलायतसे आनेवाली शराब आदि अनेक प्रकारकी चीजें बेचनेकी दुकानें खोलीं और अुन लोगोंको जीवनका आनंद भोगना सिखाया!

गोरे और गेहुंअे रंगके लोगोंके अिस पुरुषार्थकी साक्षी नील नदी यहां चुपचाप बहती रहती है और अपना परोपकार अपने दोनों तटों पर दूर दूर तक फैलाती रहती है।

हमारे देशमें गंगा नदीका जो महत्त्व है, वही महत्त्व अधिक अुत्कट रूपसे अुत्तर-पूर्व अफ्रीकामें नील नदीका है। अिजिप्तकी मिश्र या मिसर संस्कृतिका स्थान दुनियाकी सबसे महत्त्वपूर्ण पांच-छः प्राचीन

संस्कृतियोंमें है। अुसका असर युरोपके अितिहास पर ही नहीं, बल्कि अुसके धर्म पर भी पड़ा है। हमारे यहां जैसी चार वर्णोंवाली संस्कृति विकसित हुअी, वैसी ही संस्कृति प्राचीन मिश्र देशमें भी देखनेको मिलती है और अुसका प्रतिबिंब यूनानी दार्शनिक अफलातूनकी 'समाज-रचना' पर पड़ा हुआ मिलता है। चार वर्णोंवाली संस्कृति अुस कालके लिअे चाहे जितनी अनुकूल और भव्य मानी गअी हो, फिर भी तूफानी युरोप अुसे हजम नहीं कर सका। युरोपमें जो अीसाअी धर्म फैला है, अुसका पालन-पोषण अिजिप्तमें कुछ कम नहीं हुआ है। किन्तु वहां विकसित हुअे वैराग्य, तपस्या तथा देह-दमनको काफी आजमानेके बाद युरोपने अुसे छोड़ दिया। फिर भी युरोपकी संस्कृतिकी जड़ें ढूंढ़नी हों तो अिजिप्तके अितिहासमें प्रवेश करना ही पड़ता है और अिस अितिहासका निर्माण कुछ हद तक नील नदीका ऋणी है।

जिस तरह नदीका पानी आगे ही आगे बहता है, पीछे नहीं जा सकता, अुसी तरह अिजिप्तकी संस्कृति नील नदीके अुद्गमकी ओर युगान्डा प्रदेशमें नहीं पहुंच सकी, यह बात हमारा ध्यान आकर्षित किये बिना नहीं रहती। अिजिप्तके लोग यदि अमरसरके आसपास आकर बसे होते, तो अफ्रीकाका ही नहीं बल्कि दुनियाका अितिहास भिन्न प्रकारसे लिखा जाता।

हमारे देशमें नदियोंके जितने अुद्गम हम देखते हैं, वे सब जंगलोंमें या दुर्गम प्रदेशोंमें होते हैं। और ये अुद्गम छोटे भी होते हैं। नील नदीका अुद्गम विशाल है, अिसकी तो कोअी बात नहीं। किन्तु अुद्गमके काबमें कमी अिस बातसे आ गअी है कि वहां अेक शहर बसा हुआ है। हमारे यहां कृष्णा और अुसकी चार सहेलियां सह्याद्रिके जिस प्रदेशसे निकलती हैं, वह प्रदेश दुर्गम और पवित्र था। संतोंने यहां शिवजी महाबलेश्वरकी स्थापना की थी। किन्तु अंग्रेजोंने अुसको अपना ग्रीष्म-नगर बनाकर अुस तपोभूमिको विहार-भूमि या बगीचा-भूमि बना डाला, अिस बातका स्मरण मुझे जिज्ञासामें हुअे बिना नहीं रहा।

और अब तो वहां ओवेन फॉल्सके सामने एक बड़ा बांध बांधकर बिजली पैदा की जायगी। संसारका यह एक अद्भुत बांध होगा। अुसकी शक्ति युगांडामें ही नहीं, सुदान और मिस्र तक पहुंचनेवाली है। जिससे अनाज बढ़ेगा। अकाल दूर होगा। असंख्य अश्व-शक्तियां (हॉर्स-पावर) जितनी शक्ति मनुष्यकी सेवाके लिअे मिलेगी। अतः अैसी प्रवृत्तिको तो आशीर्वाद ही देना चाहिये। फिर भी हृदय कहता है कि मनुष्य-जाति जिसके बदले कुछ अैसी चीज खोनेवाली है, जिसकी पूर्ति बड़ेसे बड़े वैभवसे भी नहीं हो सकेगी।

नील नदी माता थी, देवी थी। अब वह वर्तमानकालकी लोकधात्री दासी बननेवाली है!

नवंबर, १९५०

७०

वर्षा-गान

कालिदासका अेक श्लोक मुझे बहुत ही प्रिय है। अुर्वशीके अंतर्धान होने पर वियोग-विह्वल राजा पुरूरवा वर्षा-ऋतुके प्रारंभमें आकाशकी ओर देखता है। अुसको भ्रांति हो जाती है कि अेक राक्षस अुर्वशीका अपहरण कर रहा है। कविने अिस भ्रमका वर्णन नहीं किया; किन्तु वह भ्रम सहज भ्रम ही है, अिस बातको पहचाननेके बाद, अुस भ्रमकी जड़में असली स्थिति कौनसी थी, अुसका वर्णन किया है। पुरूरवा कहता है — "आकाशमें जो भीमकाय काला-कलूटा दिखाअी देता है, वह कोअी अुन्मत्त राक्षस नहीं किन्तु वर्षाके पानीसे सराबोर भरा हुआ अेक बादल ही है। और यह जो सामने दिखाअी देता है वह अुस राक्षसका धनुष नहीं, प्रकृतिका अिन्द्र-धनुष ही है। यह जो बौछार है, वह बाणोंकी वर्षा नहीं, अपितु जलकी धाराअें हैं और बीचमें यह जो अपने तेजसे चमकती हुअी नजर आती है, वह

मेरी प्रिया अुर्वशी नहीं, किन्तु कसौटीके पत्थर पर सोनेकी लकीरके समान विद्युल्लता है!"

कल्पनाकी अुड़ानके साथ आकाशमें अुड़ना तो कवियोंका स्वभाव ही है। किन्तु आकाशमें स्वच्छन्द विहार करनेके बाद पंछी जब नीचे अपने घोंसलेमें आकर अितमीनानके साथ बैठता है, तब अुसकी अुस अनुभूतिकी मधुरिमा कुछ और ही होती है। दुनियाभरके अनेकानेक प्रदेश घूमकर स्वदेश वापस लौटनेके बाद मनको जो अनेक प्रकारका संतोष मिलता है, स्थैर्यका जो लाभ होता है और निश्चिन्तताका जो आनन्द मिलता है, वह अेक चिर-प्रवासी ही बता सकता है। मुझे अिस बातका भी संतोष है कि कल्पनाकी अुड़ानके बाद जल-धाराओंके समान नीचे अुतरनेका संतोष व्यक्त करनेके लिअे कालिदासने वर्षा-अृतुको ही पसन्द किया।

* * *

आजकल जैसे यात्राके साधन जब नहीं थे और प्रकृतिको परास्त करके अुस पर विजय पानेका आनन्द भी मनुष्य नहीं मनाते थे, तब लोग जाड़ेके आखिरमें यात्राको निकल पड़ते थे और देश-देशान्तरकी संस्कृतियोंका निरीक्षण करके और सभी प्रकारके पुरुषार्थ साधकर वर्षा-अृतुके पहले ही घर लौट आते थे।

अुस युगमें संस्कृति-समन्वयका 'मिशन' (जीवन-कार्य) अपने हृदय पर वहन करनेवाले रास्ते अनेक खण्डोंको अेक-दूसरेसे मिलाते थे। जीवन-प्रवाहको परास्त करनेवाले पुलोंकी संख्या बहुत कम थी —जो थे, वे सेतु ही थे। अुन सेतुओंका काम था, जीवन-प्रवाहको रोक लेना और मनुष्योंके लिअे रास्ता कर देना। लेकिन जब जीवनको यह बंधन असह्य-सा मालूम होने लगता था, तब सेतुओंको तोड़ डालना और पानीके बहावके लिअे रास्ता मुक्त कर देना प्रवाहका काम होता था। यह था पुराना क्रम। यही कारण था कि नदी-नालोंका बढ़ा हुआ पानी रास्तों और सेतुओंको तोड़े, अुसके पहले ही मुसाफिर अपने-अपने घर लौट आते थे। अिसीलिअे वर्षा-अृतुको वर्षका 'महिमामयी अृतु' माना है।

असलमें 'वर्ष' नाम ही वर्षासे पड़ा है। 'हमने कुछ नहीं तो पचास बरसातें देखी हैं!' अिन शब्दोंसे ही हमारे बुज़ुर्ग प्रायः अपने अनुभवोंका दम भरते हैं।

* * *

बचपनसे ही वर्षा-ऋतुके प्रति मुझे असाधारण आकर्षण रहा है। गरमीके दिनोंमें ठण्डे-ठण्डे ओले बरसानेवाली वर्षा सबको प्रिय होती है। लेकिन बादलोंके ढेरोंसे लदी हुआी हवायें जब बहने लगती हैं, बिजलियां कड़कती हैं और यह महसूस होने लगता है कि अब आकाश तड़क कर नीचे गिर पड़ेगा, तबकी वर्षाकी चढ़ाआी मुझे बचपनसे ही अत्यन्त प्रिय है। क्योंकि अिस आनन्दसे हृदय आकण्ठ भरा हुआ होने पर भी अुसे वाणीके द्वारा व्यक्त न कर पाअूंगा और व्यक्त करने जाअूंगा तो भी अुसकी तरफ हमदर्दीसे कोआी ध्यान नहीं देगा, अिस खयालसे मेरा दम घुटता था।

* * *

आसपासकी टेकरियों परसे हनुमानके समान आकाशमें दौड़नेवाले बादल जब आकाशको घेर लेते थे, तब अुसे देखकर मेरा सीना मानो भारसे दब जाता था। लेकिन सीने परका वह बोझ भी सुखद मालूम होता था। देखते-देखते विशाल आकाश संकुचित हो गया, दिशायें भी दौड़ती-दौड़ती पास आकर खड़ी हो गयीं और आसपासकी सृष्टिने अेक छोटेसे घोंसलेका रूप धारण किया। अिस अनुभूतिसे मुझे वह खुशी होती थी जो पक्षी अपने घोंसलेका आश्रय लेने पर अनुभव करता है।

लेकिन जब हम कारवार गये और पहली बार ही समुद्र-तट परकी वर्षाका मैंने अनुभव किया, तबके आनन्दकी तुलना तो नयी सृष्टिमें पहुंचनेके आनन्दके साथ ही हो सकती है।

* * *

बरसातकी बौछारोंको मैंने जमीनको पीटते बचपनसे देखा था। लेकिन अुसी वर्षाको मानो बेंतसे समुद्रको पीटते देखकर और

समुद्र पर अुसके छांट अुठे देखकर अितने बड़े समुद्रके बारेमें भी मेरा दिल दया और सहानुभूतिसे भर जाता था। बादल और वर्षाकी धारायें जब भीड़ करके आकाशकी हस्तीको मिटाना चाहती थीं तो अुसका मुझे विशेष कुछ नहीं लगता था, क्योंकि बचपनसे ही मैं अिसका अनुभव करता आया था। लेकिन वर्षाकी धारायें और अुनके सहायक बादल जब समुद्रको काटने लगते थे तब मैं बेचैन हो जाता था। रोना नहीं आता था, लेकिन जो-कुछ अनुभव करता था अुसे व्यक्त करनेके लिअे 'फूट-फूटकर' यह शब्द काममें लेनेकी अिच्छा होती है। वर्षा चाहे तो पहाड़ों पर धावा बोल सकती है, चाहे खेतोंको तालाब और रास्तोंको नाले बना सकती है; लेकिन समुद्रको अपनी दरी समेटनेके लिअे बाध्य करना मर्यादाका अतिक्रमण-सा मालूम होता था। अवज्ञाके अिस दृश्यको देखनेमें भी मुझे कुछ अनुचित-सा प्रतीत होता था।

* * *

मेरी यह वेदना मैंने भूगोल-विज्ञानसे दूर की। मैं समझने लगा कि सूर्यनारायण समुद्रसे लगान लेते हैं और अिसीलिअे तप्त हवामें पानीकी नमी छिपकर बैठती है। यही नमी भापके रूपमें अूपर जाकर ठण्डी हुअी कि अुसके बादल बनते हैं, और अन्तमें अिन्हीं बादलोंसे कृतज्ञताकी धारायें बहने लगती हैं, और समुद्रको फिरसे मिलती हैं।

गीतामें कहा गया है कि यह जीवन-चक्र प्रवर्तित है अिसीलिअे जीवसृष्टि भी कायम है। अिसी जीवन-चक्रको गीताने 'यज्ञ' कहा है। यह यज्ञ-चक्र यदि न होता तो सृष्टिका बोझ भगवानके लिअे भी असह्य हो जाता। यज्ञ-चक्रके मानी ही हैं परस्परावलंबन द्वारा सधा हुआ स्वाश्रय। पहाड़ों परसे नदियोंका बहना, अुनके द्वारा समुद्रका भर जाना; फिर समुद्रके द्वारा हवाका आर्द्र होना; सूखी हवाके तृप्त होते ही अुसका अपनी समृद्धिको बादलोंके रूपमें प्रवाहित करना और फिर अुनका अपने जीवनका अवतार-कृत्य प्रारंभ करना — अिस

भव्य रचनाका ज्ञान होने पर जो संतोष हुआ वह अिस विशाल पृथ्वीसे तनिक भी कम नहीं था।

तबसे हर दरिया मेरे लिअे जीवन-धर्मकी पुनर्दीक्षा बन चुका है।

*   *   *

वर्षा-ऋतु जिस तरह सृष्टिका रूप बदल देती है, अुसी तरह मेरे हृदय पर भी अेक नया मुलम्मा चढ़ाती है। वर्षाके बाद मैं नया आदमी बनता हूं। दूसरोंके हृदय पर वसन्त-ऋतुका जो असर होता है, वह असर मुझ पर वर्षासे होता है। (यह लिखते-लिखते स्मरण हुआ कि साबरमती जेलमें था तब वर्षाके अन्तमें कोकिलाको गाते हुअे सुनकर 'वर्षान्ते वसंत' शीर्षकसे अेक लेख मैंने गुजरातीमें लिखा था।)

*   *   *

गरमीकी ऋतु भूमाताकी तपस्या है। जमीनके फटने तक पृथ्वी गरमीकी तपस्या करती है और आकाशसे जीवन-दानकी प्रार्थना करती है। वैदिक ऋषियोंने आकाशको 'पिता' और पृथ्वीको 'माता' कहा है। पृथ्वीकी तपश्चर्याको देखकर आकाश-पिताका दिल पिघलता है। वह अुसे कृतार्थ करता है। पृथ्वी बालतृणोंसे सिहर अुठती है और लक्षावधि जीवसृष्टि चारों ओर कूदने-विचरने लगती है। पहलेसे ही सृष्टिके अिस आविर्भावके साथ मेरा हृदय अेकरूप होता आया है। दीमकके पंख फूटते हैं और दूसरे दिन सुबह होनेसे पहले ही सबकी-सब मर जाती हैं। अुनके जमीन पर बिखरे हुअे पंख देखकर मुझे कुरुक्षेत्र याद आता है। मखमलके कीड़े जमीनसे पैदा होकर अपने लाल रंगकी दोहरी शोभा दिखाकर लुप्त हुअे कि मुझे अुनकी जीवन-श्रद्धाका कौतुक होता है। फूलोंकी विविधताको लजानेवाले तितलियोंके परोंको देखकर मैं प्रकृतिसे कलाकी दीक्षा लेता हूं। अैसी लताअें जमीन पर विचरने लगीं, पेड़ पर चढ़ने लगीं और कुअेंकी थाह लेने लगीं कि मेरा मन भी अुनके जैसा ही कोमल और 'लागुणी' (लगौहाँ) बन जाता है। अिसलिअे बरसातमें जिस

तरह बाह्य सृष्टिमें जीवन-समृद्धि दिखाती देती है, उसी तरहकी हृदय-समृद्धि मुझे भी मिलती है। और बारिश शेष होकर आकाशके स्वच्छ होने तक मुझे अेक प्रकारकी हृदय-सिद्धिका भी लाभ होता है। यही कारण है कि मेरे लिअे वर्षा-ऋतु सब ऋतुओंमें उत्तम ऋतु है। अिन चार महीनोंमें आकाशके देव भले ही सो जायं, मेरा हृदय तो सतर्क होकर जीता है, जागता है और अिन चार महीनोंके साथ मैं तन्मय हो जाता हूं।

'मधुरेण समापयेत्' के न्यायसे वसन्त-ऋतुका अन्तमें वर्णन करनेके लिअे कालिदासने 'ऋतुसंहार' का प्रारंभ ग्रीष्म-ऋतुसे किया। मैं यदि 'ऋतुभ्यः' की दीक्षा लूं और अपनी जीवन-निष्ठा व्यक्त करने लगूं, तो वर्षा-ऋतुसे अेक प्रकारसे प्रारंभ करके फिर और ढंगसे वर्षा-ऋतुमें ही समाप्ति करूंगा।

जुलाअी, १९५२

अनुबन्ध

[सामाजिक जीवनके लिये अत्यंत अुपयोगी अुद्योग-हुनर सीखते या चलाते हुअे कदम-कदम पर जिस ज्ञानकी या जानकारीकी जितनी जरूरत हो, अुतना पूरा ज्ञान अुस वक्त ढूंढ़ लेना और अुसे अपनाना यह जीवनको समृद्ध करनेका स्वाभाविक तरीका है। जीनेके लिअे जो भी प्रवृत्ति करनी पड़े, अुसके साथ सम्बन्ध रखनेवाली अिधर-अुधरकी सब जानकारी हासिल करनेसे बड़ा संतोष होता है और वा-मौके हासिल की हुअी जानकारी आसानीसे हजम होती है और जीवनमें घुलमिल जाती है।

यह सब देखकर शिक्षाशास्त्रियोंने पढ़ाअीका यह नया तरीका चलाया है कि जीवन जीते हुअे अेवं जीविकाका हुनर सीखते और चलाते हुअे जो भी जरूरी ज्ञान लेना या देना पड़े, अुसीको शिक्षाका जरिया बनाया जाय। अिस पद्धतिको अनुबंध या 'को-रिलेशन' कहते हैं।

संस्कृत ग्रंथोंके प्राचीन टीकाकार अिसी शैलीका सहारा लेकर किसी भी ग्रंथको समझाते समझाते अनेक विषयोंकी जानकारी दे देते हैं। और अगर मूल लेखक अनेक विद्या-विशारद रहा और अुसके ग्रंथमें अुन विद्याओंके तत्त्वोंका जिक्र आया, तो टीकाकार अुन सब विद्याओंका जरूरी ज्ञान अपनी टीकामें भर ही देते हैं।

आजकलकी पढ़ाअीकी पाठ्य-पुस्तकोंके साथ नोट्स या टिप्पणियां दी जाती हैं। किताबें अंग्रेजीमें और टिप्पणियां भी अंग्रेजीमें। अिस तरह परभाषा द्वारा पढ़नेकी कृत्रिम स्थितिके कारण विद्यार्थी लोग नोट्स रटने लगे और रटी हुअी चीज अिम्तहानमें लिखकर परीक्षा पास करने लगे। अिस परिस्थितिके कारण नोट्स देनेकी प्रथा काफी बदनाम हो चुकी है और अच्छे-अच्छे शिक्षाशास्त्री दर्सी किताबों पर नोट्स देना अपनी शानके खिलाफ मानते हैं। और कभी-कभी वैसे नोट्स निन्दाके पात्र भी होते हैं।

लेकिन अगर अनुबंधकी दृष्टिसे टिप्पणी लिखी जाय और मौका पाकर जरूरी विविध ज्ञान देनेकी कोशिश की जाय, तो यह पद्धति हर तरहसे शिष्ट और लाभदायी ही है।

मेरे कई अध्यापक-मित्रोंने मेरी चंद किताबें अपनी टिप्पणियों द्वारा विभूषित की हैं। उसमें मैंने उन्हें अपना सहयोग भी दिया है। जहां विद्यार्थियोंको और अध्यापकोंको बड़े पुस्तकालयकी सहूलियत नहीं मिलती, वहां तो उन टिप्पणियोंके द्वारा ही किताबकी पढ़ाई संतोषकारक हो सकती है। किताबोंके ऊपर स्वभाषामें लिखी टिप्पणियां देनेसे अनुबंधका बहुतसा काम हो जाता है। इसलिये शिक्षा-कलाके प्रवीण अध्यापकोंके द्वारा दी हुई टिप्पणियोंको मैंने 'अनुबंध' के जैसा ही माना है। मुझे आशा है कि अगर किसी अध्यापकको यह किताब पढ़ानेका मौका आ जाय, तो वे इन टिप्पणियोंका अनुबन्धके खयालसे ही उपयोग करेंगे। अध्यापककी मददके बिना जो नवयुवक इस किताबको टिप्पणियोंके साथ पढ़ेंगे, उन्हें उनके द्वारा अनुबन्धका कुछ खयाल आ जायगा। का० का०]

मुखपृष्ठका श्लोक

विश्वस्य मातरः ० 'इस प्रकार जितनी नदियोंका स्मरण हुआ उनके नाम मैंने सुना दिये। ये सब विश्वकी माताएँ हैं, और सभी शक्तिशाली हैं तथा महान फल देनेवाली हैं।'

धृतराष्ट्रके प्रश्नके उत्तरमें संजय जब भारतवर्षका वर्णन करता है, तब भारतकी नदियोंके नाम सुनानेके बाद उपसंहारमें यह उक्त वचन कहता है। महाभारतके भीष्मपर्वके नवें अध्यायके २७वें तथा २८वें श्लोकोंके पहले दो-दो चरण लेकर यह श्लोक बनाया गया है।

यथास्मृति : भाव यह है कि नदियां हैं तो अनेक, किन्तु जितनी मुझे याद आयीं उतनोंके नाम मैंने सुना दिये। २७वें श्लोकके अंतके दो चरणोंमें यह स्पष्ट कहा गया है:

तथा नद्यस्त्वप्रकाशाः शतशोऽथ सहस्रशः।

इसी तरह जो ज्ञात नहीं हैं ऐसी तो सैकड़ों और सहस्रों नदियां हैं।

[जिसमें संजयकी (और लेखककी भी ?) अपने देशके प्रति भक्ति दिखाजी देती है। 'सुजलां सुफलां' माताओंकी विपुलता कोजी कम न समझ बैठे, असी अतिस्नेहसे पैदा होनेवाली पापशंका भी क्या जिसमें होगी ?]

जीवनलीला

पृ० ३ ग्राम्यः गांवमें रहनेवाले। ऋग्वेदमें जिस शब्दका जिस अर्थमें प्रयोग किया गया है।

पृ० ५ डलयोः सावर्ण्यम्ः ड तथा ल समान वर्ण हैं। 'डलयोरभेदः' भी कहते हैं।

पृ० ७ लिम्पतीव ० अंधेरा मानो अंगोंको लीपता है और नभ मानो अंजनकी वर्षा करता है।

पृ० ९ देशका मतलब . . . भी हैं : अपभ्रंश भाषाके निम्न पद्यसे तुलना कीजिये :

सरिहिं न सरेहिं न सरवरेहिं नहि अुज्जाणवणेहिं।
देस रवण्णा होन्ति वढ निवसन्तेहिं सुअणेहिं ।।

[हे मूढ़, देश न सरितासे रमणीय बनता है, न सरोंसे; न सरोवरोंसे बनता है, न अुद्यान-वनोंसे। बल्कि अुसमें बसनेवाले सुजनोंसे रमणीय बनता है।]

सरिता-संस्कृति

पृ० ११ क्षेमेन्द्रः ग्यारहवीं सदीके अेक काश्मीरी पंडित कवि। कहते हैं कि जिन्होंने चालीससे अधिक ग्रंथोंकी रचना की थी, जिनमें 'भारतमंजरी', 'बृहत्कथामंजरी', 'नृपावलि', 'सुवृत्ततिलक', 'औचित्य-विचारचर्चा', 'कविकंठाभरण' आदि ग्रंथ प्रसिद्ध हैं।

पृ० १२ मीनलदेवी : कर्णाटककी चंद्रावती नगरीकी राजकन्या, कर्णदेव सोलंकीकी पत्नी, सिद्धराज जयसिंहकी माता; धोलकाका विख्यात 'मलाव' तालाव तथा वीरमगामका 'मुनसर' तालाव जिसीने बनवाये थे। जिसने सोमनाथके दर्शनके लिये जानेवाले हर यात्री पर लगाया गया कर बंद करवा दिया था। यह बड़ी प्रजावत्सल रानी थी।

अुर्वशी : 'अुर्' देशकी अुर्वशी।

नदी-मुखेनैव समुद्रम् आविशेत्

पृ० १४ कूल-मर्यादा : कूल=किनारा। किनारेकी मर्यादा। 'कुल-मर्यादा' शब्द परसे यह शब्द बनाया गया है।

नामरूपको त्यागकर . . . जाती है : मुंडकोपनिषद्का निम्न वचन याद कीजिये :

यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रे
अस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय।

[जिस प्रकार बहती हुअी नदियां नामरूपको त्यागकर समुद्रमें अस्त हो जाती हैं।]

अुपस्थान

पृ० १५ अुपस्थान : वंदना, पूजा, अुपासना। जैसे, सूर्यका या संध्याका अुपस्थान।

हमारे पूर्वजोंकी नदी-भक्ति : लेखक सरस्वतीपुत्र सारस्वत हैं, अिस बातका यहां स्मरण हुअे बिना नहीं रहता।

भक्तिके अिन अुद्गारोंका श्रवण करके : भक्तिका श्रवण करके; श्रवण-भक्ति करके। अुद्गार=वचन। (प्रेम और आदरपूर्वक सुनना भी भक्तिका ही अेक पुण्यप्रद प्रकार है।)

संस्कृति-पुष्प : संसारकी बहुतसी संस्कृतियोंका विकास नदियोंके किनारों पर ही हुआ है। अुदाहरणके लिअे, अिजिप्त (मिस्र)की संस्कृति नील नदीके किनारे विकसित हुअी है। खाल्डिया (अिराक) की संस्कृति युफ्रेटिस और टैग्रिसके किनारे; चीनकी संस्कृति यांग्त्सेक्यांग तथा ह्वांगहोके किनारे; मध्य अेशियाकी संस्कृति अमु और सरके किनारे और भारतकी संस्कृति पंचसिंधु, गंगा-यमुना, ताप्ती-नर्मदा और कृष्णा-गोदावरीके किनारे विकसित हुअी है।

पृ० १६ भगवान सूर्यनारायणके प्रेमके बारेमें : ताप्ती—तपती सूर्यकी पुत्री मानी जाती है। यह संवरण राजाकी पत्नी और कुरुकी

माता थी। गुजराती कवि प्रेमानंदके नामसे चलनेवाले 'सपत्याख्यान' में उसकी कथा है।

पृ० १७ 'ऐतिहासका अुषाकाल' : सामान्य तौरसे 'अुषःकाल' शब्द अुपयोगमें लाया जाता है। किन्तु यहां जान-बूझ कर 'अुषाकाल' शब्दका प्रयोग किया गया है। स्थानीय इतिहासमें कहा गया है कि ब्रह्मपुत्रके अुत्तर किनारे पर तेजपुरके पास बाणासुर और अुषा रहते थे।

अुषा-अनिरुद्धकी कथा भागवतके दशम स्कंधके ६२–६३ वें अध्यायमें आती है। बलिके पुत्र बाणासुरकी कन्या अुषाका एक बार स्वप्नमें किसी सुंदर युवकसे समागम हुआ। स्वप्नके अुड़ जाने पर वह अुसके वियोगसे बड़बड़ाने लगी। अुसकी सखी चित्रलेखाने यह बड़बड़ाहट सुनी। पूछने पर अुषाने स्वप्नकी बात कह सुनायी और कहा कि अिस पुरुषसे विवाह किये बगैर मैं जीवित नहीं रह सकती। चित्रलेखाने अेकके बाद अेक अनेक चित्र खींचकर अुसे दिखाये। अंतमें कृष्णके पौत्र अनिरुद्धकी तस्वीर देखकर अुसने कहा, वही है वह पुरुष जिसको मैंने स्वप्नमें देखा था।

अिसके अनंतर चित्रलेखा योगबलसे द्वारका जाती है। वहांसे सोते अनिरुद्धको पलंगके साथ अुठाकर ले आती है। अुषा-अनिरुद्ध गांधर्व विधिसे विवाह कर लेते हैं और चार महीने साथमें बिताते हैं। अुषाके पिताको जब पता चलता है कि अुषाके मंदिरमें कोअी पुरुष रहता है, तब वह क्रोधके मारे वहां आकर अनिरुद्ध पर टूट पड़ता है। दोनोंके बीच युद्ध होता है। अिसमें बाणासुर अनिरुद्धको नागपाशसे बांधकर गिरफ्तार कर लेता है।

अिधर द्वारकामें अनिरुद्धकी खोज शुरू होती है। नारदने आकर खबर दी कि अनिरुद्धको तो शोणितपुर (आजकलके तेजपुर)में बाणासुरने कैद कर रखा है। अिससे क्रुद्ध होकर यादव शोणितपुर पर हमला करते हैं और बाणको हराकर अुषा-अनिरुद्धके साथ बड़ी धूम-धामसे द्वारका वापस लौटते हैं।

संभूय-समुत्थानका सिद्धान्त : अेकत्र होकर अुन्नति करनेका सिद्धान्त। Joint Stock का सिद्धान्त। स्मृतियोंमें यह शब्द मिलता है।

पृ० १८ समुद्रसे मिलने जाते . . . एक जानेवाली : दक्षिण गुजरातमें वलसाड़के पासकी 'वांकी' नदी भी अपने नामकी ही तरह टेढ़ी-तिरछी होती हुअी ठेठ समुद्रके पास आकर अैसी टेढ़ी होती है कि दो तीन मील अुत्तर दिशाकी ओर बहकर औरंगासे मिलती है और अुसीके साथ समुद्रसे जा मिलती है।

पृ० २० गति देनी होगी : वासना-पीड़ित भूतोंको मांत्रिक गति देते हैं अुस प्रकार।

१. सखी मार्कण्डी

पृ० ३ मार्कण्डी : बेलगांवसे नौ मीलकी दूरी पर लेखकके गांव बेलगुंदीके पास बहनेवाली छोटीसी नदी।

बैजनाथ : (सं० वैद्यनाथ) बेलगांवका अेक पहाड़। धंधोंके कहे अनुसार अिस पहाड़ पर मूल्यवान वनस्पतियां हैं।

हमारे तालुकेका : कर्णाटकके बेलगांव तालुकेका।

पृ० ४ मार्कण्डेय : मृकंडु मुनिका पुत्र, मार्कण्ड।

साधू सुंदर : मध्यकालके अेक कवि द्वारा रचित मार्कण्डेय अुपाख्यानमें ये पंक्तियां आती हैं। मराठी स्त्रियोंमें कअियोंको ये मुखाग्र होती हैं।

मृत्युंजय : महादेवजीका नाम। यह बहुव्रीहि समास है। अिसमें विभक्तिके प्रत्ययका लोप नहीं होता। तुलना कीजिये : धनंजय, समितिंजय, गणंजय (dictator)।

अुसकी आयुधारा : कथामें कहा गया है कि अुसे सात या चौदह कल्पका आयुष्य मिला था। अिस परसे जब किसीको दीर्घजीवी होनेका आशीर्वाद दिया जाता है, तब 'मार्कण्डायुर्भव' कहा जाता है। किन्तु अिस लेखमें अिसका अर्थ है यह नदीरूपी आयुधारा। यह लेखककी कल्पना है।

पृ० ५ भाअी-दूज : कार्तिक सुदी दूज। अिस दिन यमुनाने अपने भाअी यमको अपने घर बुलाकर अुसकी पूजा की थी तथा अुसको खाना खिलाया था। अिसलिअे अिस दिनको यम-द्वितीया भी कहते हैं। अिस

दिन बहन अपने भाजीकी पूजा करती है और खाना खिलाते समय नीचेका मंत्र बोलकर अुसे आचमन करवाती है:

भ्रातस् तवानुजाताऽहं भुंक्ष्व भक्तम् मिदम् शुभम्।
प्रीतये यमराजस्य यमुनाया विशेषतः॥

[हे भैया, मैं आपकी छोटी बहन हूं। मेरा पकाया हुआ यह शुभ अन्न आप भक्षण कीजिये, जिससे कि यमराज और खास करके अुनकी बहन यमुना प्रसन्न हो जायं।]

बहन बड़ी हो तो 'भ्रातस्तवाग्रजाताहं' कहती है।

मृगनक्षत्र : भाद्री-पूस जाड़ोंमें आता है। अुन दिनों मृगनक्षत्र सारी रात आकाशमें होता है। अैसी 'मृगनीता रात्रयः'।

लावण्य : (सं० लवण + य) मिठास, झलक, यौवनकी कांति। अुसका लक्षण :

मुक्ता-फलेषु छायायाः तरलत्वम् मिवान्तरा।
प्रतिभाति यद् अंगेषु तल्लावण्यम् मिहोच्यते॥

२. कृष्णाके संस्मरण

पृ० ५ सातारा : कृष्णाके किनारे स्थित नगर। लेखकका जन्म-स्थान। यह शाहु आदि महाराष्ट्रके राजाओंकी राजधानी था।

श्री शाहु महाराज : शिवाजीका पौत्र। संभाजीका पुत्र। अुसका नाम शिवाजी था। औरंगजेबने अुसका नाम शाहु रखा था। बचपनमें अुसको दिल्लीके दरबारमें कैद रहना पड़ा था। वहांके भोगे हुओ अैश-आरामके कारण अुसने राज्यका कारोबार अपने प्रधान — पेशवाको सौंप दिया था और स्वयं सातारामें रहता था।

पृ० ६ हम बच्चे : लेखक तथा अुनके भाओ।

'वासुदेव' : मोरपंखोंकी टोपी पहनकर भजन गाते हुओ भीख मांगनेवाले अेक याचक संप्रदायके लोग।

वेण्या : साताराकी अेक छोटीसी नदी।

'नरसोबाची वाड़ी' : कृष्णाके किनारे कुरुंदवाड़के समीप यह स्थान है। यह दत्तात्रेयका तीर्थस्थान है।

पृ० ७ अमृत-खेत: अमृत जैसे मीठे फल देनेवाले खेत।

जिसने अेकाध बार . . . अिच्छा करेगा: सिक्खोंके गुरु नानकशाके संबंधमें अेक लोककथा प्रचलित है। कहते हैं कि वे स्वर्गमें गये, किन्तु वहां पर भी वे अुदास रहने लगे। भगवानने अिसका कारण पूछा, तो जवाब मिला: 'स्वर्गमें सब कुछ है। किन्तु मकअीके भुट्टे नहीं हैं, न सरसोंकी सब्जी है। यह खानेके लिअे पृथ्वी पर वापस जानेकी अिच्छा होती है।'

लोक-मानस ही अैसी कथाअें गढ़ सकता है।

सांगली: कृष्णाके तट पर स्थित अेक शहर। स्वातंत्र्यपूर्व कालकी अेक रियासत।

अेकश्रुति: यह वैदिक शब्द है। अिसका अर्थ है, 'जिसमें विविधता न हो अैसा।' वेदोंमें तीन प्रकारके अुच्चार बताये गये हैं: अुदात्त, अनुदात्त और स्वरित। अिनमें से किसी अेकको लेकर बिना किसी प्रकारका फर्क किये लगातार अुच्चारण करना 'अेकश्रुति' अुच्चार या आवाज है। अंग्रेजी 'मोनोटोनस'।

श्रीसमर्थ: स्वामी रामदास। श्री शिवाजी महाराजके गुरु। वे ब्रह्मचारी थे। अुन्होंने अनेक मठोंकी स्थापना की तथा धर्म-प्रचार किया। 'दासबोध', 'मनोबोध' आदि प्रख्यात ग्रंथोंके रचयिता।

पृ० ८ घोरपडे: संताजी। शिवाजीके अेक सेनापति। राजारामके समयमें धनाजी और संताजी घोरपडे अिन दो सेनापतियोंके बीच बहुत बड़ा विरोध था। घोरपडे मुरारराव (१७०४–१७७७) भी शाहूके मुख्य सरदारोंमें से अेक थे। अपने पराक्रमसे सारा कर्णाटक जीतकर अिन्होंने गुत्तीमें राजधानीकी स्थापना की थी, अिसलिअे अुन्हें 'गुत्तीकर घोरपडे' भी कहते थे। चन्दा साहबके साथ पेशवाओंका त्रिचिनापल्लीमें जो घोर युद्ध हुआ, अुसमें अिन्होंने पेशवाओंको विजय दिलायी। अिसलिअे शाहूने अुन्हें कर्णाटककी 'सरदेशमुखी' और त्रिचिनापल्लीके किलेकी 'सूबेदारी' दे दी थी। अन्तमें हैदरने अुन्हें कैद करके चांदीकी हथकड़ी-बेड़ी पहनाकर कपालदुर्गमें रखा था। वहीं अुनका अंत हुआ।

पटवर्धन : परशुराम भाऊ (१७३९–१७९९) सवाली माधवराव पेशवाके समयके बड़े सेनापति। बड़े शूरवीर तथा बहादुर थे। हैदरके साथ जो युद्ध हुआ, उसमें जिनके अंकके पीछे अेक तीन घोड़े मारे गये, किन्तु वे घबड़ाये नहीं। १७८१ में उन्होंने अंग्रेज सेनापति गोडार्डको परास्त किया। १७९६ में नाना फडनवीससे जिनकी कुछ अनबन हो गयी। जिसलिअे फडनवीसने जिनको कैद कर लिया। १७९८ में वे रिहा हुअे। किन्तु फौरन पट्टणकुडीके युद्धमें शामिल हुअे और वहीं लड़ते लड़ते मारे गये।

नाना फडनवीस : (१७४२–१८००) मराठाशाहीके अंतिम कालके अेक महान चतुर राजनीतिज्ञ।

रामशास्त्री प्रभुणे : (१७२०–१७८९) पेशवाओं जमानेके अेक प्रख्यात न्यायशास्त्री। बीस सालकी अुम्र तक वे निरक्षर ही थे। जिस साहूकारके यहां वे नौकरी करते थे, अुसने जिनसे कुछ मर्मभेदी वचन कहे। अतः ये पढ़नेके लिअे काशी चले गये और बड़े विद्वान धर्मशास्त्री बने। १७५१ में पेशवाओंके दरबारमें अुन्होंने सेवा स्वीकार की और १७५९ में मुख्य न्यायाधीश बने। वे अत्यंत निःस्पृह थे। बड़े माधवराव जिनकी सलाहके अनुसार चलते थे। नारायणरावके खूनके लिअे राघोबाको देहांत प्रायश्चित्त लेनेकी बात अुन्होंने बिना किसी हिचकिचाहटके कही थी।

देहू : अिन्द्रायणी नदीके किनारे स्थित अेक गांव। पूनाके पास है। महाराष्ट्रके संत तुकारामका गांव होनेसे पवित्र माना जाता है।

आळंदी : अिन्द्रायणी नदीके किनारे बसा हुआ अेक गांव। पूनासे अधिक दूर नहीं है। यहां श्री ज्ञानेश्वरने जीवित अवस्थामें समाधि ली थी। देहू-आळंदीकी नदी अिन्द्रायणी भीमा नदीसे मिलती है। यह भीमा पंढरपुरके पास टेढ़ी बहती है, जिसलिअे वहां अुसे चंद्र-भागा कहते हैं। जिसके बाद ही वह बड़ी होकर कृष्णासे मिलती है।

तुंगभद्रा : तुंगा और भद्रा, ये दो नदियां मिलकर तुंगभद्रा बनती है। देखिये : 'मुळा-मुठाका संगम' (पृ० ११)। तुंगभद्राके किनारे हंपीके पास कर्णाटक साम्राज्यकी राजधानी विजयनगर बसा हुआ था।

तेलंगण : त्रिलिंगका प्रदेश । 'जिसके पेटमें कृष्णाकी बेक बूंद भी पहुंच चुकी है, वह अपना महाराष्ट्रीयपन कभी भूल नहीं सकता।' और 'कृष्णामें पक्षपाती प्रांतीयता नहीं है।'—क्या इन दो वचनोंके बीच विरोध है? लेखकका कहना है कि महाराष्ट्रके सद्गुणोंके प्रति मनमें आदरभाव तो रहने ही वाला है; किन्तु तीनों प्रांतोंके प्रति आत्मीयता जाग्रत होने पर मनमें संकीर्णता आ ही नहीं सकती।

पहाड़की अस्थियां : पत्थर।

पृ० ९ जीवनकी लीला : जीवन यानी जल और जीवन यानी जिंदगी। यहां इसका दोनों अर्थोंमें प्रयोग किया गया है।

अनंतबुआ मरढेकर : काकासाहबके प्रिय सुहृद्, जिनकी पवित्र स्मृतिमें काकासाहबने अपनी 'हिमालयकी यात्रा'* पुस्तक अर्पण की है।

श्रीसमर्थ रामदास स्वामी तथा उनके शिष्योंने जो अनेक मठ स्थापित किये हैं, उनमें 'मरढे मठ' भी एक है। इस मठके गृहस्थाश्रमी मठपतियोंके वंशमें अनंतबुआका जन्म हुआ था। जिनके पिता पुराणिक तथा कीर्तनकार थे। अनंतबुआ प्रथम मराठी ट्रेनिंग कॉलिजमें शिक्षक थे। बादमें वे काकासाहबसे पहले बड़ौदाके 'गंगनाथ विद्यालय' में शरीक हुये। इस विद्यालयके लिये चंदा इकट्ठा करनेके हेतुसे वे बड़ौदा राज्यमें सर्वत्र घूमते थे। उनका मासिक खर्च कभी भी दस रुपयेसे अधिक नहीं हुआ। संस्थाके नियमके अनुसार उन्हें खर्चके अलावा जेबखर्चके लिये पांच रुपये अधिक लेने पड़ते थे। वे इन पांच रुपयोंका उपयोग विद्यार्थियोंके लिये अथवा हिसाबमें गलती हुई हो तो उसमें जोड़नेके लिये करते थे। रहन-सहनमें इनकी तुलना गुजरातके प्रसिद्ध रचनात्मक कार्यकर्ता श्री रविशंकर महाराजसे की जा सकती थी। उनके पवित्र जीवनको देखकर कभी लोग उनसे कंठी मांगते थे। किन्तु उन्होंने कभी किसीको कंठी नहीं दी। वे कहा करते थे कि 'मुझमें वह योग्यता नहीं है।'

---

* हिन्दीमें 'हिमालयकी यात्रा' नवजीवन प्रकाशन मंदिरकी ओरसे प्रकाशित हो चुकी है। कीमत २-०-०, डा० खर्च ०-१½-०।

हृदयकी भावनासे: आदरभावसे। लेखकके प्रति वे असाधारण आदरभाव रखते थे अिसलिअे।

बड़े भाअी: राष्ट्रीय शिक्षाका कार्य वे लेखकके पहलेसे करते आ रहे थे और लेखककी दृष्टिमें अधिक त्यागी थे अिसलिअे।

गंगोत्री: हिमालयका अेक तीर्थस्थान। गंगा यहींसे निकलती है। असलमें गंगाका अुद्गम होता है 'गोमुख' से, जो गंगोत्रीसे करीब चौदह मील दूर है।

अमरनाथ: यह तीर्थस्थान काश्मीरमें है। यहां अेक गुफामें बर्फका स्वयंभू शिवलिंग पाया जाता है।

अमर हुअे: स्वर्गवासी हुअे।

वाअी: कृष्णाके किनारे पर स्थित पवित्र तीर्थस्थान। यहां संस्कृत विद्याकी परंपरा अुत्तम रूपमें सुरक्षित है।

वाअीके . . . गंगाका: वाअीके लोग प्रेमभक्ति-पूर्वक कृष्णाको गंगा कहते हैं।

शिरस्नान: वर्षाऋतुमें वाअीके कुछ मंदिर नदीके पानीमें कलश तक पूरे डूब जाते हैं।

स्वराज्य-ऋषि: स्वराज्यका 'ध्यान' करनेवाले, स्वराज्यके लिअे 'तपश्चर्या' करनेवाले और स्वराज्यका 'मंत्र' देनेवाले। 'स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है' लोकमान्यका यह वचन प्रसिद्ध है।

पृ० १० पट-वर्धन: पट=वस्त्र; वर्धन=वृद्धि करनेवाले। द्रौपदी वस्त्र-हरणका किस्सा याद कीजिये।

चरखे और . . . अुतनी ही संख्यामें: बीस लाख चरखे चलानेकी बात तय हुअी थी।

बेजवाड़ा: आंध्र प्रांतका अेक मुख्य शहर। यह भी कृष्णाके तट पर ही है।

श्री अब्बास साहब: (१८५४–१९३६) नित्य-युवा देशभक्त श्री अब्बास तैयबजी। तीसरी महासभा (कांग्रेस) के प्रमुख श्री बदरुद्दीन तैयबजीके भतीजे। बादमें अुन्हींके दामाद। पूर्व जीवनमें आप बड़ौदा राज्यकी बड़ी अदालतके न्यायाधीश थे। अुत्तर जीवनमें आप

पर गांधीजीका असर हुआ। अुस समय गुजरातके सार्वजनिक जीवनमें आपने महत्त्वका हिस्सा अदा किया था। पंजाबके हत्याकांडकी तहकीकातमें, असहयोग आंदोलनमें, तिलक-स्वराज्य-फंड अिकट्ठा करनेमें, सरकारी शालाओं तथा परदेशी कपड़ोंकी दुकानों पर चौकी करनेमें, खादी-फेरीमें, हिन्दू-मुस्लिम-अेकताके प्रयत्नोंमें, बाढ़-संकट-निवारणमें, रानीपरज लोगोंकी मदद करनेमें, बारडोलीके आन्दोलनमें तथा नमक-सत्याग्रहके समय धरासणाके आगर पर हुअे सत्याग्रहका नेतृत्व करनेमें आपकी अनेकविध देशसेवाको प्रगट होते हमने देखा है।

श्री पुणतांबेकर: बम्बअीके राष्ट्रीय महाविद्यालयके अुस समयके आचार्य। आप बैरिस्टर थे। बादमें बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें अितिहासके मुख्य अध्यापकके तौर पर तथा नागपुर विश्वविद्यालयमें राजनीति-विभागके मुख्य अध्यापकके तौर पर आपने काम किया था।

गिदवाणीजी: गुजरात विद्यापीठके पहले कुलनायक (वाअिस-चान्सलर) और गुजरात महाविद्यालयके पहले आचार्य। पूरा नाम: असुदमल टेकचंद गिदवाणी। गुजरातमें आनेके पहले आप दिल्लीके रामजस कॉलिजके प्रिन्सिपाल थे।

कृष्णाम्बिका: कृष्णामैया।

रामशास्त्री: रामशास्त्री प्रभुणे वाअीके पास कृष्णाके तट पर रहे थे अिसलिअे।

नाना फडनवीस: वाअीके पास मेणवलीमें रहते थे अिसलिअे।

'राष्ट्रीय' हिन्दी: शुद्ध हिन्दी तो है प्रान्तीय हिन्दी। अनेक भाषाओंके असरसे बनी हुअी हिन्दीका नाम है राष्ट्रीय हिन्दी!!

जन्मकाल्का: लेखकके जन्मकालका।

३. मुळा-मुठाका संगम

पृ० ११ अपवादके बिना . . . नहीं चलते: Exception proves the rule. 'अुत्सर्गाः सापवादाः'।

मिसिसिपी-मिसोरी: अिसकी लंबाअी ५४३१ मीलकी है। ये दोनों नदियां जहां मिलती हैं, वहांका पट ५००० फुट चौड़ा है।

द्वन्द्व समासमें : दोनों पद समान कक्षाके होते हैं, जिस बात पर यहां जोर दिया गया है।

सीता-हरणसे लेकर . . . तकका जितिहास : कहते हैं कि रावण जब सीताको जुठाकर ले गया था, तब सीताकी साड़ीका पल्ला हंपीके पास अेक बड़ी शिला पर घिस गया था, जिसकी रेखायें जुस शिला पर अब तक दिखाजी देती हैं! विजयनगरके साम्राज्यका कारोबार भी तुंगभद्राके तट पर ही चलता था। जिस साम्राज्यकी स्थापना सन् १३४६ में हुआी थी। जिसका विस्तार कृष्णासे लेकर कन्याकुमारी तक था। सवा दो सौ साल तक मुसलमानोंके हमलोंका सामना करके सन् १५६५ में जिस साम्राज्यका अंत हुआ। जिसका पूरा जितिहास 'अे फरगॉटन अेम्पायर' नामक अंग्रेजी पुस्तकमें तथा 'विजयनगरके साम्राज्यका जितिहास' नामक हिन्दी पुस्तकमें दिया गया है।

खडक-वासला : पूनासे सिंहगढ़ जाते समय रास्तेमें यह स्थान है। यहां पूनाका जलागार (वॉटर वर्क्स) है। स्वतंत्र भारतके 'राष्ट्ररक्षा विद्यालय' के लिअे भी यही स्थान पसंद किया गया है। देखिये पृ० १३

मुंडी टेकरियां : संन्यासीके जैसी; जिनके सिर पर अेक भी पेड़ नहीं है जैसी।

चिन्ताचालक : मनुष्य जब चितामें रहता है तब जुसकी आंखें बार-बार खुलती-बन्द होती रहती हैं। सितारे भी सारी रात जिसी तरह झिलमिलाते रहते हैं। यहां अर्थ है पानीके हिलनेसे होनेवाली झिलमिलका प्रतिबिंब।

बांग : यह फारसी लफ्ज है। मस्जिदमें नमाजके पहले 'नमाजका समय हुआ है, नमाज पढ़नेके लिअे आजिअे,' अैसा बतानेके लिअे बड़े जोरकी जो आवाज दी जाती है जुसको बांग कहते हैं। अरबीमें जिसीको अजान कहते हैं। यहां बांग शब्दका सामान्य अर्थ पुकार है।

लकड़ी-पुल : शायद पहले यह पुल लकड़ीका रहा हो या जिसके पासमें ही लकड़ी बेची जाती रही हो। अहमदाबादके लोहेके 'अेलिसब्रिज' को भी 'लकड़िया पुल' कहते हैं।

पृ० १२ ओंकारेश्वर : यहां अेक स्मशान है। दूसरा स्मशान लकड़ी-पुलके पास है।

कैप्टन मॅलेट : पेशवाओंको नष्ट करनेके लिअे षड्यंत्र रचनेवाला अंग्रेज।

भांडारकर : डॉ० सर रामकृष्ण गोपाल भांडारकर। संस्कृत विद्या और प्राच्य विद्याके संशोधनमें पारंगत। प्रार्थना समाजके नेता।

गुजरातके अेक लक्ष्मीपुत्र : जिन विश्वविद्यालयके साथ जिनका नाम जोड़ा गया है वे सर विट्ठलदास दामोदरदास ठाकरसी।

अुत्तुंग-शिरस्क : अूंचे सिरवाली।

मन्त्रनामधेय : मन्त्र नामवाली। मकान तो बड़े राजमहलके जैसा है, किन्तु अुसका नाम है 'पर्णकुटी'। अिसी मकानमें गांधीजीने दो बार अनशन किया था।

यरवडाका कैदखाना : छोटे-बड़े असंख्य देशवीरोंके और खास तौरसे गांधीजीके कारावासके कारण तथा वहां हुअे हरिजनोंके मताधिकार संबंधी करारके कारण यह कैदखाना देशमें और समस्त दुनियामें प्रसिद्ध हो चुका है। गांधीजी अिसको 'यरवडा मंदिर' कहते थे।

प्राणहरणपटु : प्राण लेनेमें कुशल।

भिक्षाधीश : भिक्षाके अधिकारी भिखारी। लक्षाधीशके साथ तुक मिलानेके लिअे अिस शब्दकी योजना की गअी है।

पृ० १३ निसर्गोपचार भवन : सन् १९४४ में जेलसे रिहा होनेके बाद गांधीजीने निसर्गोपचारका प्रचार किया था। अुसी दरमियान वे कुछ समय तक अिस निसर्गोपचार भवनमें रहे थे। अुरुलीकांचनमें भी अुन्होंने अेक नया निसर्गोपचार केंद्र खोला था, जो अब तक चल रहा है।

सिंहगढ़का निवास : लेखकको क्षयरोग हुआ था, तब वे काफी समय तक सिंहगढ़में रहे थे। अुस बातका यहां जिक्र है।

४. सागर-सरिताका संगम

पृ० १४ सरोला वन : लेखककी 'स्मरण-यात्रा' में 'सरो पार्क' नामक प्रकरण देखिये। (यह पुस्तक हिंदीमें नवजीवन प्रकाशन मंदिरकी

ओरसे प्रकाशित हुआ है; की० ३–८–०, डा० खर्च १–२–०।) जिसमें काकासाहबकी छठे बरससे लेकर अठारह बरस तककी जीवन-यात्राका वर्णन है।

जब कि अपनी मर्यादाको . . . सामने हो जाता है : चंद्रके असरके कारण जब सागरमें भाटा आता है तब पानी रास्ता बना देता है; और ज्वारके समय उभरकर जब नदीमें घुस जाता है तब सामने हो जाता है।

पृ० १६ जमनोत्री : हिमालयमें उत्तराखंडका एक तीर्थस्थान। यहींसे यमुना निकलती है।

महाबलेश्वर : यह कृष्णाका उद्गम-स्थान है। यह स्थान सातारामें है।

त्र्यंबक : नासिकके पासका स्थान। यह गोदावरीका उद्गम-स्थान है।

उद्गमकी खोज : "मेरी धारणा है कि गंगोत्री, जमनोत्री, केदार, बदरी, अमरनाथ, खोजरनाथ, मानसरोवर, राकसताल, परशुराम कुंड, अमरकंटक, महाबलेश्वर, त्र्यंबक आदि सारे तीर्थस्थान नदीका उद्गम खोजनेकी प्राकृतिक जिज्ञासाके ही परिणाम हैं। उत्तरी ध्रुवके आसपास रहनेवाले आर्य लोग जिस प्रकार जिस बातकी खोज करनेके लिये बाहर निकले कि हमें अुष्णता देनेवाला सूर्य कहांसे अुदय होता है और कहां अस्त होता है, और चारों महाद्वीपोंमें फैल गये, अुसी प्रकार हिन्दुस्तानकी संतानें अपने-अपने ढोर-बछेरू लेकर, या अकेले ही, नदीके अुद्गमकी खोज करती हुअी घूमी हों तो कोअी आश्चर्य नहीं।" — 'हिमालयकी यात्रा', प्रकरण २१, पृ० १०९।

अजंताकी गुफाओंके पास भी एक छोटीसी नदीका अुद्गम है।

शंकरराव गुलवाड़ीकी : कारवारकी ओरके एक सर्वोदय कार्यकर्ता।

कवि बोरकर : गोवाके कोंकणी तथा मराठी भाषाके प्रसिद्ध कवि।

५. गंगामैया

पृ० १७ देवव्रत भीष्म : शांतनु और गंगाके आठवें पुत्र देवव्रत। अपने पिता शांतनु सत्यवती नामक धीवर-राजकी कन्यासे विवाह कर सकें, जिसलिअे अुन्होंने आजीवन ब्रह्मचारी रहनेकी भीषण प्रतिज्ञा

ली थी और अुसे पाला था। अिसलिअे वे भीष्मके नामसे प्रसिद्ध हुअे। अिसी कारण आज भी जब कोअी बड़ी प्रतिज्ञा लेता है, तब अुस प्रतिज्ञाको हम 'भीष्म प्रतिज्ञा' कहते हैं। भीष्म = भीषण, भयंकर।

आर्योंके बड़े-बड़े साम्राज्य : हर्षका, मौर्योंका आदि।

कुरु पांचाल : दिल्लीके आसपासका प्रदेश कुरु और गंगा-यमुनाके बीचका प्रदेश पांचाल कहा जाता था।

अंग-बंगादि : गंगाके दायें तट पर जो प्रसिद्ध राज्य था अुसका नाम था अंग। चंपा अुसकी राजधानी थी। यह नगरी आजकलके भागलपुरके स्थान पर या अुसके आसपास कहीं थी। बंग कहते हैं पूर्व बंगालको। अिसमें बंगालके समुद्र-तटका भी समावेश होता था। अुत्तर बंगालका नाम था गौड़ या पुंड्र।

पृ० १८ जब हम गंगाका दर्शन करते हैं . . . स्मरण हो आता है : गंगाके तट पर सिर्फ खेती और व्यापारका ही विकास नहीं हुआ है, बल्कि काव्य, धर्म, शौर्य और भक्ति — संक्षेपमें पूरी संस्कृतिका विकास हुआ है।

श्री जवाहरलाल नेहरूने अपनी 'डिस्कवरी ऑफ अिंडिया' नामक पुस्तकमें भारतकी नदियोंके बारेमें लिखते हुअे गंगाके सिलसिलेमें अिस प्रकार लिखा है :

"... and the Ganga, above all *the* river of India, which has held India's heart captive and has drawn uncounted millions to her banks since the dawn of history. The story of the Ganga, from her source to the sea, from old times to new, is the story of India's civilization and culture, of the rise and fall of empires, of great and proud cities, of the adventure of man and the quest of the mind which has so occupied India's thinkers, of the richness and fulfilment of life as well as its denial and renunciation, of ups and downs, and growth and decay, of life and death." p. 43

". . . और गंगा तो खास तौर पर भारतकी नदी है। अितिहासके अुषःकालसे यह भारतके हृदय पर अपनी सत्ता जमाती आयी

है और अपने तटों पर असंख्य लोगोंको आकर्षित करती आयी है। गंगाके अुद्गमसे लेकर सागरके साथके अुसके संगम तककी और प्राचीन कालसे लेकर अर्वाचीन काल तककी अुसकी कहानी, भारतकी संस्कृतिकी और अुसकी सम्यताकी कहानी है — साम्राज्योंके अुत्थान और पतनकी, विशाल और गौरवशाली नगरोंकी, मानवके साहसोंकी तथा भारतके चिंतकोंको व्यग्र रखनेवाले सत्योंके अन्वेषणकी, जीवनकी समृद्धि और सफलताकी तथा निवृत्ति और संन्यासकी, अुतार और चढ़ावकी, वृद्धि और क्षयकी, जीवन और मरणकी कहानी है।"

अुत्तरकाशी : गंगोत्रीसे निकलनेके बाद गंगा जहां सर्वप्रथम अुत्तर-वाहिनी होती है वह स्थान। देखिये : 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० ३५।

देवप्रयाग : भागीरथी और अलकनंदाका संगमस्थान। देखिये : 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २५।

लक्ष्मणझूला : हृषीकेशके पास गंगा नदी पर यह स्थान है। यहां पहले छींकोंका पुल था। अब वहां लोहेकी सांकल और सीखचोंका झूलनेवाला पुल है। यहीं लक्ष्मणजीका मंदिर है। देखिये : 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २३।

विकराल दंष्ट्रा : विकराल दाढ़। तुलना कीजिये : 'बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालम्'। गीता, ११–२४; 'दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि'। गीता, ११–२५

त्रिवेणी संगम : गंगा, यमुना और (गुप्त) सरस्वतीका संगम। प्रयागमें तीनों नदियोंके प्रवाह अेकत्र हो जाते हैं, अिसलिअे वहां अुनको 'युक्तवेणी' कहते हैं। बंगालमें अेक प्रवाहमें से अनेक प्रवाह बन जाते हैं, अिसलिअे वहां अुनको 'मुक्तवेणी' कहते हैं। देखिये पृ० १५४ की टिप्पणी।

वर्धमान : बढ़ती हुअी।

गंगा शकुन्तला जैसी . . . दीखती है : देखिये पृष्ठ २११

शर्मिष्ठा और देवयानीकी कथा : दैत्यगुरु शुक्राचार्यकी कन्या देवयानीके साथ दैत्यराज वृषपर्वाकी कन्या शर्मिष्ठाकी मित्रता थी। अेक दिन दोनों जलक्रीड़ाके लिअे गयीं। नहानेके बाद देवयानी पहले

बाहर आयी और जल्दीमें उसने शर्मिष्ठाके कपड़े पहन लिये। जिस पर दोनोंके बीच झगड़ा शुरू हुआ। शर्मिष्ठाने देवयानीको धक्का देकर कुएँमें ढकेल दिया। थोड़ी देरमें मृगयाके लिये निकला हुआ राजा ययाति पानीकी खोजमें वहाँ आ पहुँचा। उसने देवयानीको कुएँसे बाहर निकाला। देवयानीने घर लौटकर सारा किस्सा अपने पिताको सुनाया। शुक्राचार्य गुस्सा हुए और वृषपर्वाका राज्य छोड़नेके लिये तैयार हो गये। अंतमें राजा शर्मिष्ठाको देवयानीकी दासीके तौर पर रखनेके लिये तैयार हुए तभी जाकर शुक्राचार्य शांत हुए। जिसके बाद देवयानीने राजा ययातिसे विवाह किया और उसकी दासी शर्मिष्ठाको साथमें लेकर वह ससुराल गयी। शर्मिष्ठाके सद्गुण पर मुग्ध होकर ययातिने उसके साथ गुप्त विवाह किया। अंतमें शर्मिष्ठाका छोटा पुत्र राज्यका उत्तराधिकारी बना।

जिसीलिये देवयानीकी कहानी सुनते समय बापूके 'बड़ी शर्मि-ष्ठाके साथ' लिखते हुये गंगा और यमुनाके सवालका स्मरण होता है।

पृ० २१ प्रयाग-राज: [प्र (अच्छी तरहसे) + यज् (पूजा करना) + अ (अधिकरण) = जहाँ पूजन करनेमें पूरा हुआ ऐसा स्थान।] राज = श्रेष्ठ। यज्ञके लिये पवित्रतम स्थान; गंगा, यमुना और सरस्वतीका संगम-स्थान; इलाहाबाद।

सरयू: कैलास पर्वत पर स्थित मानस सरोवरसे जिसका उद्गम हुआ है वह नदी। सर याने सरोवर। सरोवरमें से निकली जिसलिये वह 'सरयू' कहलायी। अयोध्या उसके तट पर है। उसीको घाघरा भी कहते हैं।

मंडल: देखिये पृ० २३३

शैविदेव: देखिये पृ० २३२

श्रीनगर: देखिये पृ० १३८

गयघाट: देखिये पृ० १३८

पाटलीपुत्र: बिहार राज्यका आजका पटना शहर। सिक्खोंके गुरुनानक भी यहाँ थे। चंद्रगुप्त मौर्य, अशोक, आदि सम्राटोंकी वह राजधानी था। गुरु गोविन्दसिंहके जन्मस्थानका गुरुद्वारा यहीं है।

मगध साम्राज्य : समुद्रगुप्तके समय जिस साम्राज्यका विस्तार सिन्धुसे लेकर कावेरी तक था।

'दाक्षिण्य' : संस्कृत भाषामें दाक्षिण्य शब्दके दो अर्थ होते हैं —दक्षिण दिशा और विनयी स्वभाव। लेखकने यहां दोनों अर्थ सूचित किये हैं। 'दाक्षिण्य धारण कर' जिन शब्दोंमें अुन्होंने जिस बातका वर्णन किया है कि यहांसे ये दोनों नदियां दक्षिणकी ओर बहने लगती हैं, और यह भी बताया है कि वे विनय धारण करती हैं। विनयके अर्थमें दाक्षिण्यका लक्षण जिस प्रकार दिया गया है:

दाक्षिण्यं चेष्टया वाचा परचित्तानुवर्तनम्।

[केवल सद्भावके कारण वाणी और वर्तनसे दूसरेकी वृत्तिके अनुकूल होना—यही दाक्षिण्य है।]

पृ० २० सगरपुत्र : सूर्यवंशी राजा बाहुने शत्रुओंसे पराजित होने पर राजपाट छोड़ दिया और वह हिमालयके जंगलोंमें भाग गया। वहीं अुसका अवसान हुआ। अुस समय अुसकी अेक रानी यादवी सगर्भा थी। अुसकी सौतने गर्भका नाश करनेके हेतुसे यादवीको खुराकमें जहर खिला दिया। परन्तु गर्भनाश नहीं हुआ और अुसे पुत्र हुआ। वह 'गर' नामक जहरके साथ पैदा हुआ इसलिअे 'सगर' कहलाया। सगर बड़ा हुआ तब अुसने अपने पिताका राज्य शत्रुसे वापिस ले लिया। अुसकी शैव्या नामक अेक रानी थी। अुसने असमंजस् नामक अेक पुत्रको और अेक पुत्रीको जन्म दिया। अुसकी दूसरी रानी थी वैदर्भी। अुसने अेक मांसपिंडको जन्म दिया, जिसमें से साठ हजार पुत्र पैदा हुअे। सगरने ९९ यज्ञ करनेके बाद जब सौवां यज्ञ शुरू किया और घोड़ेको छोड़ा, तब इन्द्रने अुसकी चोरी की और पातालमें जाकर कपिल मुनिके आश्रममें अुसे बांध आया। अिधर सगरके साठ हजार पुत्रोंने घोड़ेकी खोज शुरू की। अुन्होंने सारी पृथ्वी खोद डाली, जिससे अुसमें पानी भर गया। अिसीलिअे वह पानीवाला स्थान सगरके नाम परसे 'सागर' कहलाने लगा। काफी प्रयत्नोंके बाद वे पातालमें पहुंचे। वहां अुन्होंने कपिल मुनिके आश्रममें घोड़ेको

देखा। मुनिको ही चोर मानकर अुन्होंने मुनिका बड़ा अपमान किया। अिस पर मुनिने शाप देकर अुनको भस्म कर डाला। अिसके बाद असमंजस्का पुत्र अंशुमान मुनिको प्रसन्न करके घोड़ा ले आया। अिस प्रकार यज्ञ संपन्न हुआ। मुनिने प्रसन्न होकर अुसको अपने साठ हजार पूर्वजोंके अुद्धारका मार्ग भी बतलाया और कहा कि यदि कोअी स्वर्गमें बहनेवाली गंगाको पृथ्वी पर अुतार दे और अुसके जलका अुन्हें स्पर्श करा दे तो अुनका अुद्धार होगा। अिसलिअे अंशुमानने अपना शेष जीवन तपश्चर्यामें बिताया। अंशुमानके पुत्र दिलीपने भी यह तपश्चर्या चालू रखी और अंतमें अुसके पुत्र भगीरथने बड़ी कड़ी तपश्चर्या करके गंगाको पृथ्वी पर अुतारा और अुसका प्रवाह अपने साठ हजार पूर्वजोंकी भस्म परसे बहा कर अुनका अुद्धार किया। यहां अिसीका अुल्लेख है। भगीरथने गंगाको अुतारा, अतः गंगा भागीरथी कहलाअी।

[अिस प्रकार भगीरथको नहर बांधनेमें निष्णात मानकर **Irrigation** के लिअे लेखकने अेक सुन्दर पारिभाषिक शब्द प्रचलित किया है — भगीरथ-विद्या।]

६. यमुना रानी

पृ० २१ भव्यताको भव्यताको कम करते रहना : अपार भव्यता बिखेर कर 'अतिपरिचयाद् अवज्ञा' के न्यायसे भव्यताका महत्त्व कम करना।

अूर्जस्विता : भव्यता।

गगनचुंबी और गगनभेदी : अिन दो शब्दोंके बीचका भेद ध्यानमें लीजिये।

असित अृषि : व्यासजीके अेक शिष्य। देखिये 'हिमालयकी यात्रा' के प्रकरण ३३ का अंतिम भाग। असित = कृष्ण।

देवाधिदेव : महादेव। स्वर्गमें से अुतरी हुअी गंगाको महादेवजीने अपनी जटाओंमें धारण किया था।

पृ० २२ अेक काव्यहृदयी अृषि : लेखकने अुसका नाम रखा है — 'यामुन अृषि'। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० ३१।

अंतर्वेदी : पुराने समयमें गंगा और यमुनाके बीचके प्रदेशको अंतर्वेदी कहते थे। अिस परसे आजकल दो नदियोंके बीचके किसी भी प्रदेशको अंतर्वेदी (दो-आब) कहते हैं।

श्रीनगर : काश्मीरका श्रीनगर नहीं। यह स्थान केदार जाते बीचमें आता है। यह सिद्धपीठ कहलाता है। यहां की हुअी साधना व्यर्थ नहीं जाती और शीघ्र फलदायी होती है। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २६ और 'जीवनका काव्य' नामक लेखककी दूसरी पुस्तकमें शंकराचार्यसे सम्बन्धित प्रकरण।

ब्रह्मावर्त : कुरुक्षेत्रके समीपका दृषद्वती और सरस्वतीके बीचका प्रदेश। आजकल ब्रह्मावर्तको 'बिठूर' कहते हैं।

हत्यारे भूमिभागको : क्योंकि यहां अनेक भीषण युद्ध हुअे थे।

पृ० २३ सचिववाणी : सचिव=मित्र या मंत्री। यहां दोनों अर्थ लिये जा सकते हैं—मित्रतापूर्ण सलाह और सुलहकी बातें। कौरव-पांडवोंके बीच सुलह हो अिसलिअे भगवान श्रीकृष्णने हस्तिनापुरमें ही सन्धिकी बातचीत की थी।

रोमहर्षण : रोंगटे खड़े कर देनेवाली। 'संवादमू अिममू अश्रौषम् अद्भुतं रोमहर्षणम्।' गीता, १८–७४।

यमराजकी बहनका भाअीपन : यम तथा यमुना अथवा यमी और अश्विनीकुमार सूर्य और अुसकी पत्नी संज्ञाकी संतान माने जाते हैं। अेक बार संज्ञाको अपने पिता विश्वकर्माके घर जानेकी अिच्छा हुअी, किन्तु सूर्यने अिजाजत न दी। अतः अुसने अपनी मायाके बलसे छाया नामक अेक स्त्रीका सर्जन किया और अुसको सूर्यके पास रखकर स्वयं पीहर चली गअी। छाया संज्ञासे अितनी मिलती-जुलती थी कि सूर्यको पता ही नहीं चला कि वह संज्ञा नहीं है। छायाने ही यमकी परवरिश की। किन्तु बादमें अुसमें सौतेली मांकी भावना जाग्रत हुअी और अुसने यमकी अुपेक्षा शुरू की। अिससे यम गुस्सा होकर अुसे लात मारनेको तैयार हुआ। तब छायाने अुसे शाप दिया, जिससे यमके दोनों पैरोंमें घाव हो गये और अुसमें कीड़े बिलबिलाने लगे।

यमने सारी बात सूर्यसे कही। सूर्यने अुसे अेक कुत्ता दिया, जो अुसके घावमें से पीव व कीड़े चाटने लगा।

कहते हैं कि यमने दक्ष-प्रजापतिकी तेरह कन्याओंके साथ विवाह किया था। अिसमें अुसे श्रद्धासे सत्य, मैत्रीसे प्रसाद, दयासे अभय, शांतिसे शम, तुष्टिसे हर्ष, पुष्टिसे गर्व, क्रियासे योग, अुन्नतिसे दर्प, बुद्धिसे अर्थ, मेधासे स्मृति, तितिक्षासे मंगल, लज्जासे विनय और मूर्तिसे नर और नारायण नामक पुत्र पैदा हुअे।

वह जीवके पाप-पुण्योंका न्याय करता है। अिसमें चित्रगुप्त नामक अुसका अेक मंत्री पाप-पुण्यकी बही रखकर अुसकी मदद करता है। दंड अुसका हथियार है और पाड़ा अुसका वाहन है।

सारी सृष्टि पर शासन करनेवाले अैसे भाअीकी बहन भी अुतनी ही प्रतापी होगी। अिसलिअे अुसका भाअी बननेके लिअे मनुष्यमें असाधारण योग्यता होनी चाहिये। कोअी मामूली आदमी यह स्थान नहीं ले सकता।

पारिजातके फूलके समान : सुंदर और सुकोमल।

ताजबीबी : मुमताजमहल बड़ा भारी नाम मालूम होता है, अिसलिअे यह नाजुक-सा नाम लिया है। आगराके लोगोंमें 'ताज-बीबीका रौजा' नामसे ही यह अिमारत प्रख्यात है।

जमे हुअे आंसू : शुभ्रमूर्ति ताजमहल। लेखकने अपने ताजमहलके वर्णनमें लिखा है: 'यह मकबरा नहीं है, बल्कि अेक अैसा स्थान है जहां अेक रसिक सम्राट्का दुःख जमकर बर्फके जैसा सफेद हो गया है।' कविवर रवीन्द्रनाथने अिसको कालके कपोल (गाल) पर पड़ा हुआ अश्रुबिंदु कहा है:

अे कथा जानिते तुमि भारत-अीश्वर शा-जाहान,
कालस्रोते भेसे जाय जीवन यौवन धनमान।
शुधु तय अन्तरवेदना
चिरंतन हये थाक्, सम्राटेर छिल अे साधना।
राजशक्ति वज्रसुकठिन

सन्ध्या-रक्तराग-सम तन्द्रातले हय होक लीन,
केवल अेकटि दीर्घश्वास
नित्य-अुच्छ्वसित हये सकरुण करुक आकाश
अेइ तव मने छिल आश।
हीरा-मुक्ता-माणिक्येर घटा।
जेन शून्य दिगन्तेर अिन्द्रजाल अिन्द्रधनुच्छटा
जाय जदि लुप्त हये जाक,
शुधु थाक
अेकबिन्दु नयनेर जल
कालेर कपोलतले शुभ्र समुज्ज्वल
अे ताजमहल॥

जिस प्रकार पानी जमकर सफेद बर्फ हो जाता है, या घी जमने पर सफेद हो जाता है, अुसी प्रकार सम्राट्के आंसुओंके जमने पर अुन्होंने सफेद संगमरमरका रूप ले लिया है — अैसा सूचन यहां है।

चर्मण्वती : देखिये प्रकरण ४१।

सिन्धु : मालवा होकर बहनेवाली अिस नामकी छोटीसी नदी। अिसका अुल्लेख 'मेघदूत' के २९वें श्लोकमें आता है।

वेणीभूत-प्रतनु-सलिला सावतीतस्य सिन्धुः
पाण्डु-च्छाया तट-रुह-तरुभ्रंशिभिर् जीर्णपर्णैः।
सौभाग्यं ते सुभग विरहावस्थया व्यंजयन्ती
कार्श्यं येन त्यजति विधिना स त्वयैवोपपाद्यः॥

महाकवि भवभूतिके 'मालतीमाधव' के चौथे अंकके अंतिम विभागमें मकरंद माधवसे कहता है : 'अुठो, पारा और सिंधु नदीके संगममें स्नान करके हम नगरमें ही प्रवेश कर लें।' — तदुत्तिष्ठ पारासिन्धुसंभेदमवगाह्य नगरीमेव प्रविशाव:।

कालिदासके 'मालविकाग्निमित्र' नाटकके पांचवें अंकके १४वें तथा १५वें श्लोकके नीचे अेक पत्र आता है, जिसमें अिस नदीका अुल्लेख है : "योऽसौ राजसूययज्ञदीक्षितेन मया राजपुत्रशतपरिवृतं वसुमित्रं

गोप्तारम् आदिश्य संवत्सरोपावर्तनीयो निरर्गलस्तुरगो विसृष्टः सः सिन्धोर्दक्षिणरोधसि चरन्नश्वानीकेन यवनानां प्रार्थितः।"

[राजसूय यज्ञकी दीक्षा लिये हुये मैंने सौ राजपुत्रोंसे घिरे वसुमित्रको रक्षण करनेका आदेश देकर अेक वर्षमें वापस लानेकी बात कहकर जो घोड़ा छोड़ा था, वह सिन्धुके दक्षिण तट पर घूम रहा था। वहां यवनोंके अश्वदलने अुसकी अिच्छा की (अुसको रोका)।]

वहांकी मिश्रीसे मुंह मीठा बनाकर : कालपीमें मिश्रीके कारखाने हैं, अिस बातका यहां सूचन है।

अक्षयवट : प्रयाग, भुवनेश्वर, गया आदि तीर्थस्थानोंमें बोये हुअे वटवृक्ष। कहते हैं कि अिस वटकी पूजा करनेसे, अिसे पानी पिलानेसे अक्षय पुण्यकी प्राप्ति होती है, अिसलिअे अुसे अक्षयवट कहते हैं। देखिये : 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २।

बूढ़ा अकबर : अकबरने यहां किला बनवाया है अिस बातका सूचन। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २।

पृ० २४ अशोकका शिलास्तंभ : अिस पर अशोकका धर्मलेख खुदा हुआ है। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २।

सरस्वती : वाणी। गुप्तस्रोता सरस्वतीका भी यहां सूचन है।

कादंब : कलहंस।

धवल-शीला : जिसका शील (चारित्र्य) शुभ्र है।

अिन्दीवर-श्यामा : नीलकमलके जैसी श्याम। अिन्दीवर = नील-कमल।

संस्कृत कवियोंकी अेक पुरानी कल्पना है कि अिन्दीवर-श्याम और गौरवर्णके संगमसे अेक-दूसरेकी शोभाके कारण सौन्दर्य अुत्पन्न होता है। देखिये :

अिन्दीवर-श्यामतनुर् नृपोऽसौ त्वं रोचना-गौर-शरीर-यष्टिः।
अन्योन्य-शोभा-परिवृद्धये वां योगस् तडित्तोयदयोर् अिवास्तु॥

—रघुवंश, ६–६५

सुधा-जला : सुधा = अमृत। अमृत जैसे जलवाली। कहते हैं कि अमृतका रंग शुभ्र होता है। अिसलिअे यहां 'शुभ्र जलवाली' अिस

अर्थमें भी यह शब्द लिया जा सकता है। फिर, सुधाका दूसरा अर्थ होता है चूना। और चूनेका रंग सफेद होता ही है। अिस अर्थमें भी 'सफेद जलवाली' ही कह सकते हैं। तुलना कीजिये : सुधाधवल।

जाह्नवी : गंगा। सगरपुत्रोंके उद्धारके लिअे भगीरथ गंगाको लेकर जा रहा था। मार्गमें जह्नु नामक अेक राजर्षिकी यज्ञ-सामग्री अुसमें बह गयी। अिससे क्रुद्ध होकर ऋषि अपने तपोबलसे गंगाको पी गये। मगर भगीरथने अुनकी बहुत स्तुति की, तब अुन्होंने अपने कानमें से (कअी लोगोंके मतके अनुसार जांघमें से) गंगाको निकाला। अिस परसे गंगाको जाह्नवी नाम भी प्राप्त हुआ।

७. मूल त्रिवेणी

पृ० २५ ब्रह्मकपाल : हिमालयमें बदरीनारायण तीर्थमें अिस नामकी अेक शिला है। शास्त्रोंमें लिखा है कि अिस शिला पर बैठकर श्राद्ध करनेसे मनुष्यके सभी पूर्वज अेकसाथ मोक्ष पाते हैं और वह पितरोंके ऋणसे सदाके लिअे मुक्त होता है। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० ४२।

पृ० २६ हरिके चरण : हरिकी पैड़ीका सूचन है।

८. जीवनतीर्थ हरिद्वार

पृ० २६ त्रिपथगा : तीन मार्गोंसे बहनेवाली; स्वर्गगामिनी मंदाकिनी, मर्त्यवाहिनी गंगा और पातालगामिनी भोगवती।

पृ० २७ प्रशम-कारी : शांतिदायक। प्रशमका अर्थ निर्वाण और वैराग्य भी है।

पृ० २८ 'महोल्ला' : सिख गुरुओंके भजनोंके अंतमें नानकका ही नाम आता है। अिससे कौनसा भजन किस गुरु द्वारा लिखा गया है, यह नाम परसे मालूम नहीं हो सकता। 'ग्रंथसाहबका' जब संग्रह किया गया, तब ये सब भजन गुरुके क्रमके अनुसार अलग किये गये और हरअेक गुरुके भजनोंका 'महोल्ला' अलग माना गया। अिस परसे अब कौनसा भजन किस गुरुका है यह मालूम किया जा सकता है।

'आसा-दि-वार : आसावरी राग।

मुक्तिफौज : 'साल्वेशन आर्मी' नामक फौजी ढंगसे संगठित ख्रिस्ती लोगोंकी अेक संस्था है, जिसके सदस्य गेरुवे वस्त्र पहनते हैं।

पृ० २९ दीपदानका किसी तरहका काव्यमय वर्णन लेखकने 'हिमालयकी यात्रा' में 'गंगाद्वार' शीर्षक लेखमें किया है। अुसे देखिये।

पृ० ३० वाजिनीवती अुषा : अृग्वेदके अुषा-संबंधी सूक्तमें अुसको वाजिनीवती कहा गया है। वहां अुसका अर्थ 'बलवती' या 'समृद्धिशाली' होता है।

अुषस् तत् चित्रतमा वर अस्मभ्यं वाजिनीवती।
येन तोकं च तनयं च धामहे॥

[हे बलवती और समृद्धिशालिनी अुषा, हमें सुन्दर (बल या संपत्ति) दे, जिससे हम पुत्र और प्रपौत्रको धारण कर सकें।] मंडल १, सूक्त ९२-१३

'वाज' का अर्थ है बल, वीर्य, वेग। अिस परसे 'वाजिन्' कहते हैं बलवान, वीर्यवान, वेगवानको। फिर, अिसका अर्थ हुआ — जिसमें ये सब गुण हैं अैसा युद्धके रथका घोड़ा। अिसीका स्त्रीलिंगी रूप है 'वाजिनी' = घोड़ी। अिस परसे 'वाजिनीवत्' कहते हैं वेगवान घोड़ी हांकनेवालेको या अुसके मालिकको। अिसीका स्त्रीलिंगी रूप है —'वाजिनीवती'। जब यह विशेषण सिन्धु या सरस्वतीको लगाते हैं तब अुसका अर्थ होता है — बलवान, वेगवान घोड़ोंसे समृद्ध।

बल और वीर्य समृद्धिका मूल है। अिससे समृद्धिका अर्थ भी अिसमें आ जाता है। और धान्य तो अेक प्रकारकी समृद्धि है ही। अिससे अिस शब्दमें यह अर्थ भी समाया हुआ है। कभी कभी 'वाजिनीवती' का अर्थ 'अन्नवाली' भी होता है।

स्वश्वा सिन्धुः सुरथा सुवासा हिरण्ययी सुकृता वाजिनीवती।
अूर्णावती युवतिः सीलमावत्युताधि वस्ते सुभगा मधुवृधम्॥
मं० १०, सू० ८२-८

[अुत्तम अश्वोंवाली, अच्छे रथोंवाली, सुन्दर वस्त्रोंवाली, हिरण्य-वाली, सुघटित, अन्नवती, अूनवाली, सनवाली, युवती और सुभगा सिन्धु मधुवृधको (मधु बढ़ानेवाले पौधेको) धारण करती है।]

कठोपनिषद्में 'वाजश्रवस्' का अुल्लेख है। यहां 'वाज' का अर्थ है अन्न। अुसके दान आदिके कारण जिसको 'श्रवस्'=यश मिला है वह है 'वाजश्रवस्'।

'वाजीकर' औषधि यानी शक्तिवर्धक दवाअी। 'वाजीकरण' प्रयोग यानी शक्ति बढ़ानेका प्रयोग। ये शब्द भी अिसके साथ संबद्ध हैं।

९. दक्षिणगंगा गोदावरी

अुठोनियां० 'प्रातःकालमें अुठकर मुंहसे चंद्रमौली शिवका नाम लो। श्रीबिंदुमाधवके पास गंगामें स्नान करो, गोदावरीमें स्नान करो . . . ! कृष्णा, वेण्या, तुंगभद्रा, सरयू, कालिंदी, नर्मदा, भीमा, भामा, — अिन सब नदियोंमें गोदावरी मुख्य है, अिस गंगामें स्नान करो।'

श्री रामचंद्रके अत्यंत सुखके दिन : सीता और लक्ष्मणके साथ बिताये हुअे बनवासके दिन।

जीवनका दारुण आघात : सीताके हरणका।

पृ० ३१ वाल्मीकिकी अेक कारुण्यमयी वेदनामें से : क्रौंचवध जैसे अेक छोटेसे प्रसंगमें से करुणाकी भावना जाग्रत होकर जिस प्रकार रामायणके जैसा महाकाव्य पैदा हुआ अुस प्रकार।

पृ० ३२ सहनवीर रामचन्द्र और दुःखमूर्ति सीतामाता : अिन विशेषणोंकी योग्यता ध्यानमें लीजिये। तुलना कीजिये : 'दुःख-संवेदनायैव रामे चैतन्यमाहितम्।' — अुत्तररामचरित

कषाय : कसैले।

कल्पांतिक : कल्प = ब्रह्माका अेक दिन = १००० युग = ४३२० लक्ष मानवी वर्ष। सृष्टिकी आयु अितनी मानी जाती है। सृष्टिके अंत तक जो बना रहे वह है कल्पांतिक दुःख। (कल्प + अंत + अिक)

जनस्थान : दंडकारण्यका अेक हिस्सा, जहां गोदावरीके तट पर श्री रामचंद्र रहते थे। वहां राक्षसोंका अुपद्रव कम था, अिसलिअे

मनुष्य वहां रह सकते थे। मनुष्योंके रहनेके योग्य स्थान होनेसे वह 'जनस्थान' कहलाता था।

जटायुः अरुणका पुत्र, संपातिका छोटा भाई, दशरथ राजाका परम मित्र। रावण जब सीताको लेकर जा रहा था, तब सीताके मुखसे 'राम', 'राम' की पुकार सुनकर जटायुने सीताको छुड़ानेके बहुत प्रयत्न किये। किन्तु वह असफल रहा। अुसको मरणासन्न स्थितिमें डाल कर रावण सीताको लेकर चला गया। अिधर जब राम सीताकी खोज करते हुअे वहां पहुंचे, तो जटायुने अुन्हें खबर दी कि सीताको रावण अुठा के गया है, और फिर प्राण छोड़े।

पृ० ३३ सीतामाताकी कातर तनु-यष्टिः तुलना कीजिये—

अस्मिन्नेव लतागृहे त्वमभवस्तन्मार्गदत्तेक्षणः
सा हंसैः कृतकौतुका चिरम् अभूद् गोदावरीसीकते।
आयान्त्या परिदुर्मनायितमिव त्वां वीक्ष्य बद्धस्त्वया
कातर्याद् अरविन्दकुड्मलनिभौ मुग्धः प्रणामाञ्जलिः॥

—उत्तररामचरित, ३–३७

पाड़ेके मुंहसे . . . करवानेवाले : महाराष्ट्रके संतकवि ज्ञानेश्वरके पिता विठ्ठलपंत शुरूसे ही वैराग्य-परायण वृत्तिके थे। जवानीमें तीर्थयात्रा करते करते वे अेक बार आळंदी पहुंचे। वहांके अेक ब्राह्मणने अुनकी योग्यताको देखकर अपनी लड़की अुन्हें ब्याह दी। मगर विवाहके कारण विठ्ठलपंतकी वैराग्य-वृत्ति दब नहीं पायी। 'मैं गंगास्नानके लिअे जा रहा हूं' कहकर अुन्होंने घर छोड़ा और काशीमें जाकर 'मेरे स्त्री-पुत्र आदि कुछ नहीं है' कहकर रामानंद स्वामीसे संन्यासकी दीक्षा ली। कुछ समयके बाद रामानंद स्वामी रामेश्वरकी यात्राके लिअे जाते हुअे रास्तेमें आळंदी पहुंचे। वहां विठ्ठलपंतकी पत्नी पतिके संन्यासकी बात सुनकर व्रतोपासनामें जीवन बिता रही थी। गांवमें रामानंद स्वामीके आनेकी खबर सुनकर वह अुनके पांवोंमें पड़नेके लिअे आयी। संन्यासीने जब अुसको 'पुत्रवती भव' कहकर आशीर्वाद दिया तब वह हंसी। संन्यासीने हंसनेका कारण पूछा। अुसने अपनी कहानी सुना दी। रामानंद आळंदीसे ही वापस काशी गये और

विट्ठलपंतको धमकाकर वापस गृहस्थ-जीवन बितानेके लिअे भेज दिया। अिनके चार संतान हुअीं: निवृत्तिनाथ, ज्ञानदेव, सोपानदेव और मुक्ताबाअी।

किन्तु शास्त्रोंमें संन्यासीको फिरसे संसारी बननेकी अनुज्ञा नहीं है। अिसलिअे समाज अिस कुटुंबको सताने लगा। अिनके बच्चोंको जनेअू देनेके लिअे कोअी तैयार नहीं हुआ। अंतमें विट्ठलपंत पैठण गये और वहांके ब्राह्मणोंके पांवोंमें पड़कर अुन्होंने कहा, 'मेरे लिअे कोअी भी प्रायश्चित्त बता दो, किन्तु मुझे शुद्ध करो और मेरे बच्चोंको अुपवीत संस्कार देनेकी अनुज्ञा दो।' ब्राह्मणोंको शास्त्रोंमें कोअी आधार नहीं मिला। अुन्होंने कहा, 'तुम्हारा पाप ही अितना बड़ा है कि तुम्हारे लिअे देहत्याग ही अेक अुपाय है। और तुम्हारे बच्चोंको अुपवीत दिया ही नहीं जा सकता।' विट्ठलपंत और अुनकी पत्नीने प्रयाग जाकर गंगामें जल-समाधि ले ली!

अिसके बाद अिन चारों बच्चोंने आळंदीके ब्राह्मणोंसे प्रार्थना की कि 'हम ब्राह्मणके बच्चे हैं; हमें अुपवीत संस्कार मिलना चाहिये।' किन्तु ब्राह्मणोंने जवाब दिया कि पैठणके ब्राह्मणोंसे शुद्धि-पत्र लाने पर अुपवीत दिया जा सकेगा।

बच्चे पैठण गये। वहांके ब्राह्मणोंके सामने अुन्होंने अपनेको समाजमें लेनेकी मांग पेश की। किन्तु ब्राह्मणोंने कहा, 'संन्यासीके बच्चोंको अुपवीतका अधिकार किसी भी शास्त्रमें नहीं है। अिसके लिअे कोअी प्रायश्चित्त भी नहीं है। अतः तुम सर्वत्र अीश्वरभाव रखकर जितेन्द्रिय बनो, विवाह मत करो और सदा हरिभजनमें मग्न रहो।'

निर्णय देकर सभा समाप्त होनेवाली थी, अितनेमें अिन चारों बच्चोंको किसीने अुनके नामोंके अर्थ पूछे। निवृत्तिनाथने कहा, 'मेरा नाम निवृत्ति है। मैं कभी प्रवृत्तिमें पड़नेवाला नहीं हूं।' ज्ञानदेवने कहा, 'मैं ज्ञानदेव हूं। सकल आगमोंको जाननेवाला हूं।' सोपानदेवने कहा, 'मैं भक्तोंको अीश्वर-भजन सिखाकर वैकुंठ प्राप्त करानेवाला सोपान हूं।' मुक्ताबाअीने कहा, 'मैं विश्वकी लीला दिखानेके लिअे प्रकट हुअी अीश्वरकी लीलारूपी मुक्ति हूं।'

यह जवाब सुनकर अुस आदमीने कहा, 'नाम तो चाहे जैसे रखे जा सकते हैं। वह जो पाड़ा जा रहा है अुसका नाम भी ज्ञानदेव है।'

ज्ञानदेव फौरन बोल अुठे, 'बेशक! अुस पाड़ेमें और मुझमें कोअी भी भेद नहीं है। अुसमें भी मेरी ही आत्मा है।'

अुसी समय किसीने अुस पाड़े पर तीन चाबुक लगाये और अिधर अुसी क्षण ज्ञानेश्वरकी पीठ पर चाबुकके निशान अुठ आये!

चारों बच्चे ब्राह्मणोंको नमस्कार करके अपने गांव वापस जानेके लिअे निकले। रास्तेमें गोदावरीके तीर पर वे बैठे थे। वहां कुछ नौजवान अिकट्ठे हुअे थे। अुन्होंने मजाकके तौर पर ज्ञानदेवसे कहा: 'तुम यदि शुद्धिपत्र चाहते हो, तो अिस पाड़ेके मुंहसे वेदका पाठ करा दो।' तुरन्त ज्ञानेश्वर पाड़ेके पास गये और अुसके सिर पर हाथ रखकर अुन ब्राह्मणोंसे कहने लगे: 'आप तो भूदेव हैं। आपका वचन कभी निष्फल नहीं जा सकता। देखिये, यह पाड़ा अब वेदोंका पाठ करेगा।'

और सचमुच वह पाड़ा वेदोंकी ऋचायें बोलने लगा!!

ज्ञानेश्वरने गीता पर 'भावार्थ दीपिका' लिखी है, जिसको 'ज्ञानेश्वरी' कहते हैं। अिसके अलावा अुनकी अेक स्वतंत्र रचना है, जिसका नाम है 'अमृतानुभव'। ये दोनों भारतीय साहित्यके अनमोल रत्न हैं।

दशग्रंथी: ऋक्, यजुर्, साम और अथर्व ये चार वेद तथा शिक्षा (स्वरोच्चारण संबंधी), छंद, व्याकरण, निरुक्त (व्युत्पत्ति और अर्थ संबंधी), ज्योतिष और कल्प (सूत्र) ये छह वेदांग — अिन दस ग्रंथोंको कंठ करनेवाले।

पृ० ३४ शंकराचार्यके अूपर किये . . . अत्याचार: शंकराचार्यकी माता अुन्हें संन्यास लेनेकी अिजाजत नहीं देती थी। अेक बार शंकराचार्य नहानेके लिअे नदीमें अुतरे। वहां मगरमच्छने अुनका पांव पकड़ा। शंकराचार्यने पुकार कर मांको कहा, 'अब तो मुझे संन्यास लेनेकी अिजाजत दो।' मांने अिजाजत दी कि शंकराचार्य मगरके जबड़ेमें से मुक्त हुअे। वे पूरे-पूरे मातृभक्त थे। किन्तु संन्यास-

धर्मके अनुसार वे माताके साथ रह नहीं सकते थे, माताका दर्शन तक नहीं कर सकते थे। तो भी अुन्होंने घर छोड़कर जाते समय मातासे कहा, 'संकटके समय मुझे बुलाओगी तो मैं आ जाअूंगा।' और वे चले गये। कुछ समयके बाद मां बीमार पड़ी। अुसे पुत्रसे मिलनेकी अिच्छा हुअी। वचनके अनुसार शंकराचार्य आये और माताके अवसान तक अुन्होंने अुसकी सेवा की। माताने सुखसे प्राण छोड़े।

किन्तु सुतीवत अब शुरू हुअी। शवको स्मशानमें ले जानेके लिअे गांवके ब्राह्मण तैयार नहीं थे। न अपने स्मशानमें अुस शवको जलानेकी अिजाजत देते थे। लकड़ी भी किसीने नहीं दी। ब्राह्मणोंने तय किया कि जो संन्यास लेनेके बाद अपनी पूर्वाश्रमकी मांसे मिलने जाता है अुसका वह कार्य शास्त्रविरुद्ध है; अुसका बहिष्कार ही होना चाहिये। शंकराचार्यने अपनी मांके शवके चार टुकड़े किये, केलेके पेड़ काटकर ले आये, अुन पर ये टुकड़े रखकर अुन्होंने अपनी माताके घरके आंगनमें ही योगाग्नि जलायी और अपने तप-स्तेजसे अुसको सद्गति दी।

शंकराचार्यका गांव जिस राज्यमें था, वहांका राजा अूनका शिष्य था। अपने पूज्य गुरु पर गुजरे हुअे अिस अुल्मकी खबर पाते ही अुसने अपने राज्यके नांबुद्री ब्राह्मणोंको सजा दी कि वे अपने घरके लोगोंके शव स्मशानमें नहीं ले जा सकते, बल्कि घरके आंगनमें ही अुसके चार टुकड़े करके जलायें। राजाने अिस सजाका अमल कठोरताके साथ करवानेका निश्चय किया। ब्राह्मण घबड़ा गये। अुन्होंने माफी मांगी। तब राजाने शवके चार टुकड़े करनेके बदले शवके अूपर चार रेखायें खींचनेकी और बादमें स्मशानमें ले जानेकी अिजाजत दी।

अष्टवक्र : जिसके आठों अंग टेढ़े हों—खूब मोड़वाली।

पृ० ३५ जीवन-वितरण : जीवन=पानी; वितरण=बांटना।

यानाम : गोदावरीके मुखके पास यह स्थान है। फ्रेंच कंपनीने सन् १७५० में अिसका कब्जा लिया था और दो सालके बाद फ्रेंच सरकारको सौंप दिया था। अब यह स्वतंत्र भारतमें मिल गया है।

पृ० ३६ चंचल कमलोंके बीच : कमलोंको गतिमान बनाकर दृश्यकी शोभा बढ़ानेके लिअे।

भवभूतिका स्मरण : भवभूतिने अपने 'अुत्तररामचरित' में गोदावरीके विविध सौंदर्यका वर्णन किया है अिसलिअे। अुदाहरणके तौर पर देखिये :

अेतानि तानि गिरि-निर्झरिणी-तटेषु
वैखानसाश्रित-तरूणि तपोवनानि।
येष्वातिथेयपरमा क्षमिनो भजन्ते
नीवार-मुष्टि-पचना गृहिणो गृहाणि॥
अुत्तररामचरित १–२५

स्निग्ध-श्यामाः क्वचिद् अपरतो भीषणा भोग-रूक्षाः
स्थाने स्थाने मुखर-ककुभो झांकृतैर्निर्झराणाम्।
अेते तीर्थाश्रम-गिरि-सरिद्-गर्त-कान्तार-मिश्राः
संदृश्यन्ते परिचित-भुवो दण्डाकारण्य-भागाः॥
अु० रा० २–१४

अिह समदशकुन्ताक्रान्तवानीरमुक्त-
प्रसवसुरभिशीतस्वच्छतोया वहन्ति।
फलभरपरिणामश्यामजम्बू-निकुञ्ज–
स्खलनमुखरभूरिस्रोतसो निर्झरिण्यः॥
अु० रा० २–२०

अेते त अेव गिरयो विरुवन्मयूरास्–
तान्येव मत्तहरिणानि वनस्थलानि।
आमञ्जुवञ्जुलतानि च तान्यमूनि
नीरन्ध्रवीपनिचुलानि सरित्तटानि॥
अु० रा० २–२३

मेघमालेव यश्चायमारादिव विभाव्यते।
गिरिः प्रस्रवणः सोऽयं यत्र गोदावरी नदी॥
अु० रा० २–२४

अस्यैवासीन्महति शिखरे गृध्रराजस्य वासम्
तस्याधस्ताद्व्यमपि रतास्तेषु पर्णोटजेषु।
गोदावर्याः पयसि विततश्यामलानोकहश्रीर्
अन्तः कूजन्मुखरशकुनो यत्र रम्यो वनान्तः॥

अ० रा० २–२५

गुञ्जत्कुञ्जकुटीरकौशिकघटामुत्कारवत्कीचक–
स्तम्बाडम्बरमूकमौकुलिकुलः क्रौंचावतोऽयं गिरिः।
श्रेतस्मिन्प्रचलाकिनां प्रचलतामुद्वेजिताः कूजितैर्
अुद्वेल्लन्ति पुराणरोहिणतरुस्कन्धेषु कुम्भीनसाः।

अ० रा० २–२९

अेते ते कुहरेषु गद्गदनदद्गोदावरीवारयो
मेघालम्बितमौलिनीलशिखराः क्षोणीभृतो दाक्षिणाः।
अन्योन्यप्रतिघातसंकुलचलत्कल्लोलकोलाहलैर्
अुत्तालास्त इमे गभीरपयसः पुण्याः सरित्संगमाः॥

अ० रा० २–३०

यत्र द्रुमा अपि मृगा अपि बन्धवो मे
यानि प्रियासहचरश्चिरमन्यवात्सम्।
श्रेतानि तानि बहुकन्दरनिर्झराणि
गोदावरीपरिसरस्य गिरेस्तटानि॥

अ० रा० ३–८

वैदिक प्रभात : वेदकालमें जहां आर्य रहते थे, वहांका प्रभात कुहरेके कारण धूसर होता था अिसलिअे, अितिहासमें वेदकाल अुषःकालके जैसा धुंधले प्रकाशवाला माना गया है अिसलिअे तथा वेदकालमें ही धर्मज्ञानका अुषःकाल हुआ था अिसलिअे भी।

पृ० २७ कविकी प्रतिभाके समान : प्रतिभाकी व्याख्या अिस प्रकार है: 'प्रज्ञा नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा मता।'—नये नये स्फुरण जिस प्रज्ञा (बुद्धि)से निकलते हैं, वह प्रतिभा कही जाती है।

चरित्र : [चर् (चलना) + अत्र (साधन) = चलनेका साधन = पैर।] चाल; आचरण। वेदोंमें 'चरित्र' शब्द पैरके अर्थमें आया है। (पैरोंके निशान---चरित्र---देखकर चलनेवालेको यह सूचन मिल जाता है कि बगुला किस दिशामें गया है। दूसरे अर्थमें, चालबाजीसे भरा आचरण करनेवाले बगलाभगतको बगला दिशा बताता है।)

१०. वेदोंकी धात्री तुंगभद्रा

पृ० ४१ 'द्वंद्वः सामासिकस्य च' : समासोंमें मैं द्वंद्व हूं। गीता, १०-३३।

११. नेल्लूरकी पिनाकिनी

पृ० ४२ नेल्लूर : (नेल्ल = धान + ऊरु = गांव) धानका गांव। यह गांव मद्रासकी उत्तर दिशामें है।

१२. जोगका प्रपात

पृ० ४४ होन्नावर : उत्तर कर्णाटकमें पश्चिम समुद्र-तट पर स्थित अेक शहर।

पृ० ४५ कारकल : दक्षिण कर्णाटकमें मंगलूर और उडपीके बीच स्थित अेक शहर। यहां हैदरके द्वारा स्थापित हनुमानका मंदिर है। समीपकी टेकरी पर बाहुबलीकी अेक भव्य मूर्ति खड़ी है।

मनसा० मनमें सोचते हैं अेक बात और दैव दूसरी ही बात कर देता है।

चिरसंचित : रवीन्द्रनाथकी यह पंक्ति याद कीजिये :

बहुदिन वंचित अंतरे संचित कि आशा।

शिमोगा सागर : गांवका नाम है।

पृ० ४६ गुजरातमें बाढ़-संकट : सन् १९२७ में गुजरातमें अति-वृष्टिके कारण हजारों मकान टूट गये थे। लोग बिना अन्न-वस्त्रके और आसरेके हो गये थे। अुस समय सरदार वल्लभभाअी पटेलने अपनी विलक्षण व्यवस्था-शक्तिसे और धनिकोंकी मददसे लोगोंको राहत देनेका भगीरथ कार्य सफलतापूर्वक किया था।

श्री गंगाधरराव देशपांडे : कर्णाटकके अेक नेता।

स्थितधीः ० स्थितप्रज्ञ कैसे बोलता है, कैसे बैठता है और कैसे चलता है? गीता, २–५४।

कुलशिखरिणः ० पूरा श्लोक अिस प्रकार है:

विरम विरमायासाद् अस्माद् दुरध्यवसायतो
विपदि महतां धैर्य-ध्वंसं यद् अीक्षितुम् अीहसे।
अयि जड़मते! कल्पापाये व्यपेत-निजक्रमा
कुल-शिखरिणः क्षुद्रा नैते न वा जलराशयः॥

[अपनी मर्यादा कभी न छोड़नेवाला सागर और अपने स्थान पर सदा स्थिर रहनेवाले कुलपर्वत भी जब प्रलयकाल आता है तब चलित होते हैं। किन्तु महात्माओंमें अैसी क्षुद्रता नहीं होती। वे तो संकट जितना अधिक होता है अुतने ही अधिक अडिग रहते हैं। अिस तरह समझाते हुअे कवि कहता है:

हे जड़मते! विपद् कालके समय महात्माओंका धैर्यनाश देखना यदि चाहते हो तो यह झूठा प्रयास है। अुसको छोड़ दो। ये महात्मा तुम्हारे क्षुद्र कुलपर्वत नहीं हैं, न पामर सागर हैं, जो प्रलयकाल आते ही अपने स्वधर्म-कर्मके नियमोंको भी तोड़ देते हैं।]

पृथ्वी पर चाहे जितना अुत्पात हो जाय, फिर भी पृथ्वीकी समतुला संभालनेवाले कुलपर्वत अपनी जगहसे हटते नहीं हैं। अिसीलिअे किसीके धैर्यकी अुपमा देते समय कहा जाता है कि अिसका धैर्य तो कुलपर्वतके समान है।

अिसी प्रकार नदियोंमें चाहे जितनी बाढ़ आ जाय, तो भी अुनके पानीसे समुद्र या महासागर अुभर नहीं आता। महासागर अपनी मर्यादाको छोड़ते नहीं, अिसलिअे महासागर भी कवियोंकी सृष्टिमें धैर्य और मर्यादाके लिअे आदर्श अुपमान बन गये हैं।

प्रस्तुत श्लोकमें महात्माओंकी अचल स्थिरताका वर्णन करते समय कवि कहता है कि अुनके सामने कुलपर्वत भी क्षुद्र होते हैं और जलराशि महासागर भी तुच्छ हैं। क्योंकि हजारों और लाखों साल तक अपनी मर्यादाका अुल्लंघन न करनेवाली ये विभूतियां प्रलयकालके

समय अपना स्वधर्म-कर्म छोड़ देती हैं। महात्माओंकी बात अैसी नहीं है।

आदर्श अुपमानको तुच्छ मानकर अुपमेय वस्तु अुपमानसे भी श्रेष्ठ है, यह बतानेवाली पद्धतिको संस्कृतमें प्रतीप अलंकार कहते हैं। अिसमें अत्युक्ति अवश्य होती है।

पृ० ४७ खंडाला घाट : पूना और बम्बअीके बीचका घाट।

पृ० ४८ प्रतीप : [प्रति=विरुद्ध+अिप्=पानी] प्रवाहके विरुद्ध, अुलटी।

पृ० ४९ तमाशा : यहां फजीहतके अर्थमें।

पृ० ५० नमः पुरस्तात् ० हे सर्व! तुम्हें आगेसे, पीछेसे, सभी ओरसे नमस्कार है। तुम्हारा वीर्य अनंत है। तुम्हारी शक्ति अपार है। सब कुछ तुम्हीं धारण कर रहे हो, अतः तुम सर्व हो। गीता, ११-४०

सुदुर्दर्शम् अिदम् ० मेरा जो रूप तुमने देखा है, अुसका दर्शन बड़ा दुर्लभ है। देवता भी अिस रूपके दर्शनकी आकांक्षा रखते हैं। गीता, ११-५२

स्वप्न था ० तुलना कीजिये :

स्वप्नो नु माया नु मतिभ्रमो नु? — शांकुतल, ६-१०

पृ० ५१ व्यपेतभीः ० डर छोड़कर शांतचित्त हो जा और यह मेरा परिचित रूप फिरसे देख ले। — गीता, ११-४९

देवदास : देवदास गांधी।

मणिबहन : सरदार पटेलकी पुत्री।

लक्ष्मी : राजाजीकी पुत्री, बादमें देवदास गांधीकी पत्नी।

पृ० ५२ अण्णा : राजाजी।

पत्रं नैव यदा० वसंत अृतुमें जब सब वृक्ष-वनस्पतिको नये पत्ते आते हैं, तब यदि केवल करीलके वृक्षको ही पत्ते न हों, तो अुसमें वसंतका भला क्या दोष है? घुग्घू यदि दिनको देखे ही नहीं, तो अिसमें सूर्यका क्या दोष है?

भर्तृहरिके जिस श्लोकके शेष दो चरण जिस प्रकार हैं:

धारा नैव पतन्ति चातकमुखे मेघस्य किं दूषणम्?
यत् पूर्वं विधिना ललाट-लिखितं तत् मार्जितुं कः क्षमः?

[चातकके ही मुंहमें यदि पानीकी धारा गिरे नहीं तो उसमें भला मेघका क्या दोष है? विधिने ललाटमें जो लिख रखा है, उसको मिटानेके लिये कौन समर्थ है?]

'उच्छिष्टः' [उत्+शिष्ट] जूठा नहीं, बल्कि किसानके फसल काट कर ले जानेके बाद बचा हुआ।

रवीन्द्रनाथ अथर्ववेदके एक मंत्रका आधार लेकर बताते हैं कि सारी कलाओंका और मनुष्यकी सारी उच्चतर प्रवृत्तियोंका मूल 'उच्छिष्ट' है। नीचे उनके वचन दिये जा रहे हैं:

ऋतं सत्यं तपो राष्ट्रं श्रमो धर्मश्च कर्म च।
भूतं भविष्यत् उच्छिष्टे वीर्यं लक्ष्मी-बलं बले॥

"Righteousness, truth, great endeavours, empire, religion, enterprize, heroism and prosperity, the past and the future dwell in the surpassing strength of the surplus."

The meaning of it is that man expresses himself through his super-abundance which largely overleaps his absolute need.

The renowned vedic commentator Sayanacharya says:

"The food offering which is left over after the completion of sacrificial rites is praised because it is symbolical of Brahma, the original source of the universal."

According to this explanation, Brahma is boundless in his superfluity which inevitably finds expression in the eternal world process. Here we have the doctrine of the origin of the arts. Of all living creatures in the world man has his vital and mental energy vastly in excess of his need which urges him to work in various lines of creation for

its own sake. Like Brahma himself, he takes joy in productions that are unnecessary to him, and therefore represent his extravagance and not his hand-to-mouth penury. The voice that is just enough can speak and cry to the extent needed for everyday use, but that which is abundant sings; and in it we find our joy. Art reveals man's wealth of life, which seeks its freedom in forms of perfection which are ends in themselves.

भावार्थ :

'अृत, सत्य, तप, राष्ट्र, श्रम, धर्म, कर्म तथा भूत और भविष्य, वीर्य और लक्ष्मी अुच्छिष्टके बलमें निवास करते हैं।'

अिसका अर्थ यह है कि अपनी आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेके बाद मनुष्यके पास जो अतिशय शक्ति अधिक रहती है, अुसीके द्वारा वह अपनेको व्यक्त करता है।

वेदोंके प्रसिद्ध टीकाकार सायणाचार्य कहते हैं :

'यज्ञविधिके बाद, बचे हुअे (अुच्छिष्ट रहे) अन्नबलिको पवित्र अिसीलिअे कहा गया है कि वह अखिल विश्वके मूल कारणरूप ब्रह्मका प्रतीक है।'

अिस धारणाके अनुसार ब्रह्मकी अुच्छिष्ट शक्ति अपरंपार है, और वह सनातन विश्व-प्रक्रियाके रूपमें प्रकट होती है। यहां हमें कलाओंके अुद्भवसे संबंध रखनेवाला सिद्धांत देखनेको मिलता है। संसारके सभी जीवोंकी तुलनामें मनुष्यमें प्राण और मनकी शक्ति अुसकी आवश्यकतासे अधिक भरी है, और वह अुसे अनेकविध निर्हेतुक सर्जक प्रवृत्तियां करनेके लिअे प्रेरित करती है। स्वयं ब्रह्मकी तरह, वह भी जो सर्जन अुसके लिअे अनावश्यक हैं, और जो अुसके अकिंचनत्वके नहीं बल्कि अुसके अुड़ाअूपनके सूचक हैं, अुनमें आनन्द लेता है। जो आवाज केवल आवश्यकता भरकी ही है, वह रोजके कामकाजके जितनी ही बोल सकती है या रो सकती है, किन्तु जो आवाज अधिक होती है, वह गाने लगती है—और अिसीमें हमारा आनन्द है। कला मनुष्यके

जीवनकी समृद्धिको प्रकट करती है। यह समृद्धि निर्हेतुक सर्वांग-संपूर्ण स्वरूपोंमें मुक्तिका आनन्द मनानेके लिये प्रयत्न करती रहती है।

'परिग्रहो भयायैव': परिग्रहमें भय रहता ही है। लेखकका यह अपना सूत्र है।

पृ० ५३ 'निस्' कोटिके: (Gneiss) सतहवाले पत्थर जिनमें अभ्रक, चकमक वगैराका समावेश होता है।

पृ० ५४ भगिनी निवेदिताकी प्रख्यात तुलना: मूल निम्न प्रकार है:

Beauty of place translates itself to the Indian consciousness as God's cry to the soul. Had Niagara been situated on the Ganges, it is odd to think how different would have been its valuation by humanity. Instead of fashionable picnics and railway pleasure-trips, the yearly or monthly incursion of worshiping crowds. Instead of hotels, temples. Instead of ostantatious excess, austerity. Instead of the desire to harness its mighty forces to the chariot of human utility, the unrestrainable longing to throw away the body and realize at once the ecstatic madness of Supreme Union. Could contrast be greater?

—*The Web of Indian Life* —241

भैरवजाप: "पहाड़ पर जहां बूंचेसे ऊंचा शिखर हो और पास ही नीचे बेकदम सीधा कगार हो, ऐसे स्थानको भैरवघाटी कहते हैं। प्राचीन कालमें और आज भी भैरव संप्रदायके लोग प्रायः ऐसे स्थान पर भैरवजीका जाप करते-करते ऊपरसे नीचे कूद पड़ते हैं। माना यह जाता है कि ऐसे तरह आत्महत्या करनेमें पाप नहीं, अपितु पुण्य है। यह मान्यता आजके कानूनके अनुसार गलत भले ही हो, किन्तु मानस-शास्त्री मूलके आधारभूत तत्त्वको सहज ही समझ सकते हैं। दुनियासे सब तरह निराश होकर कायरतावश किसी मनुष्यका आत्महत्या करना और प्रकृतिके विशाल, भुव्य, उदात्त तथा रमणीय सौंदर्यको देख, तल्लीन होकर प्रकृतिके साथ अेकरूप होनेकी

अिच्छाका प्रबल हो अुठना, किसी तरह प्रकृतिका वियोग सहा ही न जाना, और अैसेमें किसी मनुष्यका अिस क्षुद्र देहके बंधनको भूल कर सात्म्य प्राप्त करनेके लिअे अनन्तमें कूद पड़ना—ये दो बातें नितांत भिन्न हैं। दोनोंका परिणाम चाहे अेक ही हो। हर तरहके विनाशको हम मृत्युके अेक ही नामसे पुकारते हैं; परन्तु वस्तु अेक ही नहीं होती। कभी बार मरण जीवन-रूपी नाटकका विष्कंभक होता है, और कभी बार वह अुस नाटकका भरत-वाक्य—जीवन-साफल्य—होता है।" —'हिमालयकी यात्रा', प्रक० १६, पृ० ९१-९२

पृ० ५५ विभव-तृष्णा : देखिये पृ० १४८ पर 'लहरोंका तांडव-योग' शीर्षक लेख।

नाभिनंदेत० न मृत्युका स्वागत करना, न जीवनका।

—मनुस्मृति।

हॉर्स पावर : अिसके लिअे लेखक 'अश्वत्थामा' शब्द पारिभाषिक शब्दके तौर पर सुझाते हैं। [अश्व=घोड़ा+स्थामन्=शक्ति।] समासमें 'स्थामन्' में से 'स्' का लोप हो जाता है।

अुपवन : 'न्यू फॉरेस्ट' नामक प्रदेश।

नीरो : रोमका अेक बादशाह (सन् ५४–६८)। मांके भड़कानेसे पिताका खून होनेके बाद रोमकी गद्दीके अधिकारी ब्रिटेनिकसको हटाकर खुद गद्दी पर बैठा। पांच साल तक अच्छी तरह राज चलानेके बाद वह तानाशाह बन गया। अुसने ब्रिटेनिकसको, अपनी मांको और पत्नीको हत्या की। रोमको जलानेके झूठे अिलजाम पर अुसने खिस्तियोंके अूपर तरह तरहके अत्याचार किये। अपने गुरु और मंत्री सेनेकाको तथा अपनी दूसरी पत्नीकी भी हत्या की। अिसके बाद रोममें बगावत हुअी, जिससे वह भाग गया और अुसने आत्महत्या कर ली। अैसी दंतकथा है कि अुसने रोमको जलाया था और खुद जलते हुअे रोमको देख कर फिडल बजाता था। किन्तु अितिहासमें अिसके लिअे कोअी समर्थन प्राप्त नहीं है। किन्तु अिसमें कोअी संदेह नहीं कि वह अत्यंत निर्दय था।

पृ० ५६ आर्तिनाश : तुलना कीजिये :

न त्वहं कामये राज्यं, न स्वर्गं नापुनर्भवम्।
कामये दुःख-तप्तानां प्राणिनां आर्ति-नाशनम्॥

[अपने लिये मैं न राज्य चाहता हूं, न स्वर्गकी अिच्छा करता हूं, और न मोक्ष चाहता हूं। दुःखसे तपे हुअे प्राणियोंकी पीड़ाका नाश हो, बस अितना ही मैं चाहता हूं।]

पृ० ५७ वीरभद्र : दक्ष प्रजापतिके यज्ञका संहार करनेवाले शिवगण।

अंग्रेजोंको हम पहचान गये हैं तो : अंग्रेज भी भारतका खून चूसते हैं, परन्तु मालूम ही नहीं होता कि वे चूस रहे हैं। अंग्रेजोंका यह स्वरूप हम पहचान गये हैं तो—

काकदृष्टि : कौवेके जैसी चकोर दृष्टि। ['काका' की दृष्टि, यह अर्थ भी है।]

पृ० ५८ प्रायः कंदुक० आर्यजन गिरते हैं तो भी अक्सर गेंदकी तरह गिरते हैं, यानी गिरने पर फिर ऊंचे अुछलते हैं।

भर्तृहरिका पूरा श्लोक अिस प्रकार है:

प्रायः कन्दुक-पातेन पतत्यार्यः पतन्नपि।
तथा त्वनार्यः पतति मृत्पिण्ड-पतनं यथा॥

न हि कल्याणकृत्० कल्याण करनेवाला कोअी भी दुर्गतिको प्राप्त नहीं होता। गीता, ६–४०

पृ० ६० मानो महादेवजी संहारकारी तांडव-नृत्य . . हों: रावणके शिव-तांडव-स्तोत्रका यहां स्मरण होता है। नीचे दो श्लोक दिये जा रहे हैं:

जटा-कटाह-संभ्रम-भ्रमन्निलिम्प-निर्झरी—
विलोल-वीचि वल्लरी-विराजमान मूर्धनि।
धगद्-धगद्-धगज्ज्वलल्-ललाट-पट्ट-पावके
किशोर-चंद्र-शेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम॥१॥

[जिसका सिर जटारूपी कटाहमें तेज गतिसे घूमनेवाली सुर-सरिता (गंगा) की चंचल तरंग-लताओंसे सुशोभित हो रहा है, लला-

टाग्नि धग धग धग जल रही है, सिर पर बालचंद्र विराजमान है, अुन (शिवजी) में मेरा निरंतर अनुराग बना रहे।]

जयत्वदभ्र-विभ्रम-भ्रमद्भुजंगम-श्वसद्
विनिर्गमत्क्रम-स्फुरत्कराल-भाल-हव्यवाट्।
धिमिद् धिमिद् धिमिद् ध्वनन्-मृदंग-तुंग-मंगल-
ध्वनि-क्रम-प्रवर्तित-प्रचण्ड-ताण्डवः शिवः ॥१०॥

[सतत हिलते रहनेवाले भुजंगके निःश्वाससे जिनके भालकी कराल अग्नि अुत्तरोत्तर अधिक स्फुरित होती जाती है और धिमिद् धिमिद् धिमिद् जैसी मृदंगकी अुच्च मंगल ध्वनिकी तरह जो प्रचंड ताण्डव खेल रहे हैं, अुन शिवजीकी जय हो।]

पृ० ६१ देवेन्द्र: लंकाका दक्षिण छोर। Dundra Head.

नारायणका ही सरोवर: सिन्ध और कच्छके बीच स्थित सरोवर।

पृ० ६३ पुनरागमनाय च: धार्मिक प्रसंगों पर पूजाके अंतमें देवताका विसर्जन करते समय अिस वचनका प्रयोग होता है। अिसका अर्थ है—'फिर आनेके लिअे।' भाव यह है कि विदाअी हमेशाके लिअे नहीं है, बल्कि फिरसे मिलनेके लिअे ही है।

लेखककी अिस अिच्छाकी या संकल्पकी पूर्ति कअी सालोंके बाद किस प्रकार हुअी, अिसका वर्णन अगले प्रकरणमें देखिये।

१२. जोगके प्रपातका पुनर्दर्शन

पृ० ६४ अेतावान् अस्य महिमा० अितनी तो अुसकी महिमा है; पुरुष तो अिससे भी बड़ा है। यह वचन ऋग्वेदके पुरुषसूक्तसे लिया गया है।

पृ० ६६ अनुदरी: छोटे पेटवाली। मंदोदरी, कृशोदरीकी तरह।

विश्वजित् यज्ञ: 'सर्ववेदस्', वह यज्ञ जिसमें जीवनकी सारी कमाअी देनी होती है। तुलना कीजिये:

स्थाने भवान् अेक-नराधिपः सन्
अकिंचनत्वं मखजं व्यनक्ति।
पर्याय-पीतस्य सुरैर् हिमांशोः
कला-क्षयः श्लाघ्यतरो हि वृद्धेः॥ रघुवंश, ५–१६

[आप चक्रवर्ती राजा होकर विश्वजित् यज्ञके कारण उत्पन्न हुआ अकिंचनत्व दर्शाते हैं, यह योग्य है। देवताओंके बारी बारीसे पीनेके कारण चंद्रकी कलाका क्षय वृद्धिसे अधिक ध्यानीके योग्य है।]

पृ० ६७ अलकेश्वर: (अलका + ईश्वर) कुबेर।

प्रति-धनुष: आकाशमें इन्द्रधनुषके कुछ ऊपर दूसरा फीका धनुष अक्सर दिखाई देता है, उसको प्रति-धनुष कहा गया है। उसके रंग मूल धनुषके ठीक उलटे क्रममें होते हैं।

सुरधनु: देवोंका धनुष, 'इन्द्रधनु'।

सुरधुनी: स्वर्गकी नदी। यहां केवल नदी।

किसी भी नदीको गंगा कहा जाता है इसलिये।

प्रतिक्षण हमारा पुण्य . . . है : याद कीजिये :

क्षीणे पुण्ये मर्त्य-लोकं विशन्ति।

—गीता, ९–२१

पृ० ७० रोमें रोलां: (१८६६–१९४४) फ्रान्सके विश्व-विख्यात मानवतावादी साहित्यकार और कला-विवेचक। उनका उपन्यास 'जां क्रिस्तोफ' उनकी सर्वश्रेष्ठ कृति माना जाता है। सन् १९१६ में उन्हें इसके लिये 'नोबल पारितोषिक' मिला था। उन्होंने गांधीजी, रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानन्दकी जीवनियां लिखकर भारतकी विचारधारा पश्चिमके संसारको समभावपूर्वक समझायी थी। गांधीजी जब गोलमेज परिषद्में शरीक होनेके लिये विलायत गये थे, तब लौटते समय उनसे खास तौर पर मिले थे। उनकी भारत-सम्बन्धी डायरी फ्रेन्च भाषामें प्रसिद्ध हुई है। उसमें भी गांधीजी, रवीन्द्रनाथ, श्री अरविंद आदिके सम्बन्धमें काफी बातें हैं। वे युद्धके विरोधी थे और मानते थे कि कला सर्व-लोक-गम्य होनी चाहिये।

पृ० ७१ मानवकृत कलाकृति: सृष्टिमें जो सौन्दर्य होता है उसको कला नहीं कहते। कला तो मानवीय ही होती है। प्रकृतिका सौन्दर्य कलाकी उत्पत्तिका एक प्रेरक कारण जरूर है।

'अल्पस्य हेतो:' ० अल्प हेतुके लिये बड़ी वस्तुका नाश करनेकी अिच्छावाले। कवि कालिदासके 'रघुवंश' में यह वचन है। दिलीप जब

गायके बदलेमें अपना शरीर सिंहको देनेके लिअे तैयार होता है, तब अुसे समझानेके लिअे सिंह कहता है :

अेकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं,
नवं वयः, कान्तम् अिदं वपुश्च।
अल्पस्य हेतोर् बहु हातुम् अिच्छन्
विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम्॥ रघुवंश, २–४७

[संसारका अेक-छत्र राज्य, जवान अुम्र और यह सुंदर वपु (शरीर); थोड़ेके लिअे कितना बड़ा त्याग करनेके लिअे तुम तैयार हो गये हो! तुम मुझे विचारमूढ़ मालूम होते हो।]

१४. जोगका सूखा प्रपात

पृ० ७२ राक्षसी दुष्टता : याद कीजिये :

बुभुक्षितः किं न करोति पापम्
क्षीणा नरा निष्करुणा भवन्ति।

पृ० ७३ रावणकी तरह : रावण पैदा हुआ तब महारव करता ही पैदा हुआ था। अिस परसे अुसके पिताने अुसका नाम रावण रख दिया था।

तपस्विनी : गरमीका ताप सहती थी अिसलिअे।

संभाजीकी आंखें : १६८९ में संभाजीको गिरफ्तार करनेके बाद औरंगजेबने अुसको अिस्लाम स्वीकार करनेकी बात कही। किन्तु संभाजीने अिस्लाम स्वीकार करनेके बदले बादशाहका अपमान किया। अिसलिअे औरंगजेबने अुसकी जीभ कटवा डाली, आंखें निकलवा डालीं और अुसे मरवा डाला।

पृ० ७४ नदीमुखेनेव समुद्रभाविशेत् : नदीके मुखसे समुद्रमें प्रवेश करना। महाकवि कालिदासने 'रघुवंश' में रघुके विद्याभ्यासका वर्णन करते समय लिखा है :

लिपेर् यथावद् ग्रहणेन वाङ्मयं
नदी-मुखेनेव समुद्रम् आविशत्॥ रघु० ३–२८

[जिस प्रकार नदीके मुखसे समुद्रमें प्रवेश करते हैं, अुसी प्रकार लिपिके यथावत् ग्रहणके द्वारा अुसने साहित्यमें प्रवेश किया।]

अिस परसे गुजरात विद्यापीठके द्वारा चलनेवाले गुजरात महा-विद्यालयकी द्वैमासिक पत्रिका 'साबरमती' के लिअे जब ध्यानमंत्रकी आवश्यकता मालूम हुआी, तब श्री काकासाहबने 'नदीमुखेनेव समुद्रमाविशेत्' वचन दिया था। तबसे शायद अुनके मनमें यह खयाल दृढ़ हो गया होगा कि यही वचन कालिदासका मूल वचन है। मूलमें है 'आविशत्'=अुसने प्रवेश किया। अुस परसे काकासाहबने बना लिया: आविशेत्=प्रवेश करना चाहिये।

पृ० ७५ कालपुरुष: 'कालोऽस्मि लोकक्षयकृत् प्रवृद्धः' कहनेवाला गीताका विराट्-पुरुष।

'तत्रका परिदेवना': अुसमें शोक क्या? याद कीजिये:

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्त-मध्यानि भारत।
अव्यक्त-निधनान्येव तत्र का परिदेवना॥ गीता, २–२८

पृ० ७७ अुष्मपा: गरम गरम पीनेवाले, पितर। अन्न खाकर नहीं, अपितु केवल अुष्णता पीकर रहनेवाले पितर और देवता। गीतामें यह शब्द आया है। ११–१२

१५. गूर्जर-माता साबरमती

पृ० ७९ वनस्पति-अुपासक श्री शिवशंकर: प्रसिद्ध गुजराती लेखक और अनुवादक स्व० श्री चंद्रशंकर शुक्लके छोटे भाअी। आपने वनस्पतिका काफी गहरा अभ्यास किया है। हरिपुरा कांग्रेसके समय आपके अुत्साह और परिश्रमसे वनस्पति-प्रदर्शनका आयोजन किया गया था। आपने 'गुजरातनी लोकमाताओ' नामक गुजराती पुस्तक लिखी है।

पृ० ८० ब्राह्मणोंने तप किया है: कहते हैं कि शौनक, वसिष्ठ, वामदेव, गौतम, गालव, गांगेय, भरद्वाज, अुद्दालक, जमदग्नि, कश्यप, जड़भरत, भृगु, जाबालि आदि ८८ सहस्र ॠषियोंने साबरमतीके किनारे तपश्चर्या की थी।

पृ० ८१ 'वौठा' का मेला: प्रतिवर्ष कार्तिकी पूर्णिमाको गुजरातमें धोलका गांवके पास वौठामें यह मेला लगता है, जिसमें करीब लाख-डेढ़ लाख लोग अिकट्ठे होते हैं। यहां पर मेदवो, माझम, वात्रक और शेढीसे

बनी हुअी वात्रक नदीका खारी, हाथमती और साबरसे बनी हुअी साबरमतीके साथ संगम होता है।

साबरमतीके पुराने नाम : भिन्न भिन्न युगोंमें साबरमती भिन्न भिन्न नामोंसे पुकारी गयी है। सत्ययुगमें अुसको कृतवती, त्रेतामें मणिकर्णिका और द्वापरमें विधुवती या चंदना या चंदनावती कहते थे। कलियुगमें अुसको साभ्रमती कहते हैं।

कश्यपगंगा : अेक कथा अिस प्रकार है :

किसी समय लगातार सात वार जब अकाल पड़ा, तब अृषियोंने कश्यपसे प्रार्थना की और अुसने शंकरजीकी आराधना की। शंकरजी साभ्रमती गंगाको लेकर अर्बुदारण्यमें आये, जहांसे अिसकी धारायें अरण्यमें होकर गुजरातकी ओर बहने लगीं। तब समुद्रने प्रकट होकर कश्यपसे प्रार्थना की : 'भगवन्, कुछ भी करके अिस नदीका पानी मेरे जलमें मिला दीजिये। क्योंकि अगत्स्य अृषिने मेरा सारा पानी पीकर लघुशंकाके रूपमें वह पानी मुझे वापस दिया, अिसलिअे वह अपवित्र हो गया है। अिस नदीके स्पर्शसे वह पावन हो जायगा।'

साबरमती दूसरी नदियोंके साथ समुद्रसे जा मिली और समुद्र पावन हुआ!

दूसरी कथा अिस प्रकार है कि पार्वतीके डरसे गंगा अिधर अुधर भटक रही थी—'सा भ्रमति'। अुसे कश्यप अपनी जटाओंमें डालकर अर्बुदारण्यमें ले आये। यहां आनेके बाद अुन्होंने अपनी जटायें पछाड़ीं, अिसलिअे अुस गंगामें से सात प्रवाह बहने लगे। अुसका मुख्य प्रवाह साबरमती कहलाया और बाकीके छः प्रवाहोंसे वीठाके पास मिलनेवाली छः नदियां बनीं।

कश्यप अुसको ले आये, अतः वह कश्यपगंगा कहलायी।

पृ० ८२ दधीचिने तप किया : वृत्रासुर यज्ञकुंडमें से पैदा हुआ और क्षण-क्षणमें जितना बढ़ने लगा कि देखते ही देखते अुसने समग्र लोकको ढंक दिया। अिससे भयभीत होकर देवताओंने अुसके विरुद्ध अपने सारे दिव्य शस्त्रास्त्रोंका अुपयोग किया। किन्तु सब व्यर्थ गये। अिसलिअे अिन्द्र-सहित सब देवता आदिपुरुष अंतर्यामीकी शरणमें गये।

अंतर्यामीने कहा, 'महर्षि दधीचिके पास तुम जाओ और विद्या, व्रत तथा तपसे बलवान बने हुये उनके शरीरकी मांग करो। वे अस्वीकार नहीं करेंगे। फिर उस शरीरकी हड्डियोंसे विश्वकर्मा तुम्हें एक उत्तम आयुध बनाकर देंगे। उससे तुम वृत्रासुरका नाश हो सकेगा।'

साबरमती और चंद्रभागाके संगमके पास दधीचि ऋषि तप करते थे। वहां जाकर देवताओंने उनसे उनके शरीरकी मांग की। तब उन्होंने जवाब दिया :

"हे देवो, जो पुरुष अवश्य नाश होनेवाले अपने शरीरसे प्राणियों पर दया करके धर्म तथा यशको प्राप्त करना नहीं चाहता, वह स्थावर प्राणियों द्वारा भी शोक करने योग्य है। दूसरे प्राणियोंके दुःखसे दुखी होना और दूसरे प्राणियोंके आनन्दसे आनन्द मनाना, यही धर्म अविनाशी है। . . . इसलिये मैं अपने क्षणभंगुर तथा कौवे-कुत्तोंके भक्ष्यरूप शरीरको छोड़ता हूं। आप उसे ग्रहण करें।"

यह निश्चय करके ऋषिने परब्रह्मके साथ आत्माको एकाग्र किया और शरीरका त्याग किया।

इसके बाद देवताओंने कामधेनुको बुलाया। वह ऋषिके शरीरको चाटने लगी। चाटते चाटते केवल हड्डियां रह गयीं। इन हड्डियोंका वज्र बनाकर विश्वकर्माने इन्द्रको दिया, जिसके द्वारा इन्द्रने वृत्रासुरका नाश किया।

दधीचि ऋषिने जहां देहार्पण किया था, वहां कामधेनुका दूध गिरा था। अतः वहां दूधेश्वर महादेवजीकी स्थापना हुई।

खादीकी प्रवृत्ति : गांधीजीने स्वदेशी तथा खादीका प्रचार शुरू किया, इसलिये आश्रममें खादी-उत्पादनका काम भी शुरू हुआ। आज भी यह प्रवृत्ति वहां चल रही है।

खेती और गोशाला : खेतीकी और गायोंकी नस्ल सुधारनेकी प्रवृत्ति आश्रममें शुरू हुई थी। गोशाला तथा खेतीकी प्रवृत्ति विविध प्रयोगोंकी दृष्टिसे अब भी वहां चल रही है।

राष्ट्रीय शाला : आश्रमकी शाला। इसमें श्री काकासाहब, नरहरि परीख, किशोरलाल मशरुवाला, विनोबा आदि शिक्षाके

प्रयोग करते थे। अिन प्रयोगोंकी बुनियाद पर ही बादमें गुजरात विद्यापीठकी स्थापना हुअी।

आज 'बुनियादी तालीम' के नामसे पहचानी जानेवाली गांधीजीकी शिक्षा-पद्धतिकी नींव भी अिसी प्रवृत्तिको कह सकते हैं।

राष्ट्रीय त्यौहार : देखिये 'नवजीवन' द्वारा प्रकाशित श्री काकासाहबकी 'जीवनका काव्य' नामक पुस्तक।

लोक-संगीत तथा शास्त्रीय संगीत : आश्रमवासी पंडित नारायण मोरेश्वर खरे संगीतशास्त्री थे। अुन्होंने गुजरातके कुछ लोकगीतोंकी स्वरलिपि तैयार करके 'लोक-संगीत' नामक पुस्तक लिखी थी। शास्त्रीय संगीतके प्रचारके लिअे अुन्होंने 'राष्ट्रीय संगीत मंडल' की भी स्थापना की थी। अहमदाबाद कांग्रेसके समय 'अखिल भारत संगीत परिषद्' का अधिवेशन भी यहीं हुआ था। अुसमें गांधीजीकी प्रेरणा तथा पंडित खरेके प्रयत्न मुख्य थे।

'नवजीवन' तथा 'यंग अिण्डिया' : सन् १९१९ में जब गांधीजीने रौलेट बिलके विरुद्ध आंदोलन चलाया, तब अुन्हें अपने विचारोंके प्रचारके लिअे अखबारोंकी आवश्यकता महसूस होने लगी। श्री अिन्दुलाल याज्ञिक तथा अुनके मित्र गुजरातीमें 'नवजीवन अने सत्य' नामक मासिक चला रहे थे और अुसके द्वारा 'होमरूल' का प्रचार करते थे। गांधीजीने यही पत्र अपने हाथमें ले लिया और अुसको साप्ताहिक बनाकर 'नवजीवन' के नामसे चलाया। यह पत्र गुजरातीमें चलता था।

फिर, सारे देशमें प्रचार करनेके लिअे अेक अंग्रेजी अखबारकी आवश्यकता महसूस होने लगी। श्री शंकरलाल बैंकर, जमनादास द्वारकादास आदि 'यंग अिण्डिया' नामक अेक अखबार चलाते थे। गांधीजीने अिस पत्रको भी अपने हाथमें ले लिया।

दोनों साप्ताहिक सन् १९३३ तक चले। फिर हरिजन-प्रवृत्तिको चलानेके लिअे गांधीजीने जेलसे पत्र शुरू किये, जिनके नाम थे: 'हरिजन' (अंग्रेजी), 'हरिजनबन्धु' (गुजराती) और 'हरिजनसेवक' (हिन्दुस्तानी)। सन् ४२ से ४५ तकका काल यदि छोड़ दें, तो ये अखबार गांधीजीकी मृत्यु तक अुनके विचारोंके वाहन रहे।

गांधीजीकी मृत्युके बाद ये साप्ताहिक स्व० श्री किशोरलाल मशरूवालाने चलाये। अुनकी मृत्युके बाद श्री मगनभाअी देसाअी अुनके सम्पादक रहे। १९५६ के मार्चसे ये हमेशाके लिअे बंद कर दिये गये।

सत्याग्रह : चंपारन, खेड़ा, नागपुर, बोरसद, बारडोली आदि।

मिल-मालिकोंके साथका मजदूरोंका झगड़ा : यह झगड़ा सन् १९१८ में अहमदाबादके मिल-मालिक तथा मजदूरोंके बीच हुआ था। मजदूरोंका पक्ष न्यायका था, अिसलिअे गांधीजीने अुनका पक्ष लिया था। विशेष जानकारीके लिअे देखिये नवजीवन द्वारा प्रकाशित श्री महादेवभाअी देसाअीकी हिन्दी पुस्तक 'अेक धर्मयुद्ध'।

दांडीकूच : लाहौर कांग्रेसमें 'पूर्ण स्वराज्य' का प्रस्ताव पास होनेके बाद अुसको अमलमें लानेके लिअे गांधीजीने नमकका कानून तोड़नेका निश्चय किया था। भारतके स्वातंत्र्य-संग्रामके अितिहासका यह अेक अुज्ज्वल प्रकरण है।

कूचके लिअे अपने ७९ साथियोंके साथ जब गांधीजी सत्याग्रहाश्रम साबरमतीसे निकले, तब अुन्होंने प्रतिज्ञा ली थी कि 'जब तक स्वराज्य नहीं मिलेगा, मैं आश्रममें वापस नहीं लौटूंगा।' अिस कूचने सारे देशमें बिजलीकी गतिसे नवजीवन और नअी शक्तिका संचार किया था।

गांधीजीके वर्धा और सेवाग्राम जानेका यह भी अेक कारण था।

पृ० ८३ जलियांवाला बाग : रौलेट अेक्टके खिलाफ गांधीजीने जब आन्दोलन छेड़ा, तब अुन्होंने ६ अप्रैल, १९१९ के दिन सारे देशमें हड़ताल करने और अुपवास करनेका आदेश दिया था। सारे देशने अुसका अपूर्व अुत्साहके साथ पालन भी किया था। किन्तु तीन दिनके बाद, १० अप्रैल १९१९ के रोज, अमृतसरके डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेटने वहांके कांग्रेसी नेता डॉ० किचलू और सत्यपालजीको गिरफ्तार करके किसी अज्ञात स्थान पर भेज दिया। अिससे शहरमें हुल्लड़ हुआ और शहरको फौजके हाथमें सौंप दिया गया। पंजाबमें अन्यत्र भी वैसी ही घटनायें घटीं, जिनमें जानमालकी बड़ी हानि पहुंची। अिसके सिवा

गांधीजीकी गिरफ्तारीके कारण देशके अन्य भागोंमें भी हुल्लड़ हुए, परन्तु वहां शांति हो गयी। १३ अप्रैल हिन्दुओंका वर्षारंभका दिन था। उस दिन अमृतसरके जलियांवाला बागमें आम सभा होनेकी घोषणा की गयी थी। यह जगह ऐसी थी जिसके चारों ओर मकान ही मकान थे और बागके अन्दर जानेके लिये केवल एक ही संकरा रास्ता था। वहां सभाके समय बीस हजार स्त्री, पुरुष और बच्चे जिकट्ठे हुए थे। इतनेमें जनरल डायर १०० देशी और ५० विदेशी फौजी सिपाहियोंको लेकर आया और दो-तीन मिनटके अंदर ही उसने गोली चलानेका हुक्म दिया। स्वयं डायरके कथनके अनुसार १६०० गोलियां छोड़ी गयी थीं और जब गोलियां खतम हो गयीं तभी गोलियां चलाना बंद किया गया था। करीब ४०० लोग मारे गये और दो हजार घायल हुए थे।

गुजरात विद्यापीठ : १९२० में जब असहयोगका आंदोलन शुरू हुआ, तब गांधीजीने देशके विद्यार्थियोंको सरकारी स्कूल-कॉलेज छोड़नेका आदेश दिया था। जिस आदेशका पालन करके जिन विद्यार्थियोंने सरकारी शिक्षण-संस्थाओंका बहिष्कार कर दिया, उनमें से कुछ विद्यार्थी रचनात्मक कार्योंमें लग गये। किन्तु बाकी विद्यार्थियोंके लिये शिक्षाका स्वतंत्र प्रबंध करना आवश्यक था। जिनके लिये देशभरमें राष्ट्रीय संस्थायें स्थापित हुईं—जैसे बिहारमें बिहार विद्यापीठ, काशीमें काशी विद्यापीठ, पूनामें तिलक विद्यापीठ वगैरा। गुजरातके गुजरात विद्यापीठका भी जिसीमें समावेश होता है। जिसकी स्थापना १९२० में हुई थी। जिसके शिक्षकों और विद्यार्थियोंने गुजरातके सार्वजनिक जीवनमें तथा साहित्यिक और सांस्कृतिक प्रवृत्तियोंमें बड़े महत्त्वका भाग लिया है। आज भी यह संस्था शिक्षा और साहित्य-प्रकाशनका कार्य कर रही है।

१६. शुभयान्वयी नर्मदा

पृ० ८४ शुभयान्वयी : भारतके दक्षिण और उत्तरके दोनों विभागोंको जोड़नेवाली।

अमरकंटक तालाब : बिलासपुरके पासके मेखल, मेकल या माखिकाल पर्वतका एक हिस्सा अमरकंटकके नामसे मशहूर है। उसकी तलहटीमें जो तालाब है उसको भी अमरकंटक ही कहते हैं। यहींसे नर्मदा और सोणका उद्गम हुआ है। इसी परसे नर्मदाको मेकल-कन्यका भी कहते हैं। अमरकंटक श्राद्धके लिये उत्तम स्थान माना जाता है।

पृ० ८५ विन्ध्य : मशहूर पर्वतश्रेणी। अगस्ति ऋषि इसीको पार करके दक्षिणकी ओर जाकर बसे थे। जिसके ऊपर विन्ध्यवासिनीका प्रख्यात मंदिर है। जिसके थोड़े आगे अष्टभुजा योगमायाका मंदिर है, जो शक्तिका पीठ माना जाता है।

सातपुड़ा : नर्मदा और ताप्तीके बीच सात पुड़ों (folds) की पर्वतश्रेणी। ताप्ती यहींसे निकलती है।

भृगुकच्छ : आजकलका भड़ौंच। कच्छ = नदी या समुद्रका किनारा।

पृ० ८६ आदिम निवासी : जिस प्रदेशके मूल निवासी भील आदि लोग, जो आज भी गरीबी और अज्ञानमें डूबे हुये हैं।

पृ० ८७ सबिन्दु सिन्धु ० ये नर्मदाष्टककी पंक्तियां हैं। यह आद्य शंकराचार्यका लिखा माना जाता है। जिसका प्रारंभ जिस प्रकार है :

सबिन्दु-सिन्दुर-स्फलत्-तरंग-भंग-रंजितम्
द्विषत्सु पापजातजातकारिवारि-संयुतम्।
कृतान्तदूत-काल-भूत-भीतिहारि-वर्मदे
त्वदीय पाद-पंकजं नमामि देवि नर्मदे॥

पृ० ८८ गतं तदैव ० पूरा श्लोक जिस प्रकार है :

गतं तदैव मे भयं त्वदम्बु वीक्षितं यदा
मृकुण्डसूनुशौनकासुरारिसेवि सर्वदा।
पुनर्भवाब्धिजन्मजं भवाब्धिदुःखवर्मदे
त्वदीय पाद-पंकजं नमामि देवि नर्मदे॥ ४॥

पंचगौड़ : सरस्वतीके किनारेका प्रदेश, कन्नौज, उत्कल, मिथिला और गौड़—यानी बंगालसे लेकर भुवनेश्वर तकका प्रदेश। विन्ध्यके

उत्तरमें स्थित जिन पांच प्रदेशोंमें रहनेवाले ब्राह्मण। उन प्रदेशों परसे वे अनुक्रमसे सारस्वत, कान्यकुब्ज, उत्कल, मैथिल और गौड़ कहलाते हैं।

पंचद्रविड़ : विन्ध्याचलके दक्षिणमें रहनेवाले पांच जातिके ब्राह्मण : महाराष्ट्र, तैलंग, कर्णाट, गुर्जर और द्रविड़।

विक्रम संवत् : विक्रमादित्यके नामसे चलनेवाला संवत्। यह ईस्वी सन्से ५६ साल पूर्व शुरू हुआ था।

शालिवाहन शक : शालि=सिंह। सिंह जिसका वाहन है वह। दंतकथा ऐसी है कि जिस नामका ऐक मशहूर राजा बचपनमें सिंहके आकारके ऐक यक्षका वाहन बनाकर सर्वत्र घूमता था। इसीलिये वह शालिवाहन कहलाया। उसके नामसे चलनेवाली वर्षगणनाको 'शक' कहते हैं। जिसके अनुसार वर्षका आरंभ चैत्र माससे शुरू होता है। विक्रम संवत्से वह १३४-३५ वर्ष और ईस्वी सन्से ७८ वर्ष पीछे है। भारत-सरकारने अब जिसको अपनाया है।

पृ० ९० कबीरवड़ : भड़ौचके पूर्वमें शुक्लतीर्थके पास नर्मदाके प्रवाहके बीचमें ऐक टापू है, वहां यह प्रसिद्ध वड़ है। कहते हैं कि कबीरने दातुन करके जो टुकड़ा फेंक दिया था उससे यह वटवृक्ष पैदा हुआ।

१७. संध्यारस

पृ० ९३ रसवती पृथ्वी और निःशब्द आकाश : यहां जान-बूझकर न्यायशास्त्रकी व्याख्या तोड़ दी गयी है। मूल व्याख्या है : 'गंधवती पृथ्वी' और 'शब्दगुणम् आकाशम्।'

वनेचर : संस्कृतमें 'वनचर' कहते हैं जंगलमें रहने-घूमनेवाले जंगली पशुओंको और 'वनेचर' कहते हैं जंगलमें रहने-घूमनेवाले मनुष्योंको। यह भेद यहां कायम रखा गया है।

सुर-असुरोंके गुरु : बृहस्पति और शुक्राचार्य — यहां आकाशके गुरु और शुक्र नामक ग्रह।

१८. रेणुका का शाप

पृ० ९५ अंतःस्रोता : [अन्तः (अंदर) + स्रोता (प्रवाहवाली)] जिसका प्रवाह भूमिके अंदर है ऐसी नदी।

राणकदेवीका शाप : ऐक लोककथा कहती है कि गुजरातके राजा सिद्धराज जयसिंहने सोरठ पर चढ़ाई की और जूनागढ़को घेर लिया। वहांके राणा रा' खेंगारके भानजे ही विपक्षीसे जा मिले। परिणामस्वरूप जूनागढ़का पतन हुआ, खेंगार परास्त हुआ और मारा गया। सिद्धराजने अुसकी रानी राणकदेवी पर अधिकार कर लिया। रानीको लेकर वह पाटण जा रहा था। बीचमें वडवाणके पास रानी सती हो गअी। इतिहासमें अिसके लिअे कोअी समर्थन नहीं है। सिद्धराजने खेंगारको हरा कर कैद कर लिया था, अितना तो निश्चित कहा जा सकता है। यह संभव है कि बादमें अुसने सिद्धराजकी सत्ता स्वीकार की हो, अिसलिअे सिद्धराजने अुसे छोड़ दिया हो और सोरठकी ओर आते समय वडवाणके पास किसी कारणसे अुसकी मौत हो गअी हो और वहां अुसकी रानी सती हुअी हो।

यहां 'राणक' का अर्थ रेणुका नहीं है। 'गयाकी फल्गु' नामक प्रकरणमें 'सीताका शाप' और 'सिकताका शाप' से अिसकी तुलना कीजिये।

योमा : ब्रह्मी भाषामें पहाड़को 'योमा' कहते हैं। जैसे, आराकान योमा, पेगु योमा।

अलस-लुलित : [अलस (आलस्यसे भरा हुआ) + लुलित (थका हुआ) जब 'ललित' पाठ हो तब 'सुन्दर'] धीर गतिसे और थकी-मांदी चालसे चलनेवाली। यह शब्द 'अुत्तररामचरित' के अंक १, श्लोक २४ में आता है:

अलस–लुलित–मुग्धानि अब्द-संजात-खेदात्
अशिथिल–परिरंभैर् दत्त-संवाहनानि।
परिमृदित–मृणाली–दुर्बलानि अंगकानि
त्वम् अुरसि मम कृत्वा यत्र निद्राम् अवाप्ता॥

अन्त्यजोंका शाप लेकर : अुन्हें पानीकी सुविधा न देकर।

पृ० ९६ खंडिता : काव्यशास्त्रमें बताअी गयी मुख्य आठ नायिकाओंमें से अेक। 'अीर्ष्याकिषायिता' — अीर्ष्यासे भरी हुअी स्त्री।

यहां खंडिताका यह अर्थ भी है : जिसका प्रवाह खंडित हुआ हो।

१९. अंबा-अंबिका

पृ० ९७ अंबा-अंबिका : महाभारतमें यह कथा है : भीष्म किसी समय काशीराजकी कन्याओंके स्वयंवरमें से अुसकी तीनों पुत्रियोंका — अंबा, अंबिका और अंबालिकाका अपहरण कर लाये। अिसके लिअे जो युद्ध हुआ अुसमें अुन्होंने शाल्वराजको परास्त किया। किन्तु जब कन्याओंका राजा विचित्रवीर्यके साथ विवाह करनेकी बात निकली, तब अिन कन्याओंमें से केवल अेकने — बड़ी कन्या अंबाने — कहा, 'मैं तो मनसे शाल्वराजसे विवाह कर चुकी हूं।' अतः अुसे शाल्वराजके यहां भेज दिया गया। किन्तु शाल्वने अुसे स्वीकार नहीं किया, अिसलिअे अुसने भीष्मके गुरु परशुरामकी शरण ली। किन्तु गुरुके कहने पर भी भीष्म अंबाको स्वीकार करनेके लिअे तैयार नहीं हुअे। अिससे गुरु-शिष्यके बीच दारुण युद्ध छिड़ा, अिसमें गुरु परास्त हुअे और अंबाने वनमें जाकर भीष्मवधके संकल्पसे तपस्या करके अग्नि-प्रवेश किया और शरीर छोड़ा। वही बादमें द्रुपद राजाके यहां शिखंडीके रूपमें पैदा हुअी और भीष्मवधका कारण बनी।

यहां लेखकने पौराणिक कथामें मनमाना फेरफार किया है।

राजा कर्णके दो आंसू : गुजरातके वाघेला वंशका आखिरी राजपूत राजा कर्णदेव अत्यंत क्रोधी और विलासी था। अुसने अपने मंत्री माधवके भाअी केशवको मरवा कर अुसकी पत्नीको अपने अंतःपुरमें रख लिया था। अपमान और अत्याचारसे क्रुद्ध होकर माधवने दिल्ली जाकर अलाअुद्दीनको गुजरात पर चढ़ाअी करनेके लिअे प्रेरित किया। अुसने अपने दो सरदारोंको गुजरात पर चढ़ाअी करनेके लिअे भेजा। अुन्होंने गुजरातको जीता, राजधानी पाटणको लूटा और राजा कर्णकी रानियों और बच्चोंको पकड़ कर दिल्ली पहुंचा दिया। कर्ण देवगढ़के

राजाके आश्रयमें गया। कहते हैं कि उसने अपने अंतिम दिन अज्ञात-वासमें, आबूके जंगलोंमें अिन नदियोंके आसपासके प्रदेशमें, भटककर शोक-विह्वल दशामें बिताये थे। यहां अुसीका सूचन है।

गुजराती भाषाका पहला अुपन्यास सन् १८६७ में अिसी वृत्तांतके आधार पर लिखा गया था।

२०. लावण्यफला लूनी

पृ० ९८ लावण्यफला: लवण=नमक; लवण-प्रधान, लवण-समृद्ध होनेसे यह नाम दिया गया है।

२१. अुंचळ्ळीका प्रपात

पृ० १०० 'भागमोड़ी': यह मराठी शब्द है। अर्थ है नागकी तरह टेढ़ामेढ़ा, सर्प-सदृश।

पृ० १०१ 'कोयता': हंसिया।

पृ० १०२ घनघोर: [घन=गाढ़ा+घोर=भयावना] गाढ़ा और भयावना।

पृ० १०४ जितनें शुभ्र पानीमें: नदीके नाम परसे यह सूझा है।

पदक्रम: तुलना कीजिये:

भयो त्रिविक्रम, कियो पदक्रम
अेक मही पर, बीजेको अंबर, वैजुके प्रभु
त्रीजेको सिर पर।

जीवनावतार: पानीका नीचे अुतरना।

पृ० १०५ कटक: संस्कृतमें 'कटक' का अर्थ है कंकण। जिस परसे आभूषण, गहनेका अर्थ करके श्लेष बसाया गया है।

सोनेके ढक्कनसे: तुलना कीजिये:

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्। ओशावास्य, १५

जिस जगतको....ढंकना ही चाहिये: मूल मंत्र जिस प्रकार है:

ओशावास्यम् अिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।

हरी नीलिमा : नीलका अर्थ काला, आसमानी, हरा, चमकीला आदि किया जाता है। यहांकी नीलिमा हरे रंगकी थी। अंजीर या मखमलमें जिस प्रकार दो रंगोंकी छटायें दिखाअी देती हैं, अुसी तरहकी छटायें पानीमें भी कभी बार दिखाअी देती हैं — अैसा भी यहां सूचन है।

पृ० १०६ युयोधि अस्मत्० यह अीशावास्य अुपनिषद्का अंतिम मंत्र है।

२२. गोकर्णकी यात्रा

पृ० १०८ कपिलाषष्ठी : भादों वदी छठ, हस्त नक्षत्र, व्यतिपात और मंगलवार — अिनके योगका दिन। यह अेक दुर्लभ दिन है, जो हर ६० सालके बाद आता है।

पृ० ११० कृतार्थ कर दिया : नहला दिया।

२३. भरतकी आंखोंसे

पृ० ११७ अद्य मे सफला० आज मेरी यात्रा सफल हुअी। मैं पानीके प्रसादसे धन्य हुआ। मूलमें 'त्वत् प्रसादतः' था, जो यहां बदल दिया गया है।

पृ० ११८ श्री रामचंद्रजीके प्रबंधक : रामके बदले भरत अयोध्याका राज्य संभालते थे अिसलिअे। 'भरणात् भरतः'।

२४. वेळगंगा — सीताका स्नान-स्थान

पृ० ११९ वेरूलग्रामका हरा कुंड : अंग्रेजीमें वेरूलको 'अिलोरा' कहते हैं। अिसलिअे वह अिसी नामसे अधिक प्रख्यात है। यह गांव शिवाजीके पुरखोंका है। यहां अेक सुन्दर कुंड है। अिस कुंडके विषयमें अैसी दंतकथा प्रचलित है कि अिल्वपुरके येलु नामक राजाको कोअी अैसा रोग हुआ था, जिसके कारण अुसके शरीरमें कीड़े पड़ गये थे। कअी अुपाय किये गये, किन्तु सब व्यर्थ गये। रोग वैसा ही रहा। अंतमें अुसे अिस कुंडके बारेमें आकाशवाणी सुनायी दी : "तुम जाकर अुस तीर्थमें स्नान करो। तुम्हारा शरीर अच्छा हो जायगा।"

राजाने स्नान किया और अुसका रोग मिट गया!

कहते हैं कि अुसी राजाने बादमें वेरूळकी गुफामें खुदवानेका काम शुरू किया। जाड़ोंमें हरी काओके कारण कुंडका पानी भी हरा मालूम होता है। कुंडके चारों ओर सुन्दर सीढ़ियां बनी हुअी हैं।

पृ० १२० प्राकृतिक सौंदर्यके प्रति सीताका पक्षपात: सीताको राजमहलमें रखकर राम जब वनवास जानेकी बातें करते हैं, तब सीताजी भी वनमें जानेके लिअे और वहांके कष्ट सहनेके लिअे तैयार हो जाती हैं। वे कहती हैं:

> फलमूलाशना नित्यं भविष्यामि न संशयः।
> न ते दुःखं करिष्यामि निवसन्ती त्वया सह ॥१६॥
> अग्रतस्ते गमिष्यामि भोक्ष्ये भुक्तवति त्वयि।
> अिच्छामि परतः शैलान्पल्वलानि सरांसि च ॥१७॥
> द्रष्टुं सर्वत्र निर्भीता त्वया नाथेन धीमता।
> हंसकारण्डवाकीर्णाः पद्मिनीः साधुपुष्पिताः ॥१८॥
> अिच्छेयं सुखिनी द्रष्टुं त्वया वीरेण संगता।
> अभिषेकं करिष्यामि तासु नित्यमनुव्रता ॥१९॥
> सह त्वया विशालाक्ष रंस्ये परमनंदिनी।
> अेवं वर्षसहस्राणि शतं वापि त्वया सह ॥२०॥

अयोध्याकांड — २७ : १६–२०

[मैं हमेशा फलमूल खाकर ही रहूंगी। आपके साथमें रहकर मैं आपको कभी कष्ट नहीं दूंगी। मैं आपके आगे-आगे चलूंगी और आपके खानेके बाद ही खाअूंगी। आपके साथ निर्भयतासे सर्वत्र घूमकर पर्वत, सर और सरोवरोंको देखनेकी मेरी बड़ी अिच्छा है। आपके साथ रहकर हंस और कारंडवोंसे भरे हुअे सुन्दर पुष्पोंवाले सरोवर देखनेकी और आनंद मनानेकी मेरी अिच्छा है। अुन पद्मपूर्ण सरोवरोंमें मैं स्नान करूंगी और आपके साथ अुनमें रोज खेलूंगी। अिस तरहके सैकड़ों नहीं, बल्कि हजारों वर्ष भी मुझे आपके साथ क्षणके समान मालूम होंगे।]

'अुत्तररामचरित' में चित्र-दर्शनके बाद सीता अपना दोहद कहती हैं: 'मन करता है कि प्रसन्न और गंभीर वनराजियोंमें विहार

करूं और जिसका जल पावनकारी, आनंददायक और शीतल है अुस भगवती भागीरथीमें स्नान करूं।'

दूसरे अंकमें राम जनस्थान आदि प्रदेशोंको देखकर कहते हैं: 'सचमुच वैदेहीको वन पसन्द थे। ये वे ही अरण्य हैं! अिससे अधिक भयानक और क्या होगा?'

तीसरे अंकमें भी सीताके पाले हुअे हाथी, मोर, कदंब और हिरनोंका वर्णन आता है। देखिये:

सीतादेव्या स्वकर-कलितैः सल्लकीपल्लवाग्रैर्-
अग्रे लोलः करि-कलभको यः पुरा वर्धितोऽभूत्।
वध्वा सार्धं पयसि विहरन्सोऽयमन्येन दर्पाद्
अुद्दामेन द्विरदपतिना संनिपत्याभियुक्तः॥ ६॥

अनुदिवसम् अवर्धयत् प्रिया ते
यमचिरनिर्गतमुग्धलोलबर्हम्।
मणिमुकुट अिवोच्छिखः कदम्बे
नदति स अेष वधूसखः शिखण्डी॥१८॥

भ्रमिषु कृतपुटान्तमण्डलावृत्तिचक्षुः
प्रचलित-चटुल-भ्रू-ताण्डवैर्मण्डयन्त्या।
कर-किसलय-तालैर्मुग्धया नर्त्यमानं
सुतमिव मनसा त्वां वत्सलेन स्मरामि॥१९॥

कतिपयकुसुमोद्गमः कदम्बः
प्रियतमया परिवर्धितो य आसीत्।
स्मरति गिरिमयूर अेष देव्याः
स्वजन अिवात्र यतः प्रमोदमेति॥२०॥

नीरन्ध्र-बाल-कदली-वन-मध्यवर्ति
कान्तासखस्य शयनीय-शिलातलं ते।
अत्र स्थिता तृणमदाद् बहुशो यदेभ्यः
सीता ततो हरिणकैर् न विमुच्यते स्म॥२१॥

करकमल-वितीर्णैः अम्बु-नीवार-शष्पैस्
तरु-शकुनि-कुरंगान् मैथिली यान् अपुष्यत्।
भवति मम विकारस् तेषु दृष्टेषु कोऽपि।
द्रव इव हृदयस्य प्रस्तरोद्भेदयोग्यः ॥२५॥

सुवर्णमय वनः देती है: फसलकी समृद्धि और अुसका पीला रंग, दोनोंका यहां सूचन है।

पृ० १२२. जीवनमयः 'जीवन' का अर्थ पानी भी होता है।

पृ० १२३ रामरक्षा-स्तोत्रः बुध कौशिक ऋषि द्वारा रचित अत्यंत मनोहर और लोकप्रिय स्तोत्र।

शिरो मे राघवः पातु, भालं दशरथात्मजः ॥४॥
कौसल्येयो दृशौ पातु, विश्वामित्रप्रियः श्रुती।
घ्राणं पातु मखत्राता, मुखं सौमित्रिवत्सलः ॥५॥
जिह्वां विद्यानिधिः पातु, कंठं भरतवन्दितः।
स्कन्धौ दिव्यायुधः पातु, भुजौ भग्नेशकार्मुकः ॥६॥
करौ सीतापतिः पातु, हृदयं जामदग्न्यजित्।
मध्यं पातु खरध्वंसी, नाभिं जाम्बवदाश्रयः ॥७॥
सुग्रीवेशः कटिं पातु सक्थिनी हनुमत्प्रभुः।
ऊरू रघूत्तमः पातु, रक्षःकुल-विनाशकृत् ॥८॥
जानुनी सेतुकृत् पातु, जङ्घे दशमुखान्तकः।
पादौ विभीषणश्रीदः, पातु रामोऽखिलं वपुः ॥९॥

२५. कृषक नदी घटप्रभा

पृ० १२४ हमारी ओरके: दक्षिण महाराष्ट्रको छूनेवाले।
धाराकोंका: किसानोंका।

२६. कश्मीरकी दूधगंगा

सरोवरको तोड़कर: "आज जहां कश्मीरका रमणीय प्रदेश है, वहीं पुराणकालमें सतीसर नामक अेक सुदीर्घ सरोवर था, जो हरमुख पर्वत और पीरपुंजालके बीच फैला हुआ था। स्वयं पार्वती अिस सरोवरमें विहार करती थी। किन्तु बादमें अुसमें कभी राक्षस आ

घुसे। अिसलिअे देवताओंने सतीसरका नाश करनेकी बात सोची। भगवान कश्यपने वराहकी अुपासना की। वराहने संतुष्ट होकर अपने हंसियेसे पहाड़में घाटी बना दी और सतीसरका पानी 'वराहमूलम्' की घाटीमें से वितस्ता नदीके रूपमें बहने लगा। वितस्ता ही झेलम है और 'वराहमूलम्' आजका बारामुल्ला है।"

—लेखककी गुजराती पुस्तक 'जीवननो आनंद' में से।

अुपत्यका : घाटी। (किसी प्रकार अधित्यका का अर्थ है अुच्च प्रदेश — tableland।)

पृ० १२५ सती-कन्या : सतीके प्रदेशमें पैदा हुअी अिसलिअे।

२७. स्वर्धुनी वितस्ता

पृ० १२६. 'संसारमें अगर ... यहीं है' : मूल फारसी पंक्तियां अिस प्रकार हैं :

अगर फिरदौस बरूअे जमीनस्त,
हमीनस्तो, हमीनस्तो, हमीनस्त।

पृ० १२७ अुसके किनारे अेक बड़ी वैभवशाली संस्कृति ... हुआ : अनंतपुरके समीप अेक पहाड़ीके नीचे अेक प्राचीन शहरके अवशेष दबे हुअे थे, जो अभी अभी खोदे गये हैं।

चिनार : ये महावृक्ष सिर्फ कश्मीरमें ही होते हैं।

बुतशिकन : [बुत = मूर्ति + शिकन = तोड़नेवाला] मूर्तिभंजक।

गाजी : धर्मके लिअे युद्ध करनेवाला मुसलमान। यह शब्द अरबी है।

पृ० १२८ सर्वतः संप्लुतोदके : चारों ओर पानीकी बाढ़ आयी हो तब। गीता, २–४६

सूअरके दांतके जैसा : मालूम होता है 'वराहमूलम्' परसे यह अुपमा सूझी है।

पृ० १२९ निर्माल्य : देवताको चढ़ानेके बाद जो फेंक दिये जाते हैं।

पृ० १३० स्वर्धुनी : [स्वर् = स्वर्ग + धुनी = नदी] स्वर्गकी नदी।

२८. सेवाव्रता रावी

पृ० १३१ स्वामी रामतीर्थ : आधुनिक भारतके निर्माणमें स्वामी रामतीर्थका महत्त्वका हाथ है। श्री काकासाहबने मराठीमें स्वामीजीकी जीवनी लिखी थी तथा अुनके कुछ लेखोंका अनुवाद करके मराठीमें अेक संग्रह प्रकाशित किया था। यह अुनकी पहली साहित्य-कृति थी। अिसीसे काकासाहबके लेखक-जीवनका आजसे तीस वर्ष पहले आरंभ हुआ था।

अर्जुनदेव : (१५६३–१६०६) सिखोंके पांचवें गुरु। आदिग्रंथके रचयिता। अिसमें अुन्होंने पहलेके गुरुओंकी और अन्य संतोंकी वाणी संगृहीत की है। कहते हैं कि अुनके दुश्मनोंने अकबर बादशाहके पास जाकर अुनके खिलाफ शिकायत की थी कि अर्जुनदेवने अिस ग्रंथमें हिन्दूधर्म तथा अिस्लामकी निन्दा की है। किन्तु अकबरने अुनका ग्रंथ देखकर अुनको छोड़ दिया और अुनका बड़ा सम्मान किया। जहांगीरके समयमें अुनके दुश्मनोंने फिरसे शिकायत की। जहांगीर अपने लड़के खुसरोको कैद करना चाहता था। खुसरो भागता हुआ अर्जुनदेवके पास आश्रय मांगने आया। अर्जुनदेवने अुसको आश्रय दिया। बादशाहने अिसको राजद्रोह मानकर अुन पर दो लाख रुपयोंका जुर्माना किया। अर्जुनदेवने न खुद जुर्माना दिया, न दूसरोंको देने दिया। अिसलिअे बादशाहने जेलमें अुन पर बहुत अत्याचार करवाये और आखिर अुनकी हत्या करवा डाली। यों मानकर कि तलवारके बिना अपना पंथ कायम रहना असंभव है, अुन्होंने अपने पुत्रको सशस्त्र बन कर गद्दी पर बैठनेका और पर्याप्त फौज रखनेका आदेश भेज दिया था। अिससे सिखोंके अितिहासको नयी ही दिशा प्राप्त हुअी।

रणजितसिंह : (१७८०–१८३९) : सिखोंके राजा। अहमदशाह अब्दालीके बाद पंजाबका सूबा फिरसे सिखोंके हाथमें आया था। किन्तु अुसके छोटे-छोटे टुकड़े हो गये और वे आपसमें लड़ने लगे। रणजित-सिंह तेरह सालकी अुम्रमें गद्दी पर बैठे। और १९ सालकी अुम्रमें अुन्होंने सिखोंके सभी राज्योंका आधिपत्य अपने हाथमें ले लिया।

अंग्रेज भी अुनसे डरते थे। जब सन् १८२३ में अुन्होंने पेशावर प्रांत जीत लिया, तब अुसे वापस दिलवानेके लिअे दोस्त महंमदने अंग्रेजोंसे बहुत कहा। किन्तु अंग्रेजोंने कुछ भी नहीं किया। ४० साल तक सतत परिश्रम करके रणजितसिंहने सिखोंमें फौजी ताकत पैदा की। कहते हैं कि जब वे अटक नदीको पार करना चाहते थे, तब अुनके गुरुने अुनसे कहा कि हिन्दुओंको अटक पार करनेकी आज्ञा नहीं है। अुन्होंने जवाबमें कहा:

सर्व भूमि गोपालकी, तामें अटक कहां?
जाके मनमें अटक है, वो ही अटक रहा।

और सारा अफगानिस्तान जीत लिया।

पृ० १३३ अप्सरा: [अप् = पानी + सृ = आगे जाना = पानीमें तैरनेवाली, विहार करनेवाली।] गंधर्वोंकी स्त्री। अप्सराओंको पानीमें खेलना बहुत पसन्द है, अिसलिअे अुनको यह नाम दिया गया है। रामायणमें अुनकी अुत्पत्तिके बारेमें अिस प्रकार लिखा है:

अप्सु निर्मथनाद् अेव रसात् तस्माद् वरस्त्रियः।
अुत्पेतुरमनुजश्रेष्ठ! तस्माद् अप्सरसोऽभवन्॥

परोपकाराय० यह शरीर परोपकारके लिअे है।

२९. स्तन्यदायिनी चिनाव

पृ० १३५ मेरी जीवन-स्मृति: सन् १८९१-९२ में।

३०. जम्मूकी तवी अथवा तावी

पृ० १३६ विग्रह: युद्ध। अलग करना।

संधि: सुलह। मिलाना।

राजनीतिमें कार्यसिद्धिके छह मार्ग बताये गये हैं:

(१) संधि, (२) विग्रह, (३) यान (चढ़ाअी), (४) स्थान अथवा आसन (मुकाम करना), (५) संश्रय (आश्रय लेना), (६) द्वैध या द्वैधीभाव—फूट डालना।

'आत्मरति, आत्मक्रीड़' ० श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञका वर्णन करते हुये मुंडकोपनिषद्में कहा गया है:

आत्मक्रीड़ आत्मरतिः क्रियावान् एष ब्रह्मविदां वरिष्ठः ॥

मुण्डक, ३–१–४

आत्मामें खेलनेवाला, आत्मामें रमनेवाला, क्रियावान पुरुष ब्रह्मज्ञोंमें श्रेष्ठ है।

आत्मन्येव० देखिये गीता, ३–१७

यस्त्वात्मरतिरेव स्यात् आत्मतृप्तश्च मानवः।
आत्मन्येव च संतुष्टः तस्य कार्यं न विद्यते ॥

[जो मनुष्य आत्मामें ही रमा रहता है, जो आत्मासे तृप्त रहता है और आत्मामें संतोष मानता है, उसे कुछ करनेको बाकी नहीं रहता।]

३१. सिंधुका विषाद

पृ० १३७ मानदण्ड: नापनेका दण्ड। महाकवि कालिदासके 'कुमारसंभव' के पहले श्लोकमें हिमालयके लिये जिस शब्दका प्रयोग किया गया है:

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः।

[उत्तर दिशामें जिस पर देवोंका वास है ऐसा हिमालय नामक पर्वतराज पृथ्वीको नापनेके गजकी तरह पूर्व और पश्चिम सागरमें स्नान करता हुआ खड़ा है।]

पंजाबकी पांच नदियां: झेलम, चिनाब, रावी, व्यास और सतलज।

युक्तप्रांतकी पांच नदियां: गंगा, यमुना, गोमती, सरयू, चंबल।

अति-भारतीय: केवल भारतमें ही नहीं, बल्कि भारतकी सीमाके बाहर भी बहनेवाली ये दोनों नदियां भारतवर्षके बाहरसे भारतमें आती हैं, यानी भारतवर्षकी सीमाका अतिक्रमण करके बहती हैं, इसलिये जिन्हें अति-भारतीय कहा गया है।

पृ० १३८ वैदिक . . . सप्तसिंधु : वेदोंमें जिनका जिक्र है, वे सात नदियां : वितस्ता (झेलम), असिक्नी या चंद्रभागा (चिनाव), परुष्णी या अिरावती (रावी), शतद्रु (सतलज), विपाशा (बियास, ब्यास), सिंधु और सरस्वती। क्रुमु या कुर्रम अिनमें नहीं गिनी गअी है।

प्राचीन आर्य . . . खतरेमें आ पड़े : भारत पर जितने आक्रमण हुअे, लगभग सभी अिसी ओरसे हुअे।

परोपनिसदी : अफगान। ग्रीक भाषामें अफगानिस्तानको 'परोपनिसद' कहते हैं।

यवन : Ionian Greeks के प्रथम शब्द परसे यह शब्द बना है।

बल्हीक : बल्ख, बैक्ट्रिया। बाल्हीक शब्द वेदमें आया है।

रानी सेमीरामिस : [औ० स० पूर्व ८०० के आसपास] : असीरियाकी पुराण-प्रसिद्ध रानी। कहते हैं कि बेबिलोनकी स्थापना अिसीने की थी। और यह भी माना जाता है कि निनेवेहकी स्थापना करनेवाले अुसके पति नीनससे भी वह अधिक पराक्रमी थी। छुटपनमें अुसकी मांने अुसको छोड़ दिया था और कबूतरोंने अुसकी परवरिश की थी। प्रथम वह नीनसके अेक सेनापतिके साथ विवाह-बद्ध हुअी थी, किन्तु बादमें जब नीनसकी नजर अुस पर जमी तब अुसके पतिने आत्महत्या कर ली। अिसके बाद वह नीनससे विवाह-बद्ध हुअी और नीनसके पश्चात् गद्दी पर बैठी। अुत्तर-वयमें अुसने अपने पुत्रको गद्दी पर बिठाया था।

सुवर्ण-करभार : औ० स० पूर्व छठी सदीमें अीरानके बादशाह पहले दरायसने सिंध प्रदेश अपने कब्जेमें ले लिया था और अुससे सालाना १८५ हंडरवेट (=५१५।। मण) सुवर्ण-करभार लेना शुरू किया था। अुसीका यहां अुल्लेख है।

कुशेची : औस्वी सन् पूर्व पहली सदीके आसपास अुत्तर भारतसे शकोंको दक्षिणमें भगाकर वहां अपने साम्राज्यकी स्थापना करनेवाले मध्य अेशियाके कुशान लोग। अिनमें से कअियोंने बौद्ध और कुछ लोगोंने हिन्दूधर्म अपना लिया था। विख्यात बौद्ध सम्राट् कनिष्क कुशान

था। कुशान साम्राज्यके वैभवके दिनोंमें उसका विस्तार इतना था कि उसमें पश्चिम मेशियाके बुखारा और अफगानिस्तान, मध्य मेशियाके काशगर, यारकंद और खोतान, उत्तर भारतके कश्मीर, पंजाब और बनारस तथा दक्षिणमें विन्ध्य तकके सारे प्रदेशका समावेश होता था।

हूण : ओ० सन्की पांचवीं या छठी सदीमें भारत पर लगातार आक्रमण करके मालवा, सिंध और सीमाप्रांतमें अपना राज्य जमानेवाले श्वेत हूण। युरोपमें भी जिन्हीं लोगोंने अेटिलाकी सरदारीके नीचे रहकर बड़े अत्याचार किये थे। यहां पर भी उनके अत्याचारोंसे ऊबकर अंतमें आर्यावर्तके सभी राजाओंने बालादित्य और यशोधर्माके नेतृत्वमें इकट्ठे होकर हूण राजा मिहिरगुलको हराया और उसे गिरफ्तार किया था। जिसके बाद उनका आक्रमण फिर नहीं हुआ। भारतमें हूणोंका राज्य आधी सदी तक रहा।

गिलगिट : श्रीनगरकी वायव्य दिशामें १२५ मील दूर ४८९० फुटकी ऊंचाओ पर जिसी नामके जिलेका मुख्य केन्द्र। जिसके आस-पास बौद्ध अवशेष फैले हुये हैं।

पृ० १३९ चित्राल: वायव्य सरहद प्रांतके जिसी नामके अेक राज्यका मुख्य शहर।

स्वात: पंजकोरासे मिलनेवाली अेक छोटीसी नदी।

सफेद कोह : पहाड़का नाम। कोह=पहाड़। तुलना कीजिये: कोह-अि-नूर=तेजका पहाड़।

बैक्ट्रिया : बल्ख

कर्नल यंगहसबंड: सर फ्रांसिस अेडवर्ड यंगहसबंड १८६३ में पंजाबमें पैदा हुये। जातिसे अेंग्लो-अिंडियन। १८८२ में फौजमें भरती हुये। १८९० में पोलिटिकल डिपार्टमेंटमें बदली हुयी। १८८६ में मंचूरियामें खोज की। १८८७ में चीनी तुर्किस्तानके रास्ते पेकिंगसे भारत तककी यात्रा की। १८९३–९४ में चित्रालमें पोलिटिकल अेजंटके तौर पर रहे। १८९५ में चित्रालकी लड़ाअी हुयी, तब 'टाअिम्स'के संवाददाताके तौर पर काम किया। १९०३–४ में ब्रिटिश-मंडलके

साथ ल्हासा गये। पूर्वके देशोंके बारेमें आपने अनेक पुस्तकें लिखी हैं। रॉयल ज्यॉग्राफिकल सोसायटीके प्रमुख १९१९। विस्तृत जीवनीके लिये पढ़िये: 'फ्रांसिस यंगहसबंड — अेक्स्प्लोरर अेंड मिस्टिक' — लेखक जॉर्ज स्वीवर।

अमीर अमानुल्ला: भारतमें रौलेट बिलके खिलाफ जब प्रचंड आंदोलन चला, अुसी समय १९१९ के अप्रैलमें अफगानिस्तानके अमीरने भारत पर आक्रमण किया था। दस दिनोंके अंदर ही अफगान परास्त हो गये थे। लम्बी बातचीतके पश्चात् ८ अगस्तको रावलपिंडीमें संधिपत्र पर दस्तखत किये गये थे।

गरमीका पागलपन: अुस समय गरमीके दिन थे और काम अविचारी था अिसलिये। अमीरका खयाल था कि गरमीके दिनोंमें अगर आक्रमण करेंगे तो अंग्रेज परास्त हो जायेंगे। किन्तु यह गलत खयाल था। अंग्रेजोंने अिस साहसको 'मिड-समर मैडनेस' का नाम दिया था।

परसों: यह मराठी प्रयोग है।

कोहाटकी क्रूरता: सन् १९२४ में ९–१० सितम्बरको कोहाटमें घटी हुअी घटनाका यहां जिक्र है। धर्मान्तर तथा अपहरणोंके कारण वहांका वातावरण पहले ही गरम हो चुका था। अितनेमें वहांकी सनातन धर्मसभाके मंत्रीने अेक पुस्तिका प्रसिद्ध की, जिससे मुसलमानोंकी भावनायें अुत्तेजित हो अुठीं। हिन्दुओंने फौरन दुःख प्रगट किया और पुस्तिकाकी बाकी रही नकलें सार्वजनिक रूपमें जला दीं। फिर भी मुसलमानोंको संतोष नहीं हुआ और अुन्होंने हिन्दुओंके खिलाफ सख्त कार्रवाअी करनेकी मांग सरकारके सामने पेश की। रातको मसजिदमें जमा होकर अुन्होंने बदला लेनेकी प्रतिज्ञा ली। ९ सितंबरको सनातन धर्मसभाके मंत्री जमानत पर रिहा किये गये और दंगे शुरू हुअे। ये दंगे कैसे शुरू हुअे, अिस बारेमें मतभेद है; किन्तु शुरू होनेके बाद दो पक्षोंमें आमने-सामने गोलियां चलीं। सारे हिन्दू मोहल्लेको आग लगा दी गयी। पुलिस और फौजने भी गोली चलाअी। परिणामस्वरूप अपार हानि हुअी। सभी हिन्दुओंको सरकारी रक्षाके नीचे

कैन्टोनमेन्टमें रखा गया। वहांसे अुनकी मांगके अनुसार अुन्हें रावल-पिंडी भेज दिया गया। बेलगांव कांग्रेसमें जिस संबंधमें जो प्रस्ताव पास किया गया था, अुसमें हिन्दुओंको यह सलाह दी गयी थी कि कोहाटके मुसलमान अुन्हें सम्मानपूर्वक वापस न बुलायें और मालमालकी सलामतीका विश्वास न दिलायें, तब तक वे वापस न लौटें।

कुरम: सुलेमान पर्वतसे निकल कर सिन्धुसे मिलनेवाली नदी। जिसका वैदिक नाम है क्रुमु।

डेरा इस्माअिलखां: लाहौरके पश्चिममें १२५ मीलकी दूरी पर स्थित सीमाप्रान्तका अेक शहर। यहांसे गोमलघाटके द्वारा अफगानिस्तानके साथ तिजारत चलती है। सूती कपड़े और बेलबूटेके कामके लिअे प्रसिद्ध है।

डेरा गाजीखां: भावलपुरकी वायव्य दिशामें ७० मीलकी दूरी पर स्थित पंजाबका अेक शहर। सिंधुकी बाढ़से जिसकी काफी हानि हुआ करती थी, जिसलिअे १८९१ में यहां पत्थरका अेक बांध बांधा गया था। यहांकी कुछ मसजिदें मशहूर हैं।

लाहौरका वैभव: अकबर और अुसके वंशजोंके जमानेमें लाहौरका वैभव बहुत बड़ा था। वजीरखांकी मसजिद, जामा मसजिद, शीशमहल, रणजितसिंहके महल और शहरके बाहर शाहदरेमें स्थित बादशाह जहांगीरकी कब्र और शालीमार बाग आज भी अुसके वैभवके साक्षी हैं।

व्यास: बियास, विपाशा। वसिष्ठ मुनिके सौ पुत्रोंको राक्षस खा गये तब पुत्रशोकसे विह्वल होकर वे देहत्याग करनेके लिअे जिस नदीमें कूद पड़े थे। किन्तु नदीने अुन्हें विपाश यानी पाशमुक्त किया, जिसलिअे वह 'विपाशा' कहलायी।

त्यागाय संभृतार्थानाम्: 'रघुवंश' के प्रारंभमें महाकवि कालिदास रघुओंका वर्णन करते समय अुनकी अनेक विशेषतायें बताते हैं। अुनमें अेक विशेषता यह है। जो त्याग=दानके लिअे संभृत अर्थ=धन अिकट्ठा करनेवाले हैं, अुन रघुओंके वंशकी कीर्ति मैं गाना चाहता हूं।

पृ० १४० अुसमें से मनमाना . . चाहे : नहरके रूपमें।

अुदारता : चौड़ाअी ?

जयद्रथके समयमें : महाभारतके समयमें। जयद्रथ सिंधु देशका राजा था।

दाहिर : [६४५–७१२] सिन्धका अेक ब्राह्मण राजा। जच्चका पुत्र। सिन्ध प्रान्तको छूनेवाले खिलाफतके प्रान्तके सूबेदार हज्जाजको अुसने कअी बार हराया था। अिसके पश्चात् मुहम्मद बिन कासिम नामक सत्रह वर्षकी अुम्रके सेनापतिको अुसके खिलाफ युद्ध करनेके लिअे भेजा गया; अिस युद्धमें दाहिरका हाथी भड़क अुठा, जिसकी वजहसे वह मारा गया। अुसकी फौज भाग गअी। तबसे मुसलमानोंको हिन्दुस्तानमें प्रवेश मिला। मुहम्मदने अुसकी रानीके साथ शादी की और अुसकी दो लड़कियोंको नजरानेके तौर पर खलीफाके पास भेज दिया।

जच्च : [४९७–६३७] दाहिरका पिता। अिसका अितिहास फारसीमें 'चचनामा' नामक किताबमें दिया गया है। वह बड़ा शूर था। अुसने अपने राज्यकी सीमा ठेठ कश्मीर तक फैलायी थी। वह सिंधके आरोर नामक गांवके अग्निहोत्री ब्राह्मण शैलजका पुत्र था। प्रथम वह सिंधके राजाके मंत्रीका कारकुन था; बादमें प्रधान मंत्री बना; आखिर राजा बना और रानीके साथ अुसने शादी की। ब्राह्मणाबादके बौद्ध-धर्मी लोगों पर अुसने काफी जुल्म ढाये थे।

पृ० १४१ अनाचार : सिन्धके अेक ब्राह्मण राजाको अेक ज्योतिषीने कहा था कि तुम्हारी बहनका लड़का तुम्हारा राज्य छीन लेगा। अिसके अिलाजके तौर पर राजाने अपनी बहनके साथ ही शादी कर ली। दूसरे अेक राजाने अेक सती पर अत्याचार किये थे। अिन ब्राह्मण राजाओंके अत्याचारोंसे लोग अितने परेशान हो गये थे कि मुहम्मद बिन कासिमको जाट और मेड़ लोगोंने ही सबसे अधिक मदद की थी।

मुहम्मद बिन कासिम : सिन्ध प्रान्तको जीतकर खिलाफतमें शामिल करनेवाला किशोर सेनापति। दाहिरके खिलाफ युद्ध करनेके बाद अुसने

ताहिरकी दो लड़कियोंको खलीफाके पास नजरानेके तौर पर भेज दिया था। जब खलीफाने अिनमें से अेक लड़कीके साथ शादी करनेकी अिच्छा व्यक्त की, तब अिन लड़कियोंने कहा कि मुहम्मदने अुन्हें भ्रष्ट कर दिया है, अिसलिअे वे अिस सम्मानके लायक नहीं हैं। अिस पर खलीफाने गुस्सा होकर मुहम्मदको हुक्म दिया कि गायके चमड़ेमें अपनेको सीकर वह खलीफाके सामने हाजिर हो। मुहम्मदने खलीफाकी आज्ञाका पालन किया, जिससे दूसरे ही दिन अुसकी मृत्यु हो गयी। जब मुहम्मदका शव अिस हालतमें हाजिर किया गया, तब लड़कियोंने खलीफाको सत्य कह डाला कि अुन्होंने बदला लेनेकी दृष्टिसे झूठ बात कही थी! खलीफाने अिन दोनों लड़कियोंकी गरदन अुड़ा दी।

सर चार्ल्स नेपियर : [१७८२–१८५३] १८०८ में स्पेनमें फ्रेंच लोगोंके खिलाफ अिसने लड़ाअी की, और कोरूनामें गिरफ्तार हुआ। १८१३ में अमरीकाके खिलाफ युद्ध किया। १८१५ में नेपोलियनके खिलाफ युद्ध किया। वह कवि बायरनका मित्र था। १८४१ में भारत आया। १८४२ में सिन्धकी फौजका नेतृत्व किया और अिसी वर्षके अन्तमें अिमामगढ़का किला कब्जेमें लिया। १८४३ के मियाणीके युद्धमें विजयी हुआ। मीरपुरके शेरमुहम्मदको परास्त करके भगा दिया। १८४४–४५ में सिन्धकी पहाड़ी जातियों पर विजय प्राप्त की। डल-हाअुसीके साथ मतभेद होने पर अिस्तीफा देकर घर लौट गया। १८५३ में मृत्यु। कहावत है सिन्ध पर अधिकार करनेके बाद अिसने रिपोर्ट दी: "I have sinned (sind)"—मैंने सिन्ध पर कब्जा कर लिया है।

सुहिणी : अेक धनवान कुम्हारकी लड़की। गुजरातका अेक खान-दानी मुगल नौजवान मेहार अुसकी मुहब्बतमें फंस गया था और अुससे मिलनेमें कोअी कठिनाअी न हो अिसलिअे वेश बदलकर अुसके पिताके घर नौकर बन कर रहा था। दोनोंके बीच प्रेमका नाता दृढ़ होने लगा। किन्तु लड़कीके पिताको वह पसंद नहीं आया। अिस-लिअे अुसने मेहारको नौकरीसे हटा दिया। वह सिन्धुके अुस पार जाकर रहा। सुहिणी हमेशा रातके समय मिट्टीके अेक बरतनका

सहारा लेकर सिन्धु नदी पार करती थी और मेहारसे मिलने जाती थी। जब अिस बातका पता अुसके पिताको चला, तब अुसने पक्के घड़ेके बदलेमें कच्चा घड़ा वहां रख दिया। सुहिणी तो प्रेमकी मस्तीमें थी। वह कच्चा घड़ा लेकर ही नदीमें कूद पड़ी। जरा आगे गयी कि घड़ा पिघलने लगा। अुसने मेहारको पुकारा। सामनेके किनारेसे वह अुसे बचानेके लिअे दौड़ा, किन्तु बचा नहीं सका। अंतमें दोनोंने साथ ही जल-समाधि ली।

३२. मंचरकी जीवन-विभूति

पृ० १४२ दिशो न जाने० न मैं दिशा जानता हूं, न शान्ति प्राप्त करता हूं। गीता, ११–२५

अिदानीम्० अब मैं शांत हो गया हूं और स्वस्थ बन गया हूं। गीता, ११–५१

पृ० १४४ स्वप्नसृष्टि पर राज्य किया: लोक-कथाओंमें 'खाया, पिया और राज्य किया' कहनेका प्रयोग चलता है। यहां पर 'स्वप्न-सृष्टि पर राज्य किया' का मतलब है 'नींद ली।'

अजगरोंकी अुपासना कर रहे थे: अजगर बड़े आलसी होते हैं। अिसलिअे यहां अर्थ होगा आलस्यकी अुपासना करते थे।

रैहानाबहन: श्री अब्बास तैयबजीकी पुत्री। भक्त-हृदय और सुकण्ठ गायिका। अिनकी 'Heart of a Gopi' नामक किताब बड़ी मशहूर है। अिस किताबके फ्रेंच तथा पोलिश भाषामें भी अनुवाद हुअे हैं। हिन्दीमें 'गोपी-हृदय' नामसे अनुवाद प्रकाशित हुआ है। अिनकी कुछ मौलिक हिन्दी किताबें भी हैं: 'सुनिये काकासाहब!', 'नाश्तेसे पहले', 'कृपा-किरन' वगैरा। अिनकी हिन्दी या हिन्दुस्तानी शैली अपने ढंगकी निराली है।

पृ० १४७ मंघ: मकानमें हवा आनेके लिअे छत पर जो चौरस आकारकी चिमनी जैसी रचना होती है अुसको मंघ कहते हैं।

'बंद': यह सिन्धी शब्द है।

३३. लहरोंका तांडवयोग

पृ० १४९ वप्रक्रीड़ा : सींग या लम्बे दांतोंके सहारे जमीन खोदनेका खेल। 'मेघदूत' में इसका प्रयोग किया गया है :

तस्मिन्नद्रौ कतिचिद् अबला-विप्रयुक्तः स कामी
नीत्वा मासान् कनक-वलय-भ्रंश-रिक्त-प्रकोष्ठः।
आषाढस्य प्रथमदिवसे मेघमाश्लिष्टसानुं
वप्रक्रीड़ापरिणतगजप्रेक्षणीयं ददर्श॥

पृ० १५० अमर्ष : तिरस्कार या अपमानसे पैदा हुआ स्थिर क्रोध। काव्यशास्त्रमें इसकी व्याख्या किस प्रकार की गयी है : 'अधिक्षेपापमानादेरमर्षोऽभिनिविष्टता।' भारवि कविके 'किरातार्जुनीय' काव्यमें दुर्योधनकी राजनीतिकी प्रशंसा सुनकर द्रौपदी नाराज होती है और युधिष्ठिरसे कहती है : "अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहार्देन न विद्विषादरः॥ १,३३ [जिसमें अमर्ष नहीं है उसका न स्नेहीजन आदर करते, न शत्रु आदर करते]

शिव-तांडव-स्तोत्र : कवि रावणका लिखा प्रसिद्ध स्तोत्र। देखिये, 'जोगका प्रपात' की टिप्पणियां।

प्रमाणिका और पंचचामर : ये दो संस्कृतके लोकप्रिय और अत्यंत सरल छंद हैं। प्रमाणिकाके दो पद मिलने पर एक पंचचामर बनता है। उसको नाराच भी कहते हैं।

प्रमाणिकापदद्वयम् वदेत् पंचचामरम्।

पुष्पदंत : एक गंधर्व और शिवगण। शिवमहिम्न-स्तोत्रका रचयिता। वायव्य दिशाके दिग्गजका नाम भी पुष्पदंत है। पुष्पदंतकी कथा 'कथासरित्सागर' में है।

गोमूत्रिकाबंध : चित्रकाव्यका एक प्रकार।

श्रावण-भादोंकी धारायें : राजमहलमें जब पानीका प्रवाह बहाया जाता है और बीचमें छोटेसे पत्थर परसे बहता उसका प्रपात बनाया जाता है, तब किस प्रपातको श्रावण-भादोंकी धारायें कहते हैं।

३४. सिंधुके बाद गंगा

पृ० १५३ सौवीर देश : सिन्ध और मारवाड़की सीमाका प्रदेश।

पृ० १५५ सदाकत आश्रम : [सदाकत = सत्य + आश्रम] बिहारके प्रसिद्ध देशभक्त मजहरुल हकने जिसकी स्थापना सन् १९२०–२१ के अर्सेमें की थी।

पृ० १५८ 'रसो वै सः' : निश्चय ही वह रस है। तैत्तिरीयोपनिषद्में ब्रह्मका वर्णन करते समय यह वचन कहा गया है। देखिये तैत्तिरीय० २–७।

पृ० १५९ किंकर्य : [किंकर (= नौकर) + य] नौकरपन, नौकरी।

पृ० १६० ॐ पूर्णम् अदः ० यह (जगत्) पूर्ण है, वह (ब्रह्म) भी पूर्ण है। पूर्णमें से पूर्ण ही प्रकट होता है। पूर्णमें से यदि पूर्णको निकाल लें तो पूर्ण ही शेष रहता है।

ईशावास्योपनिषद्के प्रारंभ तथा अंतमें यह शांतिमंत्र है।

३५. नदी पर नहर

पृ० १६१ कली आद्यन्तयोः स्थितिः दक्षिणमें यह बात फैलायी गयी है कि कलिकालमें सिर्फ दो ही वर्णोंका अस्तित्व है—ब्राह्मण और शूद्र; क्योंकि संस्कार-लोपके कारण क्षत्रिय और वैश्य भी अब शूद्र जैसे बन गये हैं।

द्विजत्व : जिन्हें जनेऊ लेकर किसी जन्ममें दूसरा जन्म लेनेका अधिकार है, अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तीनों वर्णोंको द्विज कहते हैं।

जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात् द्विज उच्यते।

भगीरथ : भगीरथने हिमालयसे गंगाको उतारकर बंगालके उपसागर तकके प्रदेशको उपजाऊ बनाया था। उस परसे जल-सिंचनकी विद्यामें कुशल।

पृ० १६२ निम्नगा : नीचेकी ओर बहनेवाली।

परिवाह : अतिरिक्त जलके बहनेके लिये रखा गया मार्ग। overflow.

२६. नेपालकी वाघमती

पृ० १६३ अतिमानुषी: अलौकिक। अंग्रेजी superhuman.

भगिनी निवेदिता: स्वामी विवेकानंदकी अंग्रेज शिष्या मिस मार्गरेट नोबल। निवेदिता नाम गुरुका दिया हुआ था।

पृ० १६५ गोरक्षनाथ: अयोध्याके समीप जयश्री नामक नगरीमें सद्बोध नामके किसी ब्राह्मणकी सद्वृत्ति नामक अेक स्त्री थी। अेक बार भिक्षा मांगते हुअे मत्स्येन्द्रनाथ वहां आ पहुंचे। साधु पुरुष जानकर अुनको अुस स्त्रीने संतान न होनेकी बात बतायी। मत्स्येन्द्रनाथने भस्म दी, किन्तु अुसका प्रसादके तौर पर स्वीकार करनेके बदले अुसने अुसे घूरे पर फेंक दिया। ठीक बारह सालके बाद मत्स्येन्द्रनाथ फिर पधारे और अुन्होंने पूछा, "लड़का कहां है?" सद्वृत्तिने सच बात बता दी। अिस पर मत्स्येन्द्रनाथने घूरेके पास जाकर पुकारा 'अलख'। तुरन्त सामनेसे 'आदेश' कहकर गोरक्षनाथकी बालमूर्ति खड़ी हो गअी। अिसी कारणसे गोरक्षनाथको अयोनिज कहते हैं। गुरुके पास रहकर गोरक्षनाथने सब विद्या प्राप्त की। मत्स्येन्द्रनाथ योगी भी थे और भोगी भी थे। किन्तु गोरक्षनाथका वैराग्य अग्निके समान प्रखर था। मत्स्येन्द्रनाथको सिंहल द्वीपकी प्रमिळारानीके मोहपाशसे गोरक्षनाथने ही मुक्त किया था। वे योगी, शिवोपासक, अद्वैतवादी और कीमियागरके रूपमें प्रसिद्ध हैं। बंगाल, पंजाब, नेपाल, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र, सिंहल द्वीप आदि सभी स्थानोंमें अुनके मठ हैं।

मत्स्येन्द्रनाथ और गोरक्षनाथ नेपालके गुरखा लोगोंके देवता हैं। गोरक्षनाथ परसे ही अिनको 'गुरखा' कहते हैं। नेपालमें बौद्धोंका महायान पंथ चलता था। अुसकी पराजय करके गोरक्षनाथने वहांके लोगोंमें शिवकी अुपासना प्रचलित की थी। गोरक्षनाथका समय अब तक निश्चित नहीं हो सका है।

२७. बिहारकी गंडकी

पृ० १६५ गंडकी: बिहारमें दो नदियोंका नाम गंडकी है। लेखकने मुजफ्फरपुरके पास जो गंडकी देखी थी वह है बृद्ध या छोटी गंडकी। दूसरी गंडकी बड़ी है।

पृ० १६६ बौद्ध जगतके दो छोर: नर्मदा और गंडकीके बीच बौद्ध जगत समाया हुआ था।

मांडलिक नदियां: पानी-रूपी करभार देनेवाली नदियां; अुससे मिलनेवाली नदियां।

अष्टांगिक मार्ग: भगवान बुद्धके बताये हुअे आर्य अष्टांगिक मार्गके आठ अंग अिस प्रकार हैं: (१) सम्यक् दृष्टि; (२) सम्यक् संकल्प; (३) सम्यक् वाचा; (४) सम्यक् कर्मान्त; (५) सम्यक् आजीव; (६) सम्यक् व्यायाम; (७) सम्यक् स्मृति; और (८) सम्यक् समाधि।

मार: मनुष्यकी सद्वासनाओंका नाश करनेवाला। बौद्धधर्ममें आसुरी संपत्तिके अधिष्ठाता व्यक्तिको 'मार' कहते हैं।

३८. गयाकी फल्गु

पृ० १६७ सीताका शाप: कहते हैं कि अेक समय राम, सीता और लक्ष्मण घूमते-घूमते फल्गुके किनारे आ पहुंचे। वहां पहुंचते ही रामको स्मरण हुआ कि आज मेरे पिताजीके श्राद्धका दिन है। अिसलिअे सामान लानेके लिअे अुन्होंने लक्ष्मणको शहरमें भेजा। लक्ष्मण गये; किन्तु बड़ी देर तक वापस नहीं लौटे। अिससे रामको चिंता हुअी और वे स्वयं अुन्हें ढूंढ़नेके लिअे निकल पड़े। अिधर श्राद्धका मुहूर्त चूकने लगा; अिसलिअे सीताजीने नहा-धोकर जो कुछ था अुसीसे अपने पतिके बदले स्वयं अुनके पितरोंको पिंडदान दिया। पितरोंने संतोषपूर्वक पिंडका स्वीकार किया। वे पिंड लेकर जाने लगे, तब सीताजीने अुनसे पूछा: 'आप स्वयं आकर पिंड ले गये हैं, यह मेरे पतिको कैसे मालूम होगा?' तब आकाशवाणी हुअी: 'तुम साक्षी रखो।' सीताजीने फल्गु नदी, गाय, अग्नि और केवड़ेको साक्षी रखा।

राम-लक्ष्मण सारी सामग्री लेकर आये और अुन्होंने सीताको चरु (पिंडका भात) तैयार करनेको कहा। किन्तु सीताने न तो कोअी अुत्तर दिया, न चरु तैयार किया। अंतमें रामने पूछा, तब सीताने सारी बात बता दी। किन्तु राम-लक्ष्मणको विश्वास नहीं हुआ। अिसलिअे सीताने

फल्गु आदि सब साक्षियोंसे पूछनेके लिये कहा। मगर जिन सबने कहा, 'हम कुछ मालूम नहीं है।' अतः सीताने लाचारीसे दुबारा चरु तैयार किया और रामने पिंडके लिये पितरोंका आवाहन किया। तब आकाशवाणी हुई कि जानकीने हमें तृप्त किया है। किन्तु रामको विश्वास नहीं हुआ। जिसलिये फिरसे आकाशवाणी हुई। जिससे भी रामको संतोष नहीं हुआ। जिस पर स्वयं सूर्यने आकर साक्षी दी, तब रामको विश्वास हुआ।

साक्षी होते हुये भी उन्होंने बात नहीं बताई, जिसलिये सीताने उन चारोंको शाप दिया। फल्गुको कहा, 'तुम पातालमें रहोगी।' केवड़ेको कहा, 'तुम शिवजीको अग्राह्य होगे।' गायको कहा, 'तेरा मुंह अपवित्र माना जायगा और पूंछ पवित्र मानी जायगी।' अग्निको कहा, 'तुम सर्वभक्षक होगे'। —शिवपुराण, अध्याय ३०।

३९. गरजता हुआ शोणभद्र

पृ० १६८ अयं शोणः ० "स्वच्छ जलवाला, अगाध, पुलिन-मंडित, ऐसा यह शोण है। हे ब्रह्मन्, हम किस रास्तेसे पार उतरेंगे?" श्री रामचंद्रके पूछने पर विश्वामित्रने जवाब दिया, "जिस रास्तेसे महर्षि जाते हैं, वह मेरे द्वारा बताया हुआ मार्ग यह है।"

क्षत्रिय गुरुशिष्यः क्षत्रियोंके गुरु अक्सर ब्राह्मण ही होते हैं। किन्तु यहां गुरु विश्वामित्र भी मूलतः क्षत्रिय थे।

पीवरकायः पुष्ट शरीरवाला।

गजेन्द्र और ग्राहः हाहा और हुहु नामक दो गंधर्व थे। किसी दिन जिन दोनोंके बीच विवाद चला—'संगीत-विद्यामें हममें कौन बड़ा है?' वे जिन्द्रके पास गये और उसके सामने अपनी कला दिखाई। जिन्द्रने कहा, 'तुम दोनोंमें कौन बड़ा है, यह तो देवल ऋषिके सिवा और कोई नहीं बता सकेगा।' जिसलिये वे देवल ऋषिके पास गये और गाने लगे। ऋषि उस समय ध्यानमग्न थे। वे कुछ बोले नहीं। जिसलिये यह मानकर कि वे जड़ हैं, कुछ समझते नहीं हैं, गंधर्वोने उनका अपमान किया। जिससे ऋषिने उनको शाप दिया कि 'तुम अब

मृत्युलोकमें जन्म लोगे।' किन्तु बादमें अुनकी प्रार्थना सुनकर शापके निवारणके लिअे कहा कि 'हरि तुम्हारा अुद्धार करेंगे।'

अिस प्रकार वे दोनों मृत्युलोकमें गजेन्द्र और ग्राहके रूपमें पैदा हुअे। अेक बार गजेन्द्र जलक्रीड़ाके लिअे पानीमें अुतरा, तब ग्राहने अुसका पांव पकड़ लिया और अुसे अंदर खींचने लगा। बाहर आनेके लिअे गजेन्द्रने काफी प्रयत्न किया, किन्तु कुछ नहीं हुआ। और वह गहरे पानीमें खिंचता चला गया। जब वह पूराका पूरा पानीमें चला गया, सिर्फ सूंड़ ही बाकी रही, तब अुसने अीश्वरकी स्तुति की। स्तुति सुनकर अीश्वरने आकर अुसे बचाया और दोनोंका अुद्धार किया।

यह कथा पंचरत्न-गीताके 'गजेन्द्र-मोक्ष' में है।

[बरसों पहले Tug of War के लिअे श्री काकासाहबने गुजरातीमें 'गजग्राह' शब्द प्रचलित किया था।]

ब्रह्मपुत्र : ब्रह्मपुत्राका सही नाम है 'ब्रह्मपुत्र'। शायद रोमन लिपिके कारण गड़बड़ हुअी है। लेखकने अिस पुस्तकमें दोनों रूपोंका प्रयोग किया है।

पृ० १६९ पहुंच जाअूं ० महाकवि कालिदासने शोणका यह भाव बहुत सुन्दर ढंगसे व्यक्त किया है। अिन्दुमतीके स्वयंवरके बाद निराश हुअे राजा लोग अजका मार्ग रोकते हैं, तब अज अुनकी सेना पर टूट पड़ता है। कालिदासने अिसकी तुलना भागीरथी पर अपनी अुत्ताल तरंगोंसे टूट पड़नेवाले शोणसे की है।

तस्याः स रक्षार्थम् अनल्पयोधं
आदिश्य पित्र्यं सचिवं कुमारः।
प्रत्यग्रहीत् पार्थिव-वाहिनीं तां
भागीरथीं शोण अिवोत्तरंगः।

— रघुवंश ७–३६

नाल्पे सुखमस्ति . . . तत् सुखम् : 'अल्पमें सुख नहीं है। जो भूमा है — सारे विश्वको समा ले अितना विशाल है, वही सुखरूप है।' (छांदोग्य, ७–२३)

४०. तेरदालका मुगजल

जमखंडी : दक्षिण महाराष्ट्रका अेक शहर।

४१. चर्मण्वती चंबल

पृ० १७२ रंतिदेव : भरतकी छठी पीढ़ीमें हुआ सूर्यवंशी राजा। महाभारतमें अिसकी कथा दो बार आयी है। मेघदूतमें भी अिसका जिक्र आता है।

हेकॅटॉम : [शत अुक्ष यज्ञ] ग्रीक (यूनानी) लोगोंका अेक यज्ञ जिसमें सौ बैलोंकी आहुति दी जाती थी।

भूदेव : ब्राह्मण। अग्नि और ब्राह्मण देवताओंके मुख माने जाते हैं। वे जो खाते हैं वह सीधा देवताओंको मिल जाता है।

४२. नदीका सरोवर

पृ० १७३ बेलाताल : ताल = तालाब। जैसे नैनीताल, भीमताल।

पृ० १७४ हिमालयसे मांफी मांगकर : हिमालयमें केदारनाथके पास मंदाकिनी नामक अेक नदी है, अिसलिअे।

महाराज पुलकेशी : वातापी वंशका राजा। छठी सदीके मध्य भागमें अुसने महाराष्ट्रके छोटे छोटे सब राज्योंको अेकत्र करके अेक साम्राज्यकी स्थापना की थी और अश्वमेध यज्ञ भी किया था। अुसके पुत्र कीर्तिवर्माने पिताके साम्राज्यका विस्तार किया और अुसमें अंग-बंग और मगधका भी समावेश किया। सन् ६०९ में जब दूसरा पुलकेशी गद्दी पर बैठा तब यह चालुक्य साम्राज्य विन्ध्यसे लेकर दक्षिणमें पल्लव साम्राज्य तक फैला हुआ था। अुसने मालव, गुर्जर, और कलिंगोंको भी अधीन कर लिया था। अुसका सबसे बड़ा पराक्रम तो यह था कि महाराज हर्षने जब दक्षिण पर आक्रमण किया, तब पुलकेशीने अुनको रोका और पराजित किया (अी० स० ६३६)। पुलकेशी = पुलिकेशी। दक्षिणकी भाषामें पुलि = हुलि = वाघ। जिसके बाल (केश) बाघकी अयालके जैसे हों, वह है पुलकेशी।

पृ० १७५ अनाविला : जिसमें कीचड़ नहीं है, अैसी। स्वच्छ।

पृ० १७६ दशार्ण : विन्ध्याचलके दक्षिण-पूर्वमें स्थित प्रदेश। दश +अर्ण (दुर्ग) जिसमें हैं वह। नदीका नाम है 'दशार्णा'। मेघदूतमें जिसका उल्लेख जिस प्रकार आता है :

पाण्डुच्छायोपवनवृतयः केतकैः सूचिभिन्नैर्—
नीडारम्भैर् गृहबलिभुजाम् आकुलग्रामचैत्याः।
त्वय्यासन्ने परिणतफलश्याम-जम्बूवनान्तः
संपत्स्यन्ते कतिपयदिनस्थायिहंसा दशार्णाः ॥२३॥

वेत्रवती : मालवाकी एक नदी, बेतवा। मेघदूतमें जिसका भी उल्लेख है :

तेषां दिक्षु प्रथित-विदिशा-लक्षणां राजधानीं
गत्वा सद्यः फलम् अविकलम् कामुकत्वस्य लब्ध्वा।
तीरोपान्त-स्तनित-सुभगं पास्यसि स्वादु यस्मात्
सभ्रूभंगं मुखम् इव पयो वेत्रवत्याश् चलोर्मि ॥२४॥

४३. निशीथ-यात्रा

पृ० १७७ सद्विन्दु-सिन्धु० श्री शंकराचार्य विरचित 'नर्मदास्तोत्र' में ये वचन हैं। जिसी स्तोत्रमें निम्नलिखित श्लोक है, जिसमें नर्मदाको 'शर्मदा' कहा गया है :

त्वदम्बुलीन दीनमीन दिव्य संप्रदायकं
कलौ मलौघभारहारि सर्वतीर्थनायकम्।
सुमत्स्य-कच्छ-नक्रचक्र-चक्रवाक-शर्मदे
त्वदीयपादपंकजं नमामि देवि नर्मदे ॥

पृ० १७९ मेरी जाति है कौवेकी : कौवा कभी अकेला नहीं खाता। दूसरे कौवोंको पुकार कर ही खाता है।

लेखकका नाम 'काका' है, यह भी नहीं भूलना चाहिये।

पृ० १८६ नान्तःप्रज्ञं० मांडुक्योपनिषद्में तुरीय रूपके वर्णनमें ये शब्द आते हैं। जिनका अर्थ है—'वह न अंतःप्रज्ञ है, न बहिष्प्रज्ञ है। वह न उभयतःप्रज्ञ है, न प्रज्ञानघन है। वह न प्रज्ञ है, न अप्रज्ञ है।'

४४. धुवांधार

पृ० १९३ पूषन्नेकर्षे० और ॐ क्रतो स्मर, कृतं स्मर : ये ईशावास्योपनिषद्के श्लोक हैं। पूरे श्लोक अिस प्रकार हैं :

पूषन्नेकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य! व्यूह रश्मीन्, समूह।
तेजो, यत्ते रूपं कल्याणतमं तत्ते पश्यामि
योऽसावसौ पुरुषः सोऽहमस्मि ॥ १६ ॥
वायुर् अनिलम् अमृतम् अथेदं भस्मान्त॰ शरीरम्।
ॐ क्रतो स्मर कृत॰ स्मर; क्रतो स्मर कृत॰ स्मर ॥१७॥

[हे जगत्पोषक सूर्य, हे अेकाकी गमन करनेवाले, हे यम (संसारका नियमन करनेवाले), हे सूर्य (प्राण और रसका शोषण करनेवाले), हे प्रजापतिनंदन, तू अपनी रश्मियां समेट ले। तेज अेकत्र कर ले। तेरा जो अत्यन्त कल्याणमय रूप है, अुसे मैं देखता हूं। सूर्यमंडलमें रहनेवाला वह जो परात्पर पुरुष है, वह मैं ही हूं।

अब मेरे प्राण सर्वात्मक वायुरूप सूत्रात्माको प्राप्त हों और यह शरीर भस्मीभूत हो जाय। हे मेरे संकल्पात्मक मन, अब तू स्मरण कर, अपने किये हुअे कर्मोंका स्मरण कर; अब तू स्मरण कर, अपने किये हुअे कर्मोंका स्मरण कर।]

पृ० १९४ चन्द्रगुप्त और समुद्रगुप्त : चंद्रगुप्तकी पुत्री प्रभावतीका विवाह वाकाटक वंशमें हुआ था। अुसने कअी बरस तक शासन-तंत्र संभाला था। चंद्रगुप्तने अुस समय खास लोग वहां भेज दिये थे, अिस बातका यहां अुल्लेख है। समुद्रगुप्तकी विजय-यात्रामें अिस प्रदेशका भी समावेश होता था।

कलचुरी : वाकाटक साम्राज्यके पतनके बाद अनेक छोटे छोटे स्वतंत्र राज्य पैदा हुअे थे। अुनमें अुत्तर महाराष्ट्रके कलचुरी लोगोंका भी अेक राज्य था। अुनकी राजधानी थी त्रिपुरी, जहां सन् १९३९ में कांग्रेसका अधिवेशन हुआ था।

वाकाटक : सन् २२५ से ५४० के आसपास मध्यप्रान्तके वरार प्रदेशमें वाकाटकोंका साम्राज्य था। छठी सदीके पहले दस वर्षोंका समय अिनके

सर्वोच्च वैभवका काल था। जिसमें सारा हैदराबाद, बम्बईका महाराष्ट्र, बरार और मध्यप्रान्तका बहुतसा हिस्सा समा जाता था। जिसके अलावा, उत्तर कोंकण, गुजरात, मालवा, छत्तीसगढ़ और आंध्र प्रदेश पर भी जिसका प्रभुत्व था। उस समय जितना विशाल और जितना बलवान साम्राज्य भारतमें दूसरा कोई नहीं था।

४५. शिवनाथ और जीव

पृ० १९४ मलिक काफूर: अलाउद्दीन खिलजीका प्रीतिपात्र खोजा। जिसने दक्षिणके राज्य जीतकर वहांकी प्रजा पर बड़ा अत्याचार किया था।

काला पहाड़: बंगालके नवाब सुलेमान किरानीका तथा बादमें उसके पुत्र दाऊदका सेनापति। असम, काशी और उड़ीसामें जितने हिन्दू देवालय थे, उनमें से एक भी जिसके हाथसे नहीं बचा था। किसीको जिसने तोड़ डाला, किसीको खंडित कर दिया, तो किसीको जमींदोज कर दिया। जगन्नाथकी मूर्तिको उसने जलाकर समुद्रमें फेंक दिया था। हिन्दुओं पर उसने बहुत जुल्म ढाये थे। कुछ लोग कहते हैं कि वह पहले ब्राह्मण था, किन्तु किसी नवाबकी कन्याकी मुहब्बतमें फंसकर मुसलमान बन गया था। मुसलमानोंके इतिहासमें उसको पठान जातिका बताया गया है। १५६५ में उसने उड़ीसा जीता था। १५८० में उसकी मृत्यु हुई थी।

पृ० १९७ नामरूपका त्याग करनेसे हो: मुंडकोपनिषद्में निम्नलिखित श्लोक (३-२-८) है:

यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय।
तथा विद्वान् नामरूपाद् विमुक्तः परात्परं पुरुषम् उपैति दिव्यम्।

[जिस प्रकार निरंतर बहनेवाली नदियां अपना नामरूप छोड़कर समुद्रसे जा मिलती हैं, उसी प्रकार विद्वान भी नामरूपसे मुक्त होकर परात्पर दिव्य पुरुषको प्राप्त कर लेता है।]

सर्वे महत्त्वम् इच्छन्ति० जिस कुलमें सभी लोग महत्त्व चाहते हैं, उस कुलका नाश होता है; उसी प्रकार जिस देशमें सभी लोग नेता बन जाते हैं, उस देशका भी नाश निश्चित है।

४६. दुर्दैवी शिवनाथ

पृ० १९९ राक्षस-पद्धतिका विवाह: विवाहके आठ प्रकार बताये गये हैं: (१) ब्राह्म, (२) दैव, (३) आर्ष, (४) प्राजापत्य, (५) गांधर्व, (६) आसुर, (७) राक्षस और (८) पिशाच। अिनमें से जिस विवाहमें लड़कीके रिश्तेदारोंको मारकर या परास्त करके जबरन् लड़कीसे विवाह किया जाता है, अुसको राक्षस-पद्धतिका विवाह कहते हैं।

४७. सूर्याका त्रोत

पृ० २०० कासा: बम्बअी राज्यके थाना जिलेका अेक गांव। आचार्य शंकरराव भिसेके मार्गदर्शनमें यहां अेक सर्वोदय-केंद्र चलता है, जिसके कार्यकर्ता यहांके आदिम निवासी 'वार्ली' लोगोंके बीच बहुत अच्छा काम करते हैं।

४८. अवरी औब

पृ० २०५ कवियोंको जितना . . . देता था: बहुत कम और अस्पष्ट।

४९. तेंदुला और सुखा

पृ० २०७ व्यंजन: शाक, चटनी।

पृ० २०९ यद् भावि० जो कुछ होनेवाला हो, सो होने दो।

५०. ऋषिकुल्याका समापन

पृ० २११ सरित्पिता: पर्वत।

सरित्पति: समुद्र।

पृ० २१३ अचलोंका अुपस्थान . . . देगी: श्री काकासाहबने जब पहाड़ोंके वर्णन लिखना शुरु कर दिया है, अिस बातका यहां अुल्लेख है।

५१. सहस्रधारा

पृ० २१४ आचार्य रामदेवजी: स्वामी श्रद्धानंदजीके सहायक। हरिद्वार गुरुकुलके आचार्य।

पृ० २१६ घबघबाता हुआ: घब्-घब् आवाज करता हुआ। लेखकका बनाया हुआ यह नाम-क्रियापद है।

५२. गुच्छुपानी

पृ० २२२ चंदन: श्री काकासाहबकी पुत्रवधू सौ० चंदन कालेलकर।

५३. नागिनी नदी तीस्ता

पृ० २३० यंत्रका जीन कसकर: पावर हाउस खड़ा करके।

५४. परशुराम कुंड

पृ० २३२ नहि वेरेन वेरानि ० धम्मपदका यह पूरा श्लोक जिस प्रकार है:

नहि वेरेन वेरानि सम्मन्तीध कुदाचनं।
अवेरेन च सम्मन्ति एस धम्मो सनन्तनो॥ ५॥

[वैर वैरसे कभी शांत नहीं होता; अवैरसे ही वैर शांत होता है—यही संसारका सनातन नियम (धर्म) है।]

५५. दो मद्रासी बहनें

पृ० २३६: नागमोड़ी: नागकी तरह जिसके मोड़ हों। सर्प-सदृश। यह शब्द मराठीका है।

५६. प्रथम समुद्र-दर्शन

पृ० २३९ मुरगांव: गोवाका एक शहर जिसको अंग्रेजीमें 'मार्मागोवा' कहते हैं। यह पश्चिमी किनारेका एक सुन्दर बंदरगाह है। फौजी दृष्टिसे जिसका बड़ा महत्त्व है।

पृ० २४० दूध-सागर: पानी पहाड़की चोटी परसे नीचे जिस तरह कूदता है कि झुरका दूधके समान काव्यमय सफेद प्रपात बन जाता है। जिसलिये झुरका नाम ही 'दूध-सागर' पड़ गया है।

केशू:=केशव, श्री काकासाहबके भाभी।

पृ० २४१ दत्तू: श्री काकासाहबका पूरा नाम दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर है। दत्तात्रेयका छोटा रूप है दत्तू।

गोंदू:=गोविंद, काकासाहबके दूसरे भाभी।

५७. छप्पन सालकी भूख

पृ० २४७ सरोके पेड़: कारवारमें सरोका अेक सुन्दर वन है। अिसका वर्णन पढ़िये 'स्मरण-यात्रा' के 'सरोपार्क' नामक लेखमें — पृ० २०१।

५८. मरुस्थल या सरोवर

पृ० २५४ मरजाद-वेल: समुद्रका पानी ज्वारके समय अधिकसे अधिक जहां तक पहुंचता है, वहां अेक तरहकी वेल अुगती है। समुद्र कितना भी तूफानी क्यों न हो, वह कभी अपनी अिस मर्यादाका अुल्लंघन नहीं करता। अिसलिअे अिस वेलको मरजाद-वेल कहते हैं। खलासी लोगोंके अनुसार वह समुद्रकी मौसी है। अतः समुद्र अुसका भानजा हुआ।

पृ० २५५ सर्वं समाप्नोषि० 'आप सारे संसारको व्याप्त किये हुअे हैं; अतः आप सर्व हैं।' गीता, ११–४०

५९. चांदीपुर

पृ० २५७ महाश्वेता: बाणकी विख्यात कथा 'कादम्बरी' की नायिका कादम्बरीकी सखी।

कादंबरी: बाणकी कथाकी नायिका। कादम्बरीका मूल अर्थ है: मद्य, सुरा।

पृ० २५९ सवालसा: श्री जमनालाल बजाजकी पुत्री।

आपो नारा० पानीको 'नारा' कहा है। और वह नर अर्थात् परमात्मासे पैदा हुआ है। वह पानी पहले अुसका (परमात्माका) अयन (निवासस्थान) था। अिसीलिअे परमात्माको नारायण (पानीमें जिसका निवासस्थान है वैसा) कहा है। मनुस्मृति, १–१०

पृ० २६० प्रथम प्रभात: रवीन्द्रनाथका विख्यात राष्ट्रगीत 'अयि भुवन-मनोमोहिनि' में से ये पंक्तियां ली गयी हैं। पूरा गीत अिस प्रकार है:

अयि भुवन-मनोमोहिनि
अयि निर्मल-सूर्य-करोज्ज्वल-धरणि
जनक-जननी-जननि — अयि०

नील-सिंधु-जल-धौत-चरणतल
अनिल-विकंपित-श्यामल-अंचल
अंबर-चुंबित-भाल-हिमाचल
शुभ्र-तुषार-किरीटिनि — अयि०

प्रथम प्रभात-उदय तव गगने
प्रथम साम-रव तव तपोवने
प्रथम प्रचारित तव वन-भवने
ज्ञान-धर्मकथ काव्य-काहिनि — अयि०

चिर कल्याणमयी तुमि धन्य,
देशविदेशे वितरिछ अन्न,
जाह्नवी-जमुना-विगलित-करुणा
पुण्य-पीयूष-स्तन्य-वाहिनि — अयि०

६०. सार्वभौम ज्वार-भाटा

पृ० २६३ सु-गत : भगवान बुद्धका अेक नाम। अेक खास 'मिशन' लेकर जो आये वे तथागत। सब संकल्पों और संस्कारोंका नाश करके जो निर्वाण तक पहुंचे वे सु-गत।

६१. अर्णवका आमंत्रण

पृ० २६३ अर्णव : अर्णव शब्दमें धातु 'ऋ' है। अुसका अर्थ है अुथल-पुथल होना, फेनसे भर आना। जिस परसे जिसमें अुथल-पुथल होती है, जो फेनसे भर आता है, जो अपांत है, अुसको अर्ण = पानी कहते हैं। और जिसमें जिस तरहका पानी है अुसको अर्णव कहते हैं। 'ऋणोत्यर्णः। अर्णांसि सुदकानि अत्र सन्ति इति अर्णवः'।

अघमर्षण सूक्त : ऋग्वेदके १० वें मंडलका १९० वां सूक्त। अुसके ऋषिका नाम भी अघमर्षण ही है। संध्यावंदनके समय सुबह-शाम यह सूक्त बोला जाता है। काकासाहब लिखते हैं : "अघमर्षणका

अर्थ है पापको धो डालना। किन्तु अिस सूक्तमें पापका अुल्लेख तक नहीं है। अुसमें ऋषि कहता है: बाह्य विश्वकी विशालताका अनुभव करो, हृदयकी गहराअीकी जांच करो। यह सारी आंतर-बाह्य सृष्टि किसके सहारे टिकी हुअी है, यह देख लो। काल और सृष्टिकी अनन्तताका खयाल करो। अिससे तुम्हारा मन अपने-आप विशाल हो जायगा। विशाल मनमें पापके लिअे स्थान नहीं होता।

"अिस अनादि अनंत सृष्टिमें 'ऋतम्' और 'सत्यम्' ही स्थायी हैं। 'ऋतम्' का अर्थ है विश्वका सार्वभौम नियम; चराचर सृष्टिका सनातन धर्म। अिसीके सहारे अनादि अनंत सृष्टि चलती है (ऋ = चलना)। अिस 'ऋतम्' के अंदर जो परम तत्त्व है, जो शाश्वत है और जिसका नाश कभी नहीं होता, अुसको सत्य कहते हैं। यह सत्य सर्वव्यापी है। अतः अिसे विष्णु (सर्वत्र प्रवेश पानेवाला, फैलनेवाला) भी कहते हैं। 'सत्यम्' और 'ऋतम्' के द्वारा ही यह संसार अुत्पन्न होता है, विलीन होता है और फिरसे अुत्पन्न होता है। विश्वचक्र तपसे चलता है। यह विश्व तो परमात्माकी केवल महिमा है। परमात्मा अिससे भी बड़ा है। वह सुखका धाम है, आनंदका निधान है। अुसकी कल्पना ज्यों ज्यों हृदयमें फैलती जायगी, त्यों त्यों हृदय स्वच्छ होता जायगा। जैसे जैसे तुम हृदयसे बड़े होते जाओगे, वैसे वैसे पापसे तुम्हें घृणा होती जायगी। पापके लिअे स्थान ही नहीं होगा। 'यो वै भूमा तत् सुखम्। नाल्पे सुखम् अस्ति।' अितना समझ लो। यही पाप-नाशक मंत्र है।"

वरुण: वेदोंमें वरुणको पश्चिम दिशाका और सागरका अधीश्वर कहा गया है। वृ (घेर लेना) + अुन (कृतार्थ प्रत्यय)। जिसने पृथ्वीको घेर लिया है।

भुज्यु: ऋग्वेदमें अिसकी कथा है। कहते हैं कि भुज्यु अपने पुत्र तुग्र पर अेक बार गुस्सा हुअे। अिससे अुन्होंने तुग्रको दूसरे द्वीप पर बसे हुअे दुश्मनोंके खिलाफ लड़नेके लिअे भेज दिया। रास्तेमें अुसके जहाजमें सुराख हो गया, जिससे वह बड़ी कठिन परिस्थितिमें आ पड़ा। किन्तु अश्विनीकुमारोंने सौ पतवारोंवाली नौकामें आकर अुसे सुरक्षित किनारे पर पहुंचा दिया।

पृ० २६४ जलोदर : अेक रोग, जिसमें पेटमें पानी भर जाता है। लेखकने यहां जिस शब्दका प्रयोग जलरूपी अुदरके अर्थमें किया है।

पृ० २६५ सिंदबाद : 'अरेबियन नाइट्स' में जिसकी सात यात्राओंकी रोचक कथा है।

पृ० २६६ सिंहपुत्र विजय : सिलोनकी प्राचीनतम परंपराके अनुसार अि० स० पूर्व छठी शताब्दीके मध्यमें सौराष्ट्रके सिंहपुरका राजकुमार विजय साहसपूर्ण यात्रा करके सिलोन पहुंचा था। विद्वानोंके कथनानुसार वह पौराणिक नहीं, बल्कि अैतिहासिक व्यक्ति है। देखिये : ('भारतीय आर्यभाषा और हिंदी'—लेखक : श्री सुनीतिकुमार चट्टोपाध्याय।)

भृगुकच्छ : आजका भड़ौंच।

सोपारा : प्राचीन शूर्पारक।

दाभोळ : पश्चिम तट पर स्थित अेक अतीव मनोहर और बड़े महत्त्वका बंदरगाह।

मंगलापुरी : आजका मंगळूर या मंगलोर।

ताम्रद्वीप : सिलोन, लंका।

जावा और बालिद्वीप : सिंगापुरके दक्षिणमें ये दो द्वीप हैं। वहांका धर्म अिस्लाम है, लेकिन हिन्दू संस्कृतिका असर आज भी वहां निश्चित मालूम होता है।

ताम्रलिप्ति : आजका तामलुक।

दसों दिशाओंमें : महावंशमें लिखा है कि "बौद्ध धर्मका प्रचार करनेवाले मोग्गलीपुत्त (तिस्स) स्थविरने संगीतिका कार्य पूरा करनेके बाद भविष्यत् कालके बारेमें सोचकर और यह ध्यानमें रखकर कि मध्य देशके बाहर बौद्ध धर्मकी स्थापना होनेवाली है, कार्तिक मासमें कुछ स्थविरोंको अलग अलग स्थानोंमें भेज दिया : कश्मीर और गांधारमें मज्झंतिकको, महिष मंडलमें महादेव स्थविरको, वनवासीमें रक्खितको, महाराष्ट्रमें महाधम्म रक्खितको और योन (यवन) लोगोंके देशमें महारक्खित स्थविरको भेजा।

"मज्झिम स्थविरको हिमवंत (हिमालय) प्रदेशमें तथा सोण और उत्तर इन दो स्थविरोंको सुवर्णभूमि (ब्रह्मदेश) में भेजा। महा-महिन्द, इट्ठिय, उत्तिय, संबल और भद्दसाल इन पांच स्थविर शिष्योंको 'तुम सुंदर लंकाद्वीपमें जाकर मनोरम बुद्धधर्मकी स्थापना करो' कहकर इस द्वीपमें भेज दिया।" १–८

पृ० २६७ धर्म-विजय: कलिंगकी विजयके बाद मनमें उत्पन्न हुये पश्चात्तापका वर्णन करनेवाला जो शिलालेख अशोकने खुदवाया, उसमें उसने कहा है कि "महाराजके मतके अनुसार धर्मके द्वारा प्राप्त हुवी विजय ही श्रेष्ठ विजय है।"

गैंडेकी तरह अकुतोभय: मूल बौद्ध ग्रंथोंमें गैंडेकी नहीं बल्कि गैंडेके अकेले सींगकी उपमा है। सब प्राणियोंके दो सींग होते हैं, किन्तु गैंडेको नाक पर सिर्फ एक ही सींग होता है।

धम्मपदमें किसी संदर्भमें अकेले हाथीकी उपमा दी गयी है:

नो चे लभेथ निपकं सहायं सद्धिंचरं साधु विहारिधीरं।
राजा व रट्ठं विजितं पहाय एको चरे मातंगरञ्ञे व नागो॥

[यदि निपुण, साथ चलनेवाला, साधु विहारवाला धीर पुरुष मित्रके रूपमें न मिले, तो जैसे हारे हुये राज्यको छोड़कर राजा अकेला चला जाता है, या मातंग अरण्यमें हाथी अकेला घूमता है, वैसे अकेले ही घूमना चाहिये।]

एकस्स चरितं सेय्यो नत्थि बाले सहायता।
एको चरे न च पापानि कयिरा अप्पोस्सुक्को मातंगरञ्ञे व नागो॥

[अकेलेकी चर्या श्रेय है, बालक (अज्ञानी) से कोयी सहायता नहीं मिलती। मातंग अरण्यमें अकेलेकी हाथीकी तरह अल्पोत्सुक होकर अकेलेकी चर्या करना चाहिये; पाप नहीं करना चाहिये।]

सोपारा, कान्हेरी, घारापुरी: बम्बयीके आसपासकी बौद्ध गुफायें।

खंड-गिरि, उदय-गिरि: भुवनेश्वरके दो पहाड़। यहां बौद्ध गुफायें हैं। सम्राट् खारवेलका प्रख्यात शिलालेख भी यहीं है।

महिन्द और संघमित्ता: अशोकने अपने पुत्र महेन्द्र तथा पुत्री संघमित्राको बौद्ध धर्मका प्रचार करनेके लिये लंका भेजा था।

पृ० २६८ वाभिकिंग: युरोपके उत्तर समुद्रमें ८ वीं से १० वीं शताब्दी तक लूट मचानेवाले अिस नामके डाकू।

लक्ष्मीका पिता: लक्ष्मी समुद्रमें पैदा हुअी, अिसलिये पुराणोंमें समुद्रको लक्ष्मीका पिता कहा गया है। यहां पर लेखकने अिस कहानीसे फायदा अुठाकर समुद्रमें यात्रा करनेसे प्राप्त होनेवाली लक्ष्मीके अर्थमें अिन शब्दोंका प्रयोग किया है।

पृ० २६९ सर्वे सन्तु निरामया: ० पूरा श्लोक अिस प्रकार है:

सर्वेऽत्र सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखम् आप्नुयात्॥

[सब सुखी रहें, सब निरामय = नीरोग रहें। सब भद्र देखें। किसीको दुःख प्राप्त न हो।]

६२. दक्षिणके छोर पर

पृ० २७१ धनुष्कोटी: धनुष्कोटीमें दो समुद्रोंके बीच भूमिका जो हिस्सा फैला हुआ है, वह धनुषकी कोटी जैसा कमानदार है। अिस परसे अिस स्थानका नाम धनुष्कोटी पड़ा है।

रत्नाकर और महोदधि: दोनोंका अर्थ तो अेक ही है — समुद्र।

प्रशस्त: मूल अर्थ है कल्याणमय, शुभ, कुशल। प्रशंसापात्र भी हो सकता है। यहां दोनों अर्थोंमें अिसका प्रयोग किया गया है। बंगला और मराठीमें अिस शब्दका दूसरा भी अेक अर्थ है: चौड़ा, विशाल। यहां पर अिस अर्थमें भी लिया जा सकता है।

आत्मनि अप्रत्यय: जिसका आत्मामें यानी अपनेमें विश्वास नहीं है। 'बलवदपि शिक्षितानां आत्मनि अप्रत्ययं चेतः।' — शाकुंतल

भूमिका पर स्थिर रहकर: दो समुद्रोंके बीच खड़े रहनेके लिअे जो भूमि थी अुस पर खड़े रहकर। अल्पार्थमें 'क' प्रत्यय लगता है, अिसका भी यहां लाभ अुठाया गया है।

'रघुवंशमें' लिखा हुआ वर्णन : १३ वें सर्गमें रावण-वधके पश्चात् सीताको लेकर राम पुष्पक विमानमें बैठकर अयोध्या वापस लौटते हैं, तब लंकासे निकल कर सागर पार करते हुअे कुछ श्लोकोंमें सागरका वर्णन करते हैं:

वैदेहि पश्यामलयाद्विभक्तं मत्सेतुना फेनिलमम्बुराशिम् ।
छायापथेनेव शरत्प्रसन्नम् आकाशमाविष्कृतचारुतारम् ॥२॥
गर्भं दधत्यर्कमरीचयोऽस्माद् विवृद्धिमत्राश्नुवते वसूनि ।
अविन्धनं वह्निमसौ बिभर्ति प्रह्लादनं ज्योतिरजन्यनेन ॥ ४ ॥
तां तामवस्थां प्रतिपद्यमानं स्थितं दश व्याप्य दिशो महिम्ना ।
विष्णोरिवास्यानवधारणीयम् ईदृक्तया रूपमियत्तया वा ॥ ५ ॥
ससत्वमादाय नदीमुखाम्भः संमीलयन्तो विवृताननत्वात् ।
अमी शिरोभिस्तिमयः सरन्ध्रैरूर्ध्वं वितन्वन्ति जलप्रवाहान् ॥ १० ॥
मातङ्गनक्रैः सहसोत्पतद्भिर्भिन्नान्द्विधा पश्य समुद्रफेनान् ।
कपोलसंसर्पितया य येषां व्रजन्ति कर्णक्षणचामरत्वम् ॥ ११ ॥
वेलानिलाय प्रसृता भुजंगा महोर्मिविस्फूर्जथुनिर्विशेषाः ।
सूर्यांशुसंपर्क-समृद्धरागैर्व्यज्यन्त अेते मणिभिः फणस्थैः ॥ १२ ॥
तवाधरस्पर्धिषु विद्रुमेषु पर्यस्तमेतत्सहसोर्मिवेगात् ।
ऊर्ध्वांकुरप्रोतमुखं कथंचित् क्लेशादपक्रामति शंखयूथम् ॥ १३ ॥
प्रवृत्तमात्रेण पयांसि पातुम् आवर्तवेगभ्रमता घनेन ।
आभाति भूयिष्ठमयं समुद्रः प्रमथ्यमानो गिरिणेव भूयः ॥ १४ ॥
दूरादयश्चक्रनिभस्य तन्वी तमालतालीवनराजिनीला ।
आभाति वेला लवणाम्बुराशेर्धारानिबद्धेव कलङ्करेखा ॥ १५ ॥
वेलानिलः केतकरेणुभिस्ते संभावयत्याननमायताक्षि ।
मामक्षमं मण्डनकालहानेर्वेत्तीव बिम्बाधरबद्धतृष्णम् ॥ १६ ॥
अेते वयं सैकतभिन्नशुक्ति-पर्यस्तमुक्तापटलं पयोधेः ।
प्राप्ता मुहूर्तेन विमानवेगात् कूलं फलावर्जितपूगमालम् ॥ १७ ॥

पृ० २७४ पर्वसे परमाणौ च० अिसका पूर्वपद अिस प्रकार है: 'कवयः कालिदासाद्याः कवयो वयमप्यमी।' पूरे श्लोकका अर्थ अिस

प्रकार है: "कालिदास आदि भी कवि हैं, हम भी कवि हैं। पर्वत और परमाणुमें पदार्थत्व समान है।"

वानर-यूथ-मुख्य: रामरक्षा-स्तोत्रमें हनुमानकी स्तुतिका श्लोक जिस प्रकार है:

मनो-जवं मारुत-तुल्य-वेगं
जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठं।
वातात्मजं वानर-यूथ-मुख्यं
श्रीराम-दूतं मनसा स्मरामि॥

साम्पराय: मृत्युके बादकी स्थिति। कठोपनिषद्में नचिकेताने यमराजसे साम्परायके बारेमें पूछा था।

पृ० २७७ अुदये सवित्ता० अुदयके समय सूर्य लाल होता है और अस्तके समय भी लाल होता है। बड़े लोग संपत्ति और विपत्तिके समय बेकरूप रहते हैं।

पृ० २७८ अब जिस त्रिविध पूर्णतामें से . . . होगी: याद कीजिये:

पूर्णम् अदः पूर्णम् इदं पूर्णात् पूर्णम् अुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णम् आदाय पूर्णम् एवावशिष्यते॥

पृ० २८० ब्राह्म-मुहूर्त: सुबह करीब साढ़े तीन बजेका समय। आत्म-चिन्तनके लिअे यह समय अच्छा माना गया है। 'ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय चिन्तयेत् हितम् आत्मनः।'

पृ० २८१ अुदर-भरण नामक यज्ञकर्म: तुलना कीजिये:

बदनीं कवळ घेतां नाम ध्या श्रीहरिचें
सहज हवन होतें नाम घेतां फुकाचें।
जीवन करि जिवित्वा अन्न हें पूर्णब्रह्म
अुदरभरण नोहे जाणिजे यज्ञकर्म॥

[मुंहमें कौर लेते हुअे हरिका नाम लो। मुफ्तका नाम लेनेसे सहज ही हवन होता है। अन्न पूर्ण ब्रह्म है और यह जीवन

कहते ही आयुको जीवन बनाता है। यह उदर-भरण नहीं है, परन्तु जिसे यज्ञकर्म जानना चाहिये।]

कन्याकुमारीकी कथा: बंडासुर नामक एक दानवने शंकरजीकी आराधना की और हिरण्यकशिपुकी तरह 'मैं जिससे न मरने पाऊं, उससे न मरने पाऊं' आदि वरदान मांग लिये। किन्तु जिस लंबी-चौड़ी सूचीमें कुमारी कन्याका नाम दर्ज करनेकी बात उसको नहीं सूझी। वरदानसे निर्भय बना हुआ यह दानव संसार पर भारी जुल्म ढाने लगा। सारा संसार त्रस्त हो गया। अतः शिवजीने पार्वतीको कुमारी कन्याका रूप लेकर संसारमें आनेकी बात कही। पार्वतीने ललिता देवीका अवतार लिया और दानवको मार डाला। फिर हाथमें कुंकुम और अक्षत लेकर विवाहके लिये शिवजीकी राह देखने लगी, क्योंकि पहलेसे वैसा तय हुआ था। शिवजी निकले तो सही, किन्तु रास्तेमें क्रोधमूर्ति दुर्वासासे उनकी भेंट हो गयी। उनके स्वागतमें कुछ देर लग गयी। इतनेमें कलियुग बैठ गया! और कलियुगमें विवाह नहीं हो सकता था।

अतः पार्वतीने हाथके कुंकुम-अक्षत फेंक दिये और कलियुगकी समाप्तिकी राह देखती हुई वहीं खड़ी रही।

पार्वतीके फेंके हुये अक्षत अब भी समुद्र-तट पर रेतीके रूपमें पाये जाते हैं। श्रद्धालु लोग मानते हैं कि ये चावल मुंहमें डालनेसे खानेसे प्रसूतिकी वेदना कम होती है। कुंकुमके समान लाल रेतका तो वहां पार ही नहीं है।

६३. कराची जाते समय

पृ० २८३ अनुराधा, कृष्णचंद्र: अनुराधा नक्षत्र। कृष्णचंद्र = कृष्णपक्षका चांद। राधा और कृष्ण जिन दो शब्दोंका लेखकने यहां अच्छा लाभ उठाया है।

६४. समुद्रकी पीठ पर

पृ० २८५ गिरवारी: आचार्य कृपालानीजीका भतीजा। उस समय लेखकके साथ शांतिनिकेतनमें रहता था।

आगुनेर परशमणि छोंआओ प्राणेः पूरा गीत अिस प्रकार है:

आगुनेर परशमणि छोंआओ प्राणे
अे जीवन पुण्य करो दहन-दाने।
आमार अेअि देहखानि तुले धरो,
तोमार अै देवालयेर प्रदीप करो,
निशिदिन आलोक-शिखा ज्वलुक गाने।
आंधारेर गाये गाये परश तव
सारा रात फोटाक तारा नव नव
नयनेर दृष्टि हते घुचवे कालो
जेखाने पडबे सेयाय देखबे आलो
व्यथा मोर, अुठबे ज्वले अूर्ध्व पाने।

आकाशमें जिस प्रकार चांद चलता है: रवीन्द्रनाथके दूसरे अेक गीतमें अिसी तरहका चित्र है:

आजि शुक्ला अेकादशी, हेरो निद्राहारा शशी
अै स्वप्न पारावारेर खेया अेकला चालाय बसि।

पृ० २८७ ध्येयः सदा० सूर्यमंडलके मध्यमें स्थित, कमलासन पर विराजमान तथा केयूर, मकरकुंडल, किरीट और हार धारण करनेवाले, सुवर्णमय शरीरवाले, शंख-चक्रधारी नारायणका सदा ध्यान करना चाहिये।

जीवतराम: आचार्य कृपालानी।

भयंकर दिव्य: दिव्य = कसौटी, परीक्षा। मराठीमें 'भयंकर दिव्य' नामक अेक अुपन्यास काफी मशहूर है।

पृ० २९० आत्मन्येव संतुष्टः आत्मामें ही संतुष्ट। गीता, ३-१७ पूरा श्लोक अिस प्रकार है:—

यस्त्वात्म-रतिर् अेव स्याद् आत्म-तृप्तश् च मानवः।
आत्मन्येव च संतुष्टस् तस्य कार्यं न विद्यते॥

६५. सरोविहार

पृ० २९२ अुसका काव्य तो दूरसे ही खिलता है: 'Tis distance lends enchantment to the view.

शकुंतलाकी तरह: शांकुतलके तीसरे अंकके अंतमें शकुंतला दुष्यन्तके साथ विश्रंभालाप करती है, इतनेमें वहां आर्या गौतमी पहुंचती है। इसलिये शकुंतला राजासे लताओंके पीछे जानेको कहती है और जाते समय लताओंसे कहती है:

'लतावलय, संतापहारक, आमंत्रये त्वां भूयोऽपि परिभोगाय।'

और इस प्रकार लतामंडपके बहाने राजासे इजाजत लेकर जाती है।

पृ० २९३ ययातिको भी जीवनका आनन्द छोड़ना पड़ा: राजा ययाति भोग-विलासमें फंसा रहता था। इसके लिये उसने अपने लड़कोंका यौवन भी ले लिया था। किन्तु बादमें उसे विरति पैदा हुई और समझमें आया कि:

न जातु कामः कामानाम् उपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मेव पुनरेवाभिवर्धते॥

[भोगोंके उपभोगसे कामनाओंका शमन नहीं होता। बल्कि घीसे बढ़नेवाली अग्निकी तरह वे बढ़ती ही जाती हैं।]

अनन्तासंके फव्वारे: उसके पेड़का आकार ऐसा होता है मानो फव्वारा उड़ता हो।

६६. सुवर्ण देशकी माता अैरावती

पृ० २९७ कृपाका उत्पात: बाढ़। दूसरा भी अेक अर्थ है। नील नदीमें जब बाढ़ आती है, तब वह अपने साथ मिट्टी बहाकर लाती है, जिससे खेतोंमें फसल अच्छी होती है। अिजिप्शियन लोग अिसे 'नीलकी कृपा' कहते हैं।

शतरंज खेलनेवाले कालिदास: कहते हैं कि भवभूतिने 'उत्तर-रामचरित' लिखनेके बाद पूरा ग्रंथ कालिदासको पढ़ कर सुनाया था। कालिदास शतरंजके बड़े शौकीन थे। वे शतरंज खेलते-खेलते पुस्तक सुन रहे थे। कालिदास ध्यानपूर्वक नहीं सुन रहे हैं, यह देखकर भवभूतिको बुरा लगा। किन्तु अन्तमें जब कालिदासने अेक सूक्ष्म और रसिक सुधार सुझाया, तब भवभूति आश्चर्यचकित हो गये। पूरा ग्रंथ सुननेके बाद कालिदासने कहा, 'नाटक अच्छा है; सिर्फ अेक अनुस्वार अधिक है।'

राम और सीताकी गपशपका वर्णन करते हुअे भवभूतिने लिखा था :

अविदित-गत-यामा रात्रिरेवं व्यरंसीत् ।।

[अिस प्रकार (अेवं) (अिधर-अुधरकी गपशप करते करते) प्रहर कैसे बीतते गये यह मालूम ही नहीं हुआ और सारी रात बीत गअी ।]

कालिदासने अनुस्वार निकालनेकी बात कही और पूरा अर्थ बदल गया। अुसमें चमत्कृति पैदा हो गअी :

अविदित-गत-यामा रात्रिरेव व्यरंसीत् ।।

[(अिधर-अुधरकी गपशप करते करते) प्रहर कैसे चले गये अिसका पता चले बिना मात्र रात्रि ही पूरी हो गअी (हमारी बातें पूरी नहीं हुअीं)।]

यह अेक दंतकथा ही है, क्योंकि कालिदास और भवभूति समकालीन नहीं थे।

शान-राज्य : ब्रह्मदेशके चीनकी सीमाके पासके आधे स्वतंत्र राज्य। शान लोग ब्रह्मदेश, आसाम, सियाम और दक्षिण चीनमें रहते हैं। वर्णसे गौर तथा धर्मसे बौद्ध। बड़े मेहनती। अुनमें बहुपत्नी-प्रथा चलती है।

जहाजका पक्षी : 'जैसे अुड़ि जहाजको पंछी, फिरि जहाज पै आवै।' — सूरदास।

अनित्या वत० 'अनित्या वत संस्कारा अुत्पत्ति-व्ययधर्मिणः।'

[अुत्पत्ति और नाश यही जिनका धर्म है, अैसे संस्कार (सृष्ट पदार्थ) अनित्य ही हैं।]

श्रांत : थकेमांदे लोगोंका तत्त्वज्ञान।

चिरन्तन : चिरकाल तक टिकनेवाला। सम्पूर्ण ज्ञानवाले लोगोंका तत्त्वज्ञान।

सुवर्ण देश : ब्रह्मदेशका बौद्धकालीन नाम।

६७. समुद्रके सहवासमें

पृ० २९९ कच्ची छोंककी तरह : अुपमाकी नवीनता और औचित्य ध्यानमें लीजिये।

पृ० ३०१ त्रिकांड : तीन कांड यानी तीन भागवाला। श्रवणके तीन तारे होते हैं। मृग नक्षत्रके पेटमें तीन तारोंका अिपु त्रिकांड नक्षत्र होता है। अुसीके जैसा श्रवण होता है, अतः अुसे त्रिकांड कहा गया है।

खस्वस्तिक : हम जहां कहीं खड़े रहते हैं वहांका सिर परका आकाशका भाग या बिन्दु। अंग्रेजीमें अिसको 'झेनिथ' कहते हैं।

पृ० ३०२ प्रकाश चमकाकर : जिस प्रकार तार-विभागमें 'कट्ट' और 'कड़' अिन दो ध्वनियोंसे सारी लिपि तैयार की गयी है, अुसी प्रकार रातमें प्रकाश चमकाकर दूर तक संदेश भेजे जाते हैं। दिनमें सूर्यप्रकाशसे भी अैसे संदेश भेजे जाते हैं। अुसे 'हेलियोग्राफ' कहते हैं।

पृ० ३०५ त्रिखंड सहकार : अफ्रीकामें मूल काले बाशिंदोंके अलावा (जो गुलाम या मजदूर होते हैं), राज्य करनेवाले गोरे युरोपियन लोग भी हैं और तिजारतके लिअे पूर्वसे आये हुअे गेहुंअे रंग या पीले रंगके अरब, हिंदुस्तानी और चीनी लोग भी हैं। तीनों खंडोंके अिन लोगोंके बीच जो सहयोग चलता है, अुसको त्रिखंड सहकार कहा गया है। अलबत्ता, यह सहयोग विषम है।

६८. रेखोल्लंघन

पृ० ३०६ रेखोल्लंघन : भूमध्य-रेखाका अुल्लंघन।

शांतादुर्गा : शुभंकरी शांता और भयंकरी दुर्गा। शांतादुर्गाका देवालय गोवामें है।

६९. नीलोत्री

पृ० ३०८ श्री अप्पासाहब : औंधके अंतिम राजाके दूसरे पुत्र श्री अप्पासाहब पंत। आप भारत-सरकारके कमिश्नरके नाते अफ्रीकामें थे, तब वहांके लोगों पर आपका अच्छा असर हुआ था।

पृ० ३१० अीशोपनिषद् : अठारह मंत्रोंका अेक छोटासा अुपनिषद्। श्री विनोबाने अिसको वेदोंका सार और गीताका बीज कहा

है। गांधीजी कहते थे कि अिसमें हिन्दूधर्मका सारा निचोड़ आ जाता है। अिसका पहला मंत्र अुन्हें विशेष प्रिय था और अुस पर अुन्होंने कअी बार विवेचन किया था। अीशोपनिषद्का पहला मंत्र यह है:

अीशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥

अिस अुपनिषद्को अीशावास्योपनिषद् भी कहते हैं।

मांडुक्य अुपनिषद्: अीशोपनिषद्से भी छोटा है। अिसमें सिर्फ बारह मंत्र हैं। अिसमें ॐकारके द्वारा सारे अद्वैत सिद्धान्तका विवेचन किया गया है। गौड़पादाचार्यने अिस पर जो कारिका लिखी है, वह अद्वैत सिद्धान्तका प्रथम निबंध मानी जाती है। अिसीकी बुनियाद पर श्री शंकराचार्यने अपने मतकी स्थापना की है।

अघमर्षण सूक्त: अिसकी जानकारी 'अर्णवका आमंत्रण' नामक प्रकरणकी टिप्पणियोंमें दी जा चुकी है।

मैं यदि संस्कृतका कवि होता: संस्कृत कवि वाल्मीकिने गंगा-स्तवमें कहा है:

त्वत् तीरे तरुकोटरान्तरगतो गंगे! विहंगो वरं
त्वन्नीरे नरकान्तकारिणि! वरं मत्स्योऽथवा कच्छपः।
नैवान्यत्र मदान्ध-सिंधुर-घटा-संघट्ट-घंटा रणत्-
कार-त्रस्त-समस्त-वैरि-वनिता-लब्ध-स्तुतिर्भूपतिः॥

पृ० ३१२ मि० स्पीक: (Speke) जॉन हेनिंग (१८२७–१८६४) नील नदीका अुद्गम खोजनेवाला। हिन्दुस्तानी फौजमें भरती हुआ। पंजाबकी लड़ाअीमें मशहूर हुआ। अुसे छुट्टियोंमें हिमालय, तिब्बत आदि प्रदेशोंमें घूमनेका शौक था। अफ्रीकाके भूगोलमें रस पैदा होते ही १८५८ में बर्टनके साथ वह अफ्रीका गया। सोमालीलैंडमें घूमा। अुसका वर्णन अुसने अपनी 'What led to the Discovery of the Source of the Nile' (१८५८) नामक पुस्तकमें लिखा है। अिसके बाद वह अफ्रीकाके मध्यमें स्थित सरोवरोंकी खोज बाबत निकला। अुसकी मान्यता थी कि अिनमें से अुत्तरकी

ओरके विक्टोरिया न्यांजा सरोवरमें ही नीलका उद्गम है। अुसने अपनी यह मान्यता सप्रमाण 'The Journal of the Discovery of the Source of the Nile' नामक पुस्तकमें सिद्ध की। बर्टनने अुसका विरोध किया। बर्टनके अनुसार टांगानिका सरोवरमें नीलका उद्गम था। दोनोंके बीच सार्वजनिक चर्चा रखी गअी। चर्चाके पहले ही दिन स्पीक शिकार खेलने गया था, जहां वह अपनी ही बंदूककी गोलीका शिकार हो गया।

पृ० ३१३ चंद्रगिरि: रामायणके अनुसार सिन्धु और सागरके संगम-स्थान पर स्थित शतशृंग पर्वत। यहां 'रुवेन जोरी' पर्वत।

मेरु पर्वत : भागवतके अनुसार जंबूद्वीपमें अिलावृत्तके मध्यमें स्थित सोनेका पर्वत। यहां मध्य अफ्रीकाका रुनी नामका अेक पर्वत, किलीमांजारोका पड़ोसी।

अच्छोद सरोवर : बाणभट्टकी कादंबरीसे यह नाम लिया गया है।

'शुभ-संदेश' : सुवार्ता। अंग्रेजी 'गॉस्पेल'।

पृ० ३१४ स्टेन्ली : सर हेनरी मार्टन (१८४०–१९०४) अेक मामूली किसानका लड़का। मूल नाम जॉन रोलांड। बचपन बड़ी कठिनाअीमें बीता। मदरसेमें शिक्षकको पीटकर भाग गया था। सुअी-धागा बेचनेवालेके यहां काम किया। कसाअीके यहां भी काम किया। बादमें न्यू ऑर्लियन्स (अमेरिका) जानेवाले अेक जहाजमें कैबिन बॉयकी हैसियतसे काम किया। वहांके स्टेन्ली नामक अेक व्यापारीने अुसकी मदद की। बादमें अुसको गोद लिया। तबसे वह स्टेन्लीके नामसे पुकारा जाने लगा। पालक पिताके अवसानके बाद फौजमें भर्ती हुआ। युद्धके दरमियान गिरफ्तार हुआ। मुक्त होनेके बाद जब वापस घर लौटा, तब मांने घरमें रखनेसे अिनकार किया। अिससे अुसके दिलको बड़ी चोट लगी। रोटीके लिये अुसने खलासीका जीवन स्वीकार किया। अमेरिकाके नौकादलमें भर्ती हुआ। बादमें अखबारोंमें लेख लिखने लगा। अुसकी वर्णन-शक्ति अच्छी थी। कअी युद्धोंमें संवाददाताके तौर पर काम किया। १८६९ में 'न्यूयॉर्क हेरल्ड' के संचालकने अुसको

तार देकर पेरिस बुलाया, और अफ्रीकाकी खोजके लिये निकले हुओ लिविंग्स्टनकी खोज करनेका आदेश दिया। करीब अेक सालकी कड़ी दौड़धूपके बाद वह १० नवम्बर, १८७१ को अुजीजीमें लिविंग्स्टनसे मिला। अिस प्रवासका वर्णन अुसने 'How I found Livingstone' (१८७२) नामक पुस्तकमें किया है। शुरू शुरूमें अुसकी कहानी पर लोगोंका विश्वास नहीं बैठा। मगर अुसने लिविंग्स्टनकी डायरियां दिखाओं, तब जाकर लोगोंका विश्वास बैठा। रानी विक्टोरियाने अुसे सोनेकी रत्नजड़ित डिब्बी भेंटमें दी। किन्तु अिस प्रसंगमें लोगोंने अुस पर जो अविश्वास दिखाया और जो गालियां बरसायीं, अुससे अुसका मन हमेशाके लिये खट्टा हो गया।

सन् १८७४ में लिविंग्स्टनकी मृत्युके बाद अुसका अपूर्ण कार्य पूर्ण करनेके लिअे 'डेली टेलिग्राफ' के मालिकने चंदा अिकट्ठा करके स्टेन्लीको दिया और अिसके नेतृत्वमें अेक टुकड़ी अफ्रीकामें भेजी। तीन साल यात्रा करनेके बाद अुसने सिद्ध किया कि लिविंग्स्टनने जिसे 'लुआलाबा' कहा था, वह और कांगो नदी अेक ही है। और अुसका पूरा जलमार्ग अुसने निश्चित कर दिया। अिस काममें अुसने जो कष्ट अुठाये, अुसका कोअी हिसाब नहीं है। अुसने विक्टोरिया न्यांजाका क्षेत्रफल निश्चित किया। टांगानिकाकी लंबाअी और क्षेत्रफल निश्चित किया। ब्येद नामक नये सरोवरकी खोज की। अिस यात्राका वर्णन अुसने 'Through the Dark Continent' नामक अपनी पुस्तकमें किया है। अुसकी अिस यात्राके कारण नील नदीके अुद्गमके आसपासका सारा प्रदेश अंग्रेजोंके संरक्षणमें आ गया।

कांगो नदी अफ्रीकाके मध्य प्रदेशको चीरकर जानेवाला जलमार्ग है, यह अुसकी महत्त्वकी खोज है। अिसका महत्त्व बेल्जियमके राजा लियोपोल्ड द्वितीयने अच्छी तरह समझ लिया था। अुसने अपने कुछ लोगोंको अफ्रीकासे वापस लौटनेवाले स्टेन्लीसे मिलनेके लिअे मार्सेल्स भेजा था। अुन्होंने राजाकी ओरसे स्टेन्लीको वापस कांगो जानेकी सूचना की। किन्तु स्टेन्ली अुस समय आराम करना चाहता था। अतः अुसने अिस सूचनाको स्वीकार नहीं किया। १८७९ में लिओपोल्डने अुसे फिरसे जानेकी सूचना

की। स्टेन्लीने तब तक अंग्रेज व्यापारियोंमें कांगोके बारेमें दिलचस्पी पैदा करनेकी काफी कोशिश की। किन्तु अिसमें अुसको सफलता नहीं मिली। अिसलिअे ब्रुसेल्स जाकर लियोपोल्डकी सूचना और योजनाका अुसने स्वीकार किया। वह फिरसे कांगो गया। पांच वर्षकी मेहनतके बाद अुसने लियोपोल्डके आधिपत्यके नीचे कांगोके स्वतंत्र राज्यकी स्थापना की। अिसका वर्णन अुसने अपनी 'The Congo and the Founding of its Free State' (१८८५) नामक पुस्तकमें किया है।

१८८४ में वह फिरसे युरोप लौटा। अुसके भाषणोंकी वजहसे जर्मनीमें अफ्रीकाके बारेमें रस अुत्पन्न हुआ। युरोपके राष्ट्रोंमें अफ्रीकाको कब्जेमें लेनेके लिअे होड़ शुरू हुअी। स्टेन्ली अिंग्लैंडमें रहा, किन्तु बेल्जियमके राजाके प्रति अुसकी निष्ठा भी अुसे खींचती थी। दोनोंका हित सिद्ध करनेके लिअे वह फिरसे अफ्रीका गया। भूमध्य-रेखाके आस-पासके प्रदेशोंमें घूमते हुअे अुसके करीब दो-तिहाअी साथी मर गये, कुछ साथी मारे गये। किन्तु वह हिम्मत नहीं हारा। अुसने अपना काम जारी रखा, और अंग्रेजोंके लिअे अुसने वहांके अमीनसे काफी रिआयतें प्राप्त कर लीं। अिस भयानक यात्राका वर्णन अुसने 'In Darkest Africa' नामक ग्रंथमें (१८९०) किया है।

अिस यात्राके बाद जब वह वापस अिंग्लैंड लौटा, तब अुस पर विविध सन्मान बरसाये गये। ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयोंने अुसको ऑनरेरी डिग्रियां प्रदान कीं। अुसने अेक कलाकार स्त्रीसे शादी की। अुसके आग्रहके कारण वह पार्लियामेण्टमें चुना गया। किन्तु अिसमें अुसको कोअी दिलचस्पी नहीं मालूम हुअी। अपनी जवानीके समयके यात्रा-वर्णन अुसने 'My Early Travels and Adventures' नामक ग्रंथमें दिये हैं। सन् १८९७ में वह आखिरी बार अफ्रीका गया। अुसका वर्णन अुसने 'Through South Africa' नामक ग्रंथमें किया है (१८९८)। सन् १८९९ में अिंग्लैंडके राजाने अुसे 'नाअिट' का खिताब दिया। जीवनके अंतिम दिन निवृत्तिमें बिताकर सन् १९०४ में अुसकी मृत्यु हुअी।

मिसर संस्कृति : मिस्रमें पुरोहित, राज्यकर्ता वर्ग, किसान और कारीगर, मजदूर या गुलाम इन चार वर्गोंकी समाज-व्यवस्था चलती थी।

पृ० ३१५ अफलातूनकी 'समाज-रचना : अफलातूनने 'रिपब्लिक' नामक अपने ग्रंथमें आदर्श नगर-राज्यका चित्र खींचा है, जिसमें उसने लोगोंको चार वर्णोंमें बांटा है : (१) राज्यकर्ता तत्त्वज्ञ, (२) लड़नेवाले, (३) किसान, कारीगर और व्यापारी तथा (४) गुलाम।

पृ० ३१६ अश्वत्थामा : अश्व + स्थामन्। स्थामन् = बल। यहां 'स्थामन्' के 'स' का लोप होता है।

७०. वर्षा-गान

पृ० ३१६ कालिदासका श्लोक : यह है वह श्लोक —

नवजलधरः संनद्धोऽयं न दृप्तनिशाचरः।
सुरधनुरिदं दूराकृष्टं न नाम शरासनम्॥
अयम् अपि पटुर् धारासारो न बाण-परंपरा।
कनक-निकष-स्निग्धा विद्युत् प्रिया न ममोर्वशी॥

— विक्रमोर्वशीयम्, अंक ४ : श्लोक ७

यह निदर्शन अलंकारका उदाहरण है। श्लोकका अर्थ मूलमें दिया ही है।

पृ० ३१७ चिर-प्रवासी : हमारे लोग चिर-प्रवासको मरणतुल्य मानते थे। 'रोगी, चिर-प्रवासी . . . यज्जीवति तन्मरणम्।'

जीवन-प्रवाहको परास्त करनेवाले पुल : जीवन-प्रवाह, पानीका प्रवाह। पानीका प्रवाह मनुष्यको आगे अुस पार जानेसे रोकता है। नदी पर पुल बननेसे नदीकी यह रोकनेकी शक्ति परास्त होती है।

सेतु : सेतुका अर्थ है बांध।

पृ० ३१८ छोटेसे घोंसलेका रूप : यह अुपमा अुपनिषद्के अेक वचनसे सूझी है।

यत्र भवति विश्वं अेकनीडम्।

जहां सारा विश्व अेक छोटासा घोंसला बन जाता है। स्वयं भगवान ही अैसे घोंसलेमें रहनेवाले जीवोंको गरमी देनेवाला पक्षी है।

कारवार : बम्बई राज्यके पश्चिमी समुद्र-तटका अतीव सुन्दर बन्दरगाह, जहां लेखकने अपने बचपनके कुछ वर्ष व्यतीत किये थे। लेखककी पुस्तक 'स्मरण-यात्रा' में कारवारका जिक्र कई बार आता है।

पृ० ३१९ जीवनचक्र : गीतामें अध्याय ३, श्लोक १६ में जिस प्रवर्तित जीवन-चक्रका जिक्र आता है। लेखकका 'जीवन-चक्र' नामक निबंध इस सिलसिलेमें खास पढ़ने लायक है।

परस्परावलंबन द्वारा सधा हुआ स्वाश्रय : व्यक्तिगत जीवनके लिये स्वाश्रय अच्छा है। सामाजिक जीवनकी बुनियादमें परस्परावलंबन ही प्रधान है। ऐसे परस्परावलम्बनमें जब आदान-प्रदान समसमान या तुल्यबल होता है, तब जीवनका बोझ किसी पर न बढ़नेसे उसमें स्वाश्रयकी निष्पापता आती है।

यज्ञ-चक्र : जीवन-चक्रको ही गीताने यज्ञ-चक्र कहा है। देखिये, 'सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा वि०' गीता—अध्याय ३, श्लोक १० से १६।

अवतार-कृत्य : अवतारका शब्दार्थ है नीचे उतरना। बारिशका पानी ऊपरसे नीचे उतरता है। भगवान भी जब नीचे उतरकर मनुष्यरूप धारण करते हैं, तब उसे अवतार कहते हैं।

कुरुक्षेत्र : भारतीय युद्धकी रणभूमि।

मखमलके कीड़े : जिन्हें इन्द्रगोप कहते हैं।

दोहरी शोभा : मखमलके कपड़ेमें जैसी शोभा होती है वैसी। एक ओरसे देखनेसे गहरा रंग मालूम होता है; दूसरी ओरसे वही फीका या दूसरे रंगका मालूम होता है। अंग्रेजीमें जिसे 'Shot' कहते हैं।

पृ० ३२१ आकाशके वेध : सितारे।

'मधुरेण समापयेत्' : भोजनमें आखिरी चीज मीठी हो।

'ऋतु-संहार' : कालिदासका एक नितांत सुन्दर काव्य, जिसमें छहों ऋतुओंका वर्णन आता है।

'ऋतुभ्यः' : विवाहके समय सप्तपदी द्वारा गृहस्थाश्रमके लिये जो जीवन-दीक्षा ली जाती है, उसमें से छठी प्रतिज्ञा है 'ऋतुभ्यः'। 'जीवनमें हम दोनों ऋतु-परिवर्तनके साथ साथ जीवन-परिवर्तन भी करेंगे'—यह है इस प्रतिज्ञाका भाव।

सूची

अ

अंकलेश्वर ९०
अंकोला १००, १०१, १०८
अंगवंग १७
अंग्रेज १६ (प्रस्ता०)
अंतर्वेदी १० (प्रस्ता०)
अंदमान २८९
अंबा-अंबिका ९७
अंबा-भवानी १११
अंबिका १६ (प्रस्ता०)
अकबर २३, १२९
अक्षय-तृतीया २६१
अक्षयवट २३
अगस्ति १५७, १६०, १८७, २६४, २७७, २७८, २८१
अगस्त्य २३२
अगुंबा ४५
अघनाशिनी ७७, १००, १०१, १०३, १०४, १०५, १०६
अघमर्षण सूक्त ३१०
अच्युत देशपांडे ११९
अजंता १७७
अजमेर ९८
अजिंठा (के पहाड़) ३४
अटक १३८, १३९, १४०
अडयार १८ (प्रस्ता०) २३५, २३७, २३८
अनंतनाग १२६
अनंतपुर १२७
अनंतबुवा मरढेकर ९, १२५
अनुराधा २८०, २८३, ३०१
अनुराधापुर १८६
अप्पासाहब पंत ३०८
अफलातून ३१५
अफ्रीका ६ (प्रस्ता०), १७०, २२७, २६८, २६९, २७०, ३०२, ३०४, ३११, ३१३-१५
अबटाबाद १२९
अबूबकर १४२
अबोर २३४
अब्बास साहब १०
अभिजित २८३, ३०१
अमरकंटक ८४, ८५, ८६, ८९, १६८
अमरनाथ ९
अमरसर (विक्टोरिया) ३०८, ३१०, ३१३, ३१५
अमरापुरा २९४, २९५
अमानुल्ला १३९
अमृतलाल (नाणावटी) २५९
अमेरिका १०, ४४, ४५, १४७, २६८, २९८, ३०४
अयोध्या १९, २४, १२०
अरबस्तान २५२, २६७, ३१३
अरवली ८०, ९८
अरुंधती (तारा) १२५
अर्जुन १८४
अर्जुनदेव १३१

अलकनंदा १८, २५
अलकापुरी १२२
अलकेश्वर ६७
अल्काहिरा २३७
अल्हणादेवी १९४
अवंति ४०
अशोक १७ (प्रस्ता०), १८, १९, २४, ४५, १५४, १५६, २११, २६७
अष्टबंध १०८
असम १५४, २२९, २३१, २३३
असित ऋषि २१
अस्का २१२
अहमदाबाद ७८, ८२
अहल्या १८१
अहल्याबाअी २०९

आ

आंकोर थॉम २३२
आंकोर वाट २३२
आंध्र ८, ३१, २१२
आअिसलॅण्ड २६८
आबो १०८, २२१, २२२, २१५
आगरा १९, २२, १५०, २९२
आगाखान महल १३
आजी (नदी) १४ (प्रस्ता०), ९५, ९६
आबू ९७, ९८, १८२
आरवेल घाटी १००
आरनहीं ८०, ९८
आराकान २९५
आर्य ११ (प्रस्ता०), १७, २६, ८१, १३५, १३८, १५३, १७८, १९५, २७२
आर्यजाति १७
आल्नी २६९
आसाम १६, २० (प्रस्ता०), १९
ऑस्ट्रेलिया २६९
आळंदी ८

अि

अिंग्लैंड ३१४
अिंद्रका वज्र २६५
अिंद्रदेव ५०, १०७, १३८, २९४
अिंद्रसभा (वेल्ज़) ११९
अिंद्रावती ३४
अिफाक (नदी) १७ (प्रस्ता०)
अिग्नेशियस लोयला २६७
अिचंगु नारायण १६३
अिजिप्त ३१३, ३१४, ३१५, ३१६
अिटारसी ९०, १७९
अिरावती ७९, १३०, १३१, १७२

अी

अीथियोपिया ३१२
अीव १९६, १९७, २०६
अीरान २०२
अीरावती २९४
अीशावास्य १०५, ३१८
अीशु २६७, ३१३

अु

अुंचल्ली ७७, १००-०५
अुज्जयिनी १८ (प्रस्ता०)
अुड़िया २१२
अुड़ीसा १०५, २११, २६६, २६७

उत्कल १७, १९ (प्रस्ता०), १६८, २५७
उत्तर अमेरिका ११
उत्तर कनाडा ६२, ७०
उत्तर काशी १८, ५२
उत्तर भारत १३७
उत्तररामचरित २९७
उदयगिरि २६७
उर्वशी १२ (प्रस्ता०), ३१७

ऋ

ऋतु-संहार ३२१
ऋषिकुल्या १७ (प्रस्ता०), २११, २१२, २१३

ए

एलिफंटा ११९
एशिया ३०४, ३११

ऐ

ऐरावती १७ (प्रस्ता०), ३६, ८१, १३०, १७६, २९४, २९५, २९८

ओ

ओंकारेश्वर १२
ओखला २०८
ओड्र मंडल ८४
ओरछा १७५
ओवेन (फॉल्स) ३०९, ३१६

औ

औरंगजेब ७३

क

कंदहार १४०
कंपाला २९९, ३०८
कंबोडिया २३२
कंस २३
कच्छ १९ (प्रस्ता०), ९७, ९९
कटक १७ (प्रस्ता०), १०५
कनकम्मा ४२
कन्नौज २२
कन्याकुमारी १९ (प्रस्ता०), ६१, ८४, १८६, २७५, २७६, २८१, २८२, ३०६
कन्यागुरुकुल २१४, २२०
कन्हैया १७४
कबीर १८
कबीरवड ९०–९१
करतार (खिरथर) १३८, १४६
कराची १९ (प्रस्ता०), १४१, १४३, १४८, २७३, २८२
कर्जन १९ (प्रस्ता०), ४६, ६३, ६४
कर्जन सीट ६४
कर्ण (राजा) ९७
कर्नाटक ८, १२
कर्नाली २९५
कलकत्ता १५४, १५५, १७१, १९४, १९५, १९८, २०५, २५६, २५७, २६९, २८४, २८९
कलचुरी १९४
कलिंग २११, २१२, २६६
कश्मीर १२४, १२५, १२७, १२८, १२९, १३४, १३६, १५०, १५४, १६३, २२६, २८१, २९५
कश्यपगंगा ८१
कस्तूरबा १३, २७६
कहाद २७१
कांगो ३१४

काफपेया १७ (प्रस्ता०)
काका १८ (प्रस्ता०), २७५
काटलुकी १७ (प्रस्ता०)
काठमांडू (काष्ठमंडप) १६३, १६४
काठियावाड १८, १९ (प्रस्ता०), ९५, ९६, ९७
कादंबरी २५७
कादवा ३४
कान-चेन-झौंगा २२७, २२८
कानडा ५३
कानपुर १८, २२, २३
कान्हेरी २६२, २६७
कान्हो ७ (प्रस्ता०)
काबुल (नदी) १३८, १३९
कामत (पद्मनाभ) २४७
कामरूप १२ (प्रस्ता०)
कायरो २३७
कारकल ४५
कारवार १८, १९ (प्रस्ता०); १४, ४४, ६३, ७६, ७७, १००, १०१, १०८, ११६, ११७, २३९, २४३, २४४, २४६, २४७, २५२
काराकोरम १३८
कार्ली २६२
काल्पी २३
काला पहाड १९४
कालिंपों १७ (प्रस्ता०), २२६, २२९
कालिंदी १२ (प्रस्ता०), १८, २३, २४, ३०, २९५
कालिन्ट १९ (प्रस्ता०), २६७
कालिकापुराण २२९
कालिदास ११, १८ (प्रस्ता०), १४, २४, २७३, २७४, २९७, ३१७, ३२०
कालियामर्दन २३
काली (नदी) (कारवार) १८ (प्रस्ता०), ७७, १००, १०१
काळी नदी (गोवा) १८ (प्रस्ता०)
कावी १६ (प्रस्ता०)
कावेरी १० (प्रस्ता०), ४४, ७९, ८५
काशी २० (प्रस्ता०), ३३, १०८, २९५
कासा २००, २०२, २०४
किवोका ३१०
किष्किंधा ३३
कीमामारी १४८
कीम १६ (प्रस्ता०)
कुकची ८, १६९
कुण्डिल २३४
कुतुबमीनार २५१
कुबेर १२२
कुमुद्वती ४०
कुरम १३९
कुरुक्षेत्र २२, २३, ४९, ७४
कुरुपांचाल २७
कुर्ग ४४
कुर्नूल ४०, ४१
कुलकर्णी २४८
कुशावती १७१
कूकली ४०
कूर्गगढ २४३
कूसम २३५, २३७
कृत्तिका १६०

कृष्ण २३, २२३, २६१, २९५
कृष्णचंद्र ८७, २६१, २६२
कृष्णद्वैपायन २३१
कृष्णराय ४०
कृष्णसागर ५४, २०८
कृष्णा ११ (प्रस्ता०), ६, ७, ८, ९, १०, १२, १४, ३०, ३१, ३६, ४०, ४१, ८८, १६९, २०७, २०८, ३१५
कृष्णाविका १०
केकय १२ (प्रस्ता०)
केटी (बंदर) १४१, १५४
केदारनाथ २५
केनिया ३१३
केरल १९ (प्रस्ता०), २९५
केशू २४०, २४१
कैकेयी १२ (प्रस्ता०)
कैरिना २८०
कैलास ६ (प्रस्ता०), ६१, ८४, १३७, १३८
कैलास गुफा ११९
कैसल रॉक २३९, २४०
कोंकण २९२
कोडागा १३
कोटरी १४३, १५३, १५४
कोटितीर्थ १०८
कोणार्क १९ (प्रस्ता०)
कोलंबस १४७
कोल्का १६ (प्रस्ता०)
कोवाड १३९
कोहिमा २३४
कौशल्या १४ (प्रस्ता०)
क्रतु १३९
क्षीरभवानी ६१
क्षेमेन्द्र ११ (प्रस्ता०)

ख

खंडगिरि २६७
खंडाला घाट ४७
खंभात १६ (प्रस्ता०)
खड़कवासला ११, १२, २०८
खड़की ११
खनबल १२६, १२७
खरस्रोता १७ (प्रस्ता०)
खस्वस्तिक ३०७
खारची (मारवाड़ जंक्शन) ९८
खाशी २३४
खासी (थीमा) ९५
खिरथर १४०, १४६
खेड़ा सत्याग्रह ८३
खैबरघाट १३९

ग

गंगतोक २२८
गंगा १०, ११, १७ (प्रस्ता०), ८, १७–२०, २१, २२, २३, २५, २६, २७, ३०, ३६, ४२, ४५, ५०, ५४, ६३, ८४, ८५, १३७, १३८, १४०, १४१, १५३, १५४, १५५, १५८, १५९, १६०, १६१, १६५, १६६, १६८, १७६, १९५, २०८, २२९, २७१, २९५, ३१४
गंगाजल
गंगाधरराव देशपांडे ४६, ११७
गंगापुर ३९
गंगावती ७७, १००

गंगासागर २६
गंगोत्री ९, १६, १८, २५, २६, १६०, १७७, ३०८, ३११
गंजाम २११, २१२
गंडकी १२ (प्रस्ता०), १९, १६५, १६६
गजानन १०७, १०९
गजेन्द्र-ग्राह १९, १६८
गणपति १०७
गणेश्वरी १०७, १११
गद्दी १३६
गया ९५, १५९, १६७
गांधार १२ (प्रस्ता०)
गांधारी १२ (प्रस्ता०)
गांधीजी ६ (प्रस्ता०), १३, ४०, ४८, ८२, ८६, १७३, १९५, २१९, २७५, २७६, ३११
गांधीयुग ७८
गांधी-सेवा-संघ १५४
गाड ३०६
गिडवाणीजी १०
गिरसप्पा २८५, २८६, २८८, २८९, २९२
गिरनार ३२, ६१, ९५
गिलगिट ४४, ४५, ४६, ४७, ५२, ५३, ५४, ५५, ६३, ९९, १००
गिलगिटचा किल्ला १३८
गुजरा ८३, १८३, २२३, ३१९
गुजराती ३३
गुप्तकाशी २१४, २२०, २२३
गुजरात १२ (प्रस्ता०), ४६, ७४, ७६, ८०, ८३, ८४, ९७, १६८, २०४, २०७
गुजरात विद्यापीठ ७८, ७९, ८३
गुलमर्ग १३६
गुरु १५७, २८०, ३०१
गुहक १५८
गुह्येश्वरी १६४
गोंड १९५, १९९
गोंदू २४१, २४२, २४४
गोमांतकी ३०, १५४
गोकर्ण १९ (प्रस्ता०), २०१, २०८, २०९, २१०, २१७
गोकर्ण-महाबळेश्वर २०८, २१५
गोकाक १३४, २०७
गोकुल १७४
गोदावरी १०, ११ (प्रस्ता०), ६, ३०—३२, ८०, ८६, ८७, ८८, ८९, १२०
गोधरा १६ (प्रस्ता०)
गोमुखी १४४, १४५, १४६
गोपाळकृष्ण ३१
गोपाळपूर १९ (प्रस्ता०)
गोपाळ नारायणपूर २०१
गोमंतक २९५
गोमती (सुलतानपूर) १६, १८ (प्रस्ता०), ८८, ८९, १७१, १७६
गोमती (द्वारका) १८ (प्रस्ता०)
गोमुख २६
गोरखनाथ १६५
गोवा १८ (प्रस्ता०), २३६, २४७, ३०३
गौहाती ३०३
गौरीशंकर ९८
गौरी केदारी ३५
गौरीकुंड ३२
गौरीदेवल १६३

गौरीशंकर तालाब ९१, ९२
गौहाटी १७ (प्रस्ता०)
ग्रीनलैंड २६८
ग्रीस २६९

घ

घटप्रभा १२४, २०७
घाघरा १८ (प्रस्ता०), १३७
घाटे मुरलीधर २०२
घारापुरी ११९, २६२, २६७
घोघा १२ (प्रस्ता०), २६६
घोरपड़े ८
घोलवड २००, २५६

च

चंगुनारायण १६३
चंदन २२२
चंदना ८१
चंदुभाई पटेल ३०९
चंद्रगिरि ३१३
चंद्रगुप्त १४१, १९४
चंद्रभागा ८, ८२
चंद्रभागा (चिनाब) १३४–३५
चंद्रशंकर ५२
चंपानगरी ६१
चंपारण १५९
चंबल १९, १६९, १७१–७२, १७८
चन्नपट्टनम् २३५
चर्मण्वती ११ (प्रस्ता०), २३, १७१, १७२, १७८, १९५
चांदीपुर १९ (प्रस्ता०), २५६, २५७, २५९
चानोद २९५
चारुशीलाशरण १७५
चार्ल्स नेपियर १४१
चिचली (स्टेशन) ७
चित्रांगदा १२ (प्रस्ता०)
चित्रा १२ (प्रस्ता०), १५७, २८०, ३०१
चित्राल १३९
चित्रावती ४४
चिनाब १३०, १३४–३५, १३६, १३९
चिल्का १९ (प्रस्ता०), ६३, २१२
चीन ४१, ८४, १२९, २३१, २३३, २६९
चुंग थांग २२८
चुल्काटा मिशमी २९४
चैतन्य महाप्रभु २३४
चोरवाड़ १८ (प्रस्ता०), ९६
चोल २१२
चौंसठ योगिनियोंका मंदिर ८९, १९३, १९४
चौपाटी २७

छ

छत्तीसगढ़ १९५
छपरा १५९
छिंदवीन १७ (प्रस्ता०), २९७

ज

जगत्पति ८७
जगदंबा ७७
जगन्नाथ (कवि) ११ (प्रस्ता०)
जम्बू २४०
जटायु ३२, ३८
जनक १९, ५५, २६६
जनस्थान ३२, ३३, १२०

जबलपुर ८९, १७७, १८०, १८२, १८७, १८९
जमदंडी १६९
जमदग्नि २३२
जमनोत्री १६, ३०८
जम्मू १३४, १३९, १३९
जयद्रथ १४०
जयमंगली ४४
जरुपायगुडी २२८
जलियांवाला बाग ८३
जसवंत-सागर ९९
जसवंतसिंह ९९
जहांगीर १२६, १३४
जह्नु १५३
जानकी २४
जापानी १७ (प्रस्ता०), २०
जानिया मिलिया २०६
जावा २०, २६६, २६९
जाह्नवी २४
जिना ३०८, ३०९, ३११, ३१२, ३१५
जीवतराम (कृपालानी) २८६, २८७, २८८
जुन्नर २६२
जुहू १९ (प्रस्ता०)
जूनागढ़ ६१, २११
जैतपुर ९६
जैन पुराण ८ (प्रस्ता०)
जैन तीर्थंकर ११९
जोग १८ (प्रस्ता०), ४५, ४६, ४९, ५२, ५८, ६२, ६३, ६४, ६५, ७१, ७२, ७५, ७७, १००, १०४
जोधपुर ९८, ९९
ज्ञानगढ़ १७ (प्रस्ता०), २११, २१२
ज्ञानेश्वर ३३, ३४
ज्येष्ठा २८०, ३०१

झ

झांझीमार ३१३
झांसी १७३, १७५
झारसुगुडा १९६
झेलम १२४, १२६, १२७, १२८, १२९, १३०, १३६, १३९

ट

टाल्लानिया २६९
टेंगापानी २३४
टेगल २३७
टेम्स ९६, २३७
टेहरी २२
ट्रिपोली ७ (प्रस्ता०)

ड

डहाणू २०१, २०२
डायमंड हार्बर २८५
डिगारू २, २३४
डिब्रू २३४
डिबुगढ़ १७ (प्रस्ता०)
डिहिंग २३४
डेक्कन कॉलेज १२
डेरा गिस्माइलखां १३९
डेरा गाजीखां १३९
डोगरा १३६, १३८

ढ

ढुंढी १७ (प्रस्ता०)

त

तथागत १६५
तदखी बंदर १०१, १०८, १०९, ११४, ११५
तपती १६ (प्रस्ता०), २९५
तमसा १२ (प्रस्ता०)
तलाईमानार २७४
तर्खी-तार्खी १३६–३७
ताजबीबी २३
ताजमहल २३, २९२
ताना (सरोवर) ३१२
तानाजी मालुसरे. १३
तापी ८०
ताप्ती १६ (प्रस्ता०), ३१, २९५
तामस्कर २०७
तामिळ भाषा ७७
ताम्रद्वीप २६६
ताम्रलिपि २६६
ताहुंग चू २२८
तिनघी घाट २४०
तिब्बत ८४, १२९, २२९, २३१, २३३, ३१२
तिब्बत (पश्चिम) १३८
तीर्थ ८१–८२
तीर्थहल्ली ३९
तीस्ता १७ (प्रस्ता०), २२६, २२७, २२८, २२९, २३०, २३६
तुंगनाथ २१५
तुंगभद्रा ८, १०, ११, ३०, ३३, ३९-४२, ४४
तुंगा ८, ११, ३९, ४०, ४१, ४२, ४४
तुकाराम २९७
तुलसीदास १८
तेंदुला २०७, २०८
तेजपुर १७ (प्रस्ता०)
तेरदाळ ७ (प्रस्ता०), १६९, १७०
तेलंगण ८
तेलुगु २७८
त्रावणकोर २८१
त्रिपथगा ११ (प्रस्ता०)
त्रिवेणी २३८
त्रिशंकु २८०
त्रिस्रोता २२७
त्र्यंबक १९, ३१, ३२, ३५

थ

थाना २६२

द

दंडाळ पर्वत ३२
दक्ष ७३
दक्षिण कानडा ७०
दत्तात्रेय २५, १११, १७८, २३१
दधीचि ८२, १३३
दमणगंगा १६ (प्रस्ता०)
दरायस १३८
दशार्ण १७६
दांडीयात्रा १७२
दादू १४३
दानव २५६
दाभोळ १९ (प्रस्ता०), २६९
दार्जिलिंग २२६, २२९
दादिर १४०
दिफू चू २२८
दिनशा मेहता १३

दिल्ली २० (प्रस्ता०), १९, ९२, १५०, २०६, २०८
दिहंग २३४
दीवाघाट बंदरगाह १५७
दूधसागर १८ (प्रस्ता०) २४०, २४२
दूधगंगा १२४–२५, १६३
दूधेश्वर महादेव ८२
दूधवली ८०, १७१, १७६
देलवाड़ा १८२
देव २०३, २६३
देवकी १४ (प्रस्ता०)
देवगढ़ ११६, २४३–४७, २४९, २५०, २५२
देवता २५६
देवदास (गांधी) ५२
देवदूत २५४
देवपाणी २३४
देवप्रयाग १८
देवयानी १८
देवयानी (नक्षत्र) २७७, ३०१
देवव्रत भीष्म १७
देवी मारुती २३७
देवेन्द्र ६१, २५२, ३०६
देहरादून २२, २१४, २१६, २२०
देहू ८
द्रविड ८८, २६९
द्रुम १९५, १९८, २०७
द्रौपदी १८, २१, २९५
द्वारिका १८ (प्रस्ता०), २३, २८४

ध

धनुष्कोटी २७१–७५
धवली १७ (प्रस्ता०)
धर्मेश्वर ३५, ३८
धसान १८ (प्रस्ता०), १७४, १७५, १७६
धारणा ३४
धारवाड ७६
धुआंधार ८९, ९०, १८१, १८५, १८६, १८७, १८९–९४
धूमकेतु २९१
धौंडो २११
ध्रुव १२५, २७७, २८०, २८१, ३०१, ३०२
ध्रुव (सुधर) २६८
ध्रुवमत्स्य ३०१

न

नंद २३
नंदी १८१
नंदीदुर्ग ४३
नरक २८७
नरसोबाची वाडी ६
नरहरिशास्त्री (परीख) ७८
नर्मदा १०, ११, १६ (प्रस्ता०), ३०, ३१, ९३, ८०, ८४-९१, १६६, १६८, १७७, १७९, १८८, १८९, १९३, २९५
नर्मदा परिक्रमा ८६–८७, ९०
नवजीवन ८२
नवानगढ़ ९६
नवानगर ९६
नवी बंदर ९६
नांबुद्री ब्राह्मण ३४
नाशिक ३१
नागर कोकिल २७५
नागा २३४
नागा (यौमा) ९५

नागाघाट २६२
नाथाभाई पटेल ८९
नाना फडनवीस ८, १०
नापगरा ४४, ४५, ४९, ५४
नारद १७६, २३२
नारायणदास मलकानी १४३, २४८
नारायण सरोवर ६१
नारायणाश्रम १२५
नॉर्वे १९ (प्रस्ता०), २६८
नासिक ३२, ३३, २०८, २६२
निवेदिता ५४, १६५
नीरो ५५, ७०
नील ६ (प्रस्ता०), २३७, २९७, ३०८–१६
नीलकुंद १०१
नीलगंगा २५
नीलगिरि ६३, ६५
नीलाम्बा ३१०
नीलोत्री ३०८, ३१०, ३११
नेपाल १५४, १६३, १६४, १६५
नेलूर ४९
नैरोबी ३०८
नोहा टिहंग २३४

प

पंचगनी ८८
पंचनागर (पूना) ८७, १५०
पंचवटी ३२, ३३
पंचगनी ५, ६ (प्रस्ता०)
पंचडिमापट २२८
पंजाब १० (प्रस्ता०), ८३, १२५, १३७, १३८, १४१, १४३, १५४
पंढरपुर ८, १११
पटना १५४, १५५, १५६, १६८
पटवर्धन ८
पथमा २१२
पद्मा १७ (प्रस्ता०), २०
परमेशा १४ (प्रस्ता०)
परशुराम १७६, २३१–३४
परशुराम कुंड २३१, २३२
परोपनिसदा (अफगान) १३८
पर्णकुटी १२, १३
पर्वती ६५
पलाशबाड़ी २६१
पलीपाडु ४२
पशुपतिनाथ १६४
पश्चिम अफ्रीका ७ (प्रस्ता०)
पांडव २२, २०३
पांडव-गुफा २६१
पांडिचेरी १९ (प्रस्ता०)
पाकिस्तान ९९, २२८, २२९
पाटलीपुत्र १९, १५३, १५४, १८६
पानीपत २९
पापर्डी ४४
पारसी २०२
पारिजात २८०, २८३, २८९, ३०१
पार्वती ६७, ८९, २२७, २२९, २७२, २९५, ३१०
पालीसा (मपाल) ५१, ५७, ६६, ७३, ७५
पाल्क २७२
पावनी ३६
पाल-सुन्दरी २२७
पालगढ ६१
पिटर्सबर्ग (लेनिनग्राद) १४०

पिताजी १०८, ११२, ११२, ११३, ११४, ११५, १६९, २४४, २४५
पिनाकिनी ४२, ४३, ७९
पीरपुंजाल १३४
पुणतांबेकर १०
पुनर्वसु १६०, २८०, ३०१
पुराण २३१, २३२, ३१३
पुरी-जगन्नाथ १९ (प्रस्ता०), ६२
पुरूरवा ३१७
पुर्तगाल २६८
पुलकेशी १७४
पुष्कर ९८
पुष्पक विमान १२०
पुष्पदंत १५०
पूना ८, ११, १२, १४, ६१, १८६, १९५, २०७, २६२
पेशुवामा २९५
पेन्नेर ४३, ४४
पेरिस १६६, २३७
पेशवाली १२
पैठण ३२, ३३
पोरबंदर ९६
प्रतिष्ठान नगरी ३३
प्रमाणिका (वृत्त) १५०
प्रयाग ६, १२ (प्रस्ता०), १८, १९, २३
प्रयागराज १९, २३, २६, ६१, २२८, २७२
प्रवरा ३४, २०८
प्रश्वन २७८, २८०
प्राणजीवन मेहता ८२, २९१
प्राणहिता ३४
प्रोम २९८

फ

फर्पिंग-नारायण १६३
फल्गु ९५, १६७
फैजपुर (कांग्रेस) १७७, १७९, १८०
फॉरेस्ट कॉलेज २१४
फौजी पाठशाला २१४
फ्रांस ३५, २६८

ब

बंगलोर ४६
बंगाल १७ (प्रस्ता०), २२९, २३५, २६६, २८१
बंगाली २६६, २९३
बॅड गार्डन १२, २०७
बकिंगम कॅनाल २३८
बगदाद ४१, १४१
बदरीनारायण २५, २७५
बनारस २७, २६८
बनास ९७, ९९
बन्नू १३९
बन्सश्री १९ (प्रस्ता०), २७, ४६, ५८, ७४, ७५, ७६, ११९, २५६, २६९, २७५, २८०, २८२, २८७, २९९
बरडा ९५
बरहानपुर १६ (प्रस्ता०)
बराक (नदी) १७ (प्रस्ता०)
बरी-कटक १७ (प्रस्ता०)
बलराम १७४, २३१
बलुचिस्तान १४६, २६७
बसवेश्वर ४०
बाघमती ११ (प्रस्ता०), ८०, १६३-६५, १७१, १७६

राजकोट ९६
राजगोपालाचार्य ४७, ४८, ५२, ५६, ५८, ६०, ६४, २७०
राजघाट ३११
राजपूताना (राजस्थान) ९७, १३८, १५३
राजमहेन्द्री ३१, ३५, ३६, ३८
राजापुर २१४
राजा प्रपात ५१, ५२, ५७, ५८, ५९, ६०, ६५, ६६, ७२, ७३, ७४, ७५, १०४
राजेन्द्रबाबू १५५
राणकदेवी १६ (प्रस्ता०), ९५
रामगंगा १८ (प्रस्ता०)
रामगढ़ १९५, १९६, १९७, २०६
रामचंद्र १० (प्रस्ता०), १९, २४, ३०, ३२, ३३, ३८, ८७, ११८, १२०, १५८, १६७, १६८, १६९, १८१, १९४, २३३, २६१, २६२
रामजीसिंह नेगी २४५
रामतीर्थ ११९, १३१
रामतीर्थका जलसा ११७, ११८
रामतीर्थका पहाड़ ११७
रामदास २९७
रामदेवजी (आचार्य) २१४
रामधनुष २७२
रामवन १३४
रामरक्षा १२३
रामशास्त्री प्रभुणे ८, १०
रामायण १२०
रामेश्वरम् १९ (प्रस्ता०), २७४, २७५
रामेश्वर (गौहाटी) ११०, ११८
रावण ३९, ४१, ७३, १०६, १०७, १०८, १०९, ११०
रावी १३०–३३, १३९
राष्ट्रध्वज १६५
राष्ट्रगाथा २५७
राष्ट्र-रक्षा-विद्यालय १३
रिपन कॉलेज ३०८, ३०९
रुक्मिणी २३३
रुद्र ३०६
रुद्र (प्रपात) ५१, ५७, ६०, ६५, ६६, ७२, ७३
रेगिस्तान २६३
रेणुका २३३
रेवा १० (प्रस्ता०), ८५, ८९
रेहानाबहन २४४
रोंगनी चू २२८
रोअरर (प्रपात) ५७, ६५
रॉकेट (प्रपात) ५७, ६५
रोडेशिया २०४
रोम ५५, ७०
रोमें रोलां २३ (प्रस्ता०), ७०, ७१
रोरो चू २२८
रोहरी १४०, १५३, १५४
रोडियो २७६, २७८
रॉबर्ट शेफर ८२–८३

ल

लंका १२, १८ (प्रस्ता०), ३०, १०७, ११०, २५२, २६६, २७४
लंदन २३७
लक्ष्मण ३२, ३३, ३८, १२०
लक्ष्मण झूला १८
लखनौ १०७, २६८, २८७, २९५

लक्ष्मी (गांधी) ५२
ललितपट्टन २६३
लार्किन्स्टन १००
लांगुल्या २१२
लाचुंग चू २२७, २२८
लाचेन चू २२७, २२८
लारखाना १४३
लाहौर १३१, १३३, १३९, १८२
लिंगायत पंथ ४०
लिओपोल्ड ३१४
लिस्बन २३७
लूनी ९८, ९९
लेडी डाफरीन १३
लेडी (प्रभात) ५७, ६६
लेप्पादि २६२
लोंडा २३९
लोकमाता ३, ४, २५ (प्रस्ता०)
लोकमान्य तिलक ९
लोणावला २०७
लोहित २३४
ल्हासो २२७

व

वंशधारा २१२
वजीरिस्तान १३९
वड़वाण १६ (प्रस्ता०), ९५
वन्यजाति २३१, २३३, २३४
वरदा ४०
वरदाचारी २७१
वराह पर्वत ३९
वराहमूलम् १२८
वरुणदेव ५०, १५१, १५२, २६३, २६४, २६७-७०
वर्धा ३४, २०५, २०७, २८०
वर्धा (नदी)
वसिष्ठ १९४
वसिष्ठ गोदावरी ३५
वसिष्ठ (तारा) १२५
वाग्निकिन २६८
वाझी ३२
वाकाटक १९४
वाराणा १०
वाल्मीकि ११ (प्रस्ता०), १८, २६, ३१, ११०, १६८, १७६
विंध्य १० (प्रस्ता०), ८५, ९५
विंध्य-सतपुड़ा ३१
विक्रम २० (प्रस्ता०)
विक्रम संवत् ८८
विचिन्नवीर्य ८७
विचारपाद्रुम् १९ (प्रस्ता०)
विजयनगर ११, ४०, ४१
विठोबा १११
वितस्ता १२६, १२७, १३०, २९५
विरूपाक्ष ४०
विलायत ३१४
विवेकानन्द १६६, २६७, २७६
विशाखा २८०
विश्वामित्र १२ (प्रस्ता०), १६८, १६९, १७६, १९४
विश्वामित्री १६ (प्रस्ता०)
विषुववृत्त ३०७
विष्णु २५, ८७, १०७, १६४, २७२

विष्णुगती १९४
विष्णुशर्मा २४५
वीरभद्र १५०
वीरभद्र (प्रपात) ५१, ५७, ६०, ६१, ६५, ६६, ७३, ७५
वुलर ६३, १२९
वृन्दावन १९, २२, २३, २९५
वृन्दावन (मैसूर) १५०
वृश्चिक ३०१
वेगमती १७६
वेणीप्रसाद १९०, १९१
वेण्या ६, १०, १४, ३०
वेत्रवती १८ (प्रस्ता०), १७१, १७६
वेद ४२, १३०, २६३
वेद (नदी) ४०
वेदकाल ११ (प्रस्ता०), १२६, २६३, २८६
वेदावति ४०
वेरूळ ११९
वेळगंगा ११९, १२०, १२१
वैतरणी ११ (प्रस्ता०)
वैदिक संस्कृति ४१
वैनगंगा ३४
वैष्णव १२ (प्रस्ता०) २३३, २३४
वौठा ८१
व्याघ्र २७८
व्यास ११, १५ (प्रस्ता०), ६५, १७३, २२१
व्यास (नदी) १३०, १३९
व्यौहारराजेन्द्रसिंह १९०

श

शंकर ६५, ६७
शंकरदेव २३३, २३४
शंकरराव गुलवाड़ी १६, १००
शंकरराव भोंसले २०२
शंकराचार्य ३४, ३९, १९४
शंभु १०७
शकुन्तला १८, २१, २९२
शनि ५७
शबरी ३४
शरयू ३०
शरावती १८ (प्रस्ता०), ४७, ४८, ५७, ६४, ६५, ६६, ६९, ७४, ७५, ७६, ७७, १००, १७१, १७६
शर्मिष्ठा १८
शाण्डिल्य महाराज ११७
शातदुर्गा ३०६
शातवाहन ८९
शालिग्राम १२ (प्रस्ता०), १६५-६६, १७०
शालिवाहन ८९
शालिवाहन शक ८८
शाहजहां २३
शाहपुर १६९
शाहु ५, ८
शिंगु भगवान १६४
शिप्रा १८ (प्रस्ता०)
शिमला १३४
शिमोगा ३९, ४५, ४६, ७४
शिवा १८ (प्रस्ता०)
शिरसी ७४, १०१
शिलीगुड़ी २२८
शिलोंग १५४, २३४
शिवजी ४, २६, ८४, ८७, ८९, १०६, २४२, २७२, ३०८

शिव-तांडव-स्तोत्र
शिवनेरी १८८
शिवशंकर शुक्ल ७९
शिवा (मोट स्वर्गी) १९९
शिवाजी ८, १३, १८६, २२९, ३१५
शुक ११ (प्रस्ता०)
शुक्र २८०, ३०१
शुतुद्री १३०
शेत्रुंजा ९५
शेत्रुंजी ९५, ९६
शेवण १४०
शोणपुर १६८
शोणभद्र १५, ३६, १६६, १६८–६९, १९५
शौनक १७६
श्रद्धानंदजी २२
श्रवण ३०१
श्रीकृष्ण १०, १९, २३, १८४, २५७, २५९, २८४
श्रीनगर (काश्मीर) १२४, १२८, १३४
श्रीनगर (गढ़वाल) २२, ११७
श्वेडेगॉन पॅगोडा २९२

स

संघमित्रा २६७
संबलपुर १९७
संगारी ७३
संस्कृत ५, ७ (प्रस्ता०), १२, ७९, ९३, १२०, २८२, २९२, ३१०, ३१३
सक्कर १४०, १५३, १५४
सगरपुत्र २०
सतपुड़ा १० (प्रस्ता०) ८५, ९५
सतलज १३०, १३७, १३९
सती १२५
सतीश ३०६
सतीसर १२४
सती सुहिणी १४१
सत्याग्रह ६ (प्रस्ता०), ८२
सदाकत आश्रम १५५
सदाशिव २६४
सदाशिव गड़ २४७
सदिया (सादिया) १७ (प्रस्ता०), २३४
सप्तर्षि १२५, २८०, ३०१
सप्तसिंधु १० (प्रस्ता०), १२५, १३८
समरकंद १२९, १४०
समर्थ रामदास ७–८, ९, ३३, १८६
समुद्रगुप्त १८, १९४
सरदार-पुल ८२
सरयू १८ (प्रस्ता०), १९
सरस्वती १०, २० (प्रस्ता०), ६१, ८०, ८५, ९७, ९८, ९९, १७६, २२८
सरस्वती (देवी) १०७
सरोजा ३१०, ३११, ३१२
सरोजिनी १०३, १९३, २४८
सर्वोदय ३११
सहस्रधारा २२०, २२३
सहस्रार्जुन २२२
सहारा ७ (प्रस्ता०), १७०
सह्याद्रि ६, ३१, ३४, ४६, ६३, ८८, ९५, १०१, १५५, २३१, ३१५
सांगली ७
सांथाळ १९६
सांभर सरोवर ९८
सागर ४५, ४६, ७४
साबरमती ९८

बार्गाइल १६ (प्रस्ता०), ८
बादूर्जा १७३
बाबर २२, १३८
बाबाबुदान ३९
बाल्मिक २६९
बारडोली ८३
बारहगंगा ४७, ६४
बारामुला १२८, १२९
बालनदी ६४, १००
बालासोर २५४, २५७, २५९
बालिद्वीप २६६
बाली २६९
बालेश्वर २५६
बाल्डॉफ १३८
बिलासा ९९
बिशंधु नारायण १६३
बिहार १९६, २३५
बिहार विद्यापीठ १५५
बुंदेलखंड १७६
बुखारा १३९, १४०
बुद्ध १८, १९, ५५, १६४, १६६, १६७, २३२–३४, २६३, २६६, २६७, २९४
बूदक १४३, १५५, १४७
बाँकीपुर ४०
बेजवाड़ा १०, १२, ३५, ३६, ४२, २०७, २०८
बेतवा १७४, १७५, १७९
बेतारा १९९
बेलगाम ८, १२४
बेलगुंडी ३
बेलाताल १७३
बेल्जियन कांगो ३०२
बेल्जियम ३१३, ३१४
बैंक वॉटर १९ (प्रस्ता०)
बैंदिनूमा २३९
बैजनाथ ३
बैतूल १६ (प्रस्ता०)
बोधिगया १६७
बोर तालाब ९१, २०८
बोरकर (कवि) २६, २४७
बोरडी २००, २०१, २५६, २८४
बोलनघाट १४०
बौद्धधर्म २६७
बौद्धभिक्षु २३३, २६२, २९४
बौद्धमंदिर २२८, २९८
बौद्धसाधु २९८
ब्रिटेन २६८
ब्रह्म आश्रम २३७
ब्रह्मकपाल २५
ब्रह्मकुंड २३१, २३३
ब्रह्मगंगा २५
ब्रह्मगिरि ३२
ब्रह्मदेव २१ (प्रस्ता०), २५, ३१, १०७, १०९
ब्रह्मदेश १९ (प्रस्ता०), १३०, २३१, २९४
ब्रह्मपुत्रा १६ (प्रस्ता०), १९, २०, ३१, ४५, ६३, ७८, १३७, १५४, १६८, २२८, २३१, २३३, २३४, २९५, ३१२
ब्रह्मह्रद १६०, २०७
ब्रह्मावर्त २२
ब्रह्मा २९४, २९६–९८
ब्रह्मी सोना ९५

भ

भगवद्गीता २५१
भगीरथ २६, १५३
भड़ौच ८५, ९०
भद्रा ११, ३९, ४०, ४१
भद्राचलम् ३४, ३५
भद्रावती ५३, ९६
भरत ११७, ११८, ११९
भर्तृहरि २० (प्रस्ता०)
भवभूति ११ (प्रस्ता०), १२०
भांडारकर १२
भागीरथी २५
भाखुवा २१२
भाजा २६२
भादर ९५, ९६
भाद्रपदी ९६
भामा ३०
भारंगी ४७, ४८, ६४, ६६, ७५
भारत ३, ९, १०, १५, १९ (प्रस्ता०), ५४, ७०, १२०, १७५, २३१, २३३, २३४, २३६, २३९, २६६, २६७, २८१
भारतमाता १५२, २९५
भारतवर्ष १०, १५ (प्रस्ता०), ९, १०, २२ २३, ६४, ९५, १३७, १६२, १६५, १९८, २७४, २७५
भारतीय भाषा ९, १२, १३ (प्रस्ता०)
भारतीय संस्कृति १२ (प्रस्ता०), ८८, १६२
भार्गव २३१
भावनगर ९१, २०८
भीम २०३, २०४
भीमा ११ (प्रस्ता०), ८, १०, ३०, ८८
भीष्म १७, ९७, १३१
भुवनचंद्र दास २३१, २५९
भुसावल १६ (प्रस्ता०), १७९
भूमध्यरेखा २०६, २०७
भृगुकच्छ ८५, २६६
भेड़ाघाट ८९, १७७, १८०, १८७
भैरवघाटी ६१
भैरवनार ५४
भोगवती १७६
भोगावो १६ (प्रस्ता०), ९५
भोज १४

म

मंगल २८०
मंगलापुरी २६६
मंचर १९ (प्रस्ता०), ६३, १४०, १४३-४७
मंडाले २९४
मंदाकिनी २५, १०४
मथुरानीपुर १७४
मकराणी २६७
मगध साम्राज्य १९
मघा २८०
मच्छु ९५, ९६
मछलीपट्टम् १९ (प्रस्ता०), १२
मणिपुर १७ (प्रस्ता०) २३३, २३४
मणिदहन ५२, ५७
मथुरा १९, २३९, २९५
मयूरभंज १५९
मथुरा-वृन्दावन २२, २३
मदालसा २५९
मद्रास १८, १९ (प्रस्ता०), ३५, ४२, २३५, २३६, २३८, २६६, २८९

मछलिया-गढ़ २४३
मध्यप्रांत १६, १८ (प्रस्ता०)
मध्यभारत ३४
मनु ५५, २५९
मयासुर ६७
मलप्रभा १२४
मलिक काफ़ूर १९४
मसूरी २१४, २१५, २२०
मुहम्मद-बिन-कासिम १४१
महात्माजी ९, १६ (प्रस्ता०), ७८, ७९, २३१, २३४, ३११, ३१२; देखिये गांधीजी
महादेव ११ (प्रस्ता०), ४, २६, ४०, ५०, ६०, ८४, १०६, १०७, १६६, १८१, २७२, ३०६
महादेवका पहाड़ ८४
महादेव देसाई १३, ४७
महानदी १६, १७ (प्रस्ता०), २६, १६८, १९७, १९९, २२२, २३५, २७४
महाबलेश्वर ६, १२, १६, ३१५
महाभारत ४ (प्रस्ता०), ७४, १७२, १७६
महाभारतकार ३ (प्रस्ता०)
महाराष्ट्र ११, १६ (प्रस्ता०), ५, ६, ७, ८, १२, १३, ३०, ३२, ३३, ५८, १६१, १८६, २०१, २९९
महारुद्र ४९
महालक्ष्मी २०२, २०३, २०४, २०५
महानगर १८, १९, १६६
महाश्वेता १२ (प्रस्ता०), २५७
महिन्द्र २६७
मही (नदी) १६ (प्रस्ता०), ८०
महेन्द्र १८६
महेन्द्र पर्वत १८६
महेश २५
मांडुक्य उपनिषद् ३१०
मागोट ७७, १००
माणिकपुर १७३
मातंग पर्वत ४१
मातारा २५२, ३०६
मानस सरोवर ६, १६ (प्रस्ता०), १०९, १२७, २३४, ३१२
मानार २७२
मार्कण्डी ३, ४, ५, १२
मार्कण्डेय ४
मार्मागोवा २४०, २४३, २९९
मालीकांडा २५४
मास्को १४०
माहिष्मती १७६
माहुली ५, ६, ८, १०, १४
मिट्ठनकोट १३९, १५४
मिथिला ५५
मिरजगां २२४
मिस्र ३१, २२७, ३१०, ३१३–१५
मिसिसिपी ४५
मिसिसिपी-मिसौरी ११
मिसौरी ४५
मीनकंठी १२ (प्रस्ता०)
मीनाक्षी १२ (प्रस्ता०)
मुंगेर १५९
मुक्तवेणी १५४, २२८, २२९
मुजफ्फरपुर १५५, १६६
मुद्रा ११, १२, १४, ४१
मुल्तान २३९, २४०, २४२

मुरलीधर घाटे २०२
मुरादाबाद १८ (प्रस्ता०)
मुल्तान २३०
मुसलमान १९, १२७, १८१, २६८
मुळा ११, १२, १४, ३४, ४१
मुळा-मुठा ११, १२, १३, ४१
मूळ (नक्षत्र) २८०, ३०१
मूकुंड ४
मृगनक्षत्र ५, २७६, २७८
मेकल (मेखल) पर्वत ८४
मेखला ८४
मेगल १८ (प्रस्ता०) ९५, ९६
मेढवा २०
मेद ३१३
मेष्टि १२
मैथिलीशरण (गुप्त) १७५
मैथ्यू आर्नोल्ड २३ (प्रस्ता०)
मैसूर ३१, ४५, ४६, ४९, ५३, ५४, ५६, ५८, ५९, ६३, ६४, ७०, ७५, ७६, १५०, २०७
मोमान (आश्रम) २३१
मोम्बासा ३०५
मोरवी ९६
मोहन-जो-दड़ो २४३

य

यंग सिंडिया ८२
यंगहसबंड २३९
यमराज १२ (प्रस्ता०), ४, २१, २३, २६४
यमुना १०, १२, १७ (प्रस्ता०), १८, १९, २१-२४, २६, ८५, १३७, १७४, १७६, २०८, २२८, २७१
यमुना (नक्षत्र) २७७, २७८
यरवडा (जेल) १२
यवन १३८, २६९
यशोदामाता २२, १७४
यानान ३५
यानमत्स्य २७७, २७९
यामुन ऋषि २२
युअेन्ची १३८
युक्तप्रांत १३०
युक्तवेणी १५४, २२८, २२९
युगांडा ३१३, ३१४, ३१६
युरेशियन ३०३
युरोप १०, ७०, ७१, २६९, २७०, २९२, ३१२, ३१३, ३१४
युरोपियन १३ (प्रस्ता०) ३१२, ३१३
यूनानी १३९, १७२, ३१५
येनमनाव २९८
योगिनिया ८९
योगिनियाँ १८१, १९०

र

रंगपुर २२८, २२९
रंगपो चू २२८
रंगमती ९५, ९६
रंगीत चू २२८
रंगून १९ (प्रस्ता०), २७३, २८४, २९१, २९२, २९४
रंतिदेव १९, २७२
रघुवंश २७३
रणजितसिंह १३१, १३५
रणवीर २१४, २१७, २१९
रमानंद २४७
रवीन्द्रनाथ १९६, २८५

सतारा ५, ६, २४, ३२, २३९
शाकुंतला १४०
सांची २३४, ३१२
साबरमती ११, १६ (प्रस्ता०), ७८–८३, १७२, १७६
साबरमती आश्रम ८२, ८३
साम्यगति ७९–८०
सायणाचार्य ४२
सारस्वत १० (प्रस्ता०)
सारस्वतों ११ (प्रस्ता०), ८०, १७१
साहित्य अकादमी ४ (प्रस्ता०)
सिंगापुर २६९, ३०६
सिन्दबाद २६५, २६६
सिंध १८, १९ (प्रस्ता०), १३८, १४३, १४६, १५३, १५४
सिंध हैदराबाद ७८, ९८
सिंधु १०, ११, १८ (प्रस्ता०), २६, ३१, ३६, ४२, ४५, ६३, ७८, ७९, ८८, १३०, १३६, १३७–४१, १५३, १५४, १९८, २२८, २९५
सिंधु (न० प्र०) १८ (प्रस्ता०), २३
सिंहगढ़ ११, १३, २०८
सिंहपुर २६३
सिकंदर १३८, १४२
सिस्तान २२८
सिद्धपुर ७४, १०१, १०२
सिद्धिविनायक १०७
सिनो की खाड़ी २२८
सियारामशरण (गुप्त) १७१
सीता १० (प्रस्ता०), ३४, ३२, ३३, ३८, ४१, ११९, १२०, १२२, १२३, १३०, १७०, २९५
सीता (नदी) २६
सीतान्हाणी ११९, १२२
सीतावाका १८ (प्रस्ता०), १२०
सीताहरण ११
सीन २३७
सीम नदी २१८
सीलोन १८, १९ (प्रस्ता०), १८०, २२८, २७४, ३०६
सुंदरवन ३०, १५४
सुसा २०८, २०९
सुचक्षु २६
सुदान ३१३, ३१६
सुरमा घाटी १७ (प्रस्ता०), १५४
सुरेन्द्रनगर (सौराष्ट्र) ९५
सुलैमान (पर्वत) १४६
सूहा १७६
सूपा १००
सूरत १६ (प्रस्ता०), २०३
सूर्यवंश ११८
सूर्ग १६ (प्रस्ता०)
सेंट जॉर्ज फोर्ट २३८
सेंट फ्रांसिस जेवियर २६७
सेतुबंध महादेव ६१
सेमीरामिस १३८
सेरेंदी २३४
सोपारा २६२, २६६, २६०
सौराष्ट्र १२ (प्रस्ता०), ८४, ९१, ९५, ९७, २६५
सौवीर देश १५३
स्कार्दू १३८
स्कैंडिनेविया २२८
स्मर्ना ३१८

स्मिथ ३१२, ३१३
स्पेन २६८
स्मरण-यात्रा ६ (प्रस्ता०)
स्वस्तिक ३०१
स्याम १३९
स्वाति १५७, २८०, २८३, ३०१
स्वीडन १९ (प्रस्ता०)

ह

हंस २७७, ३०१
हजीरा १६ (प्रस्ता०)
हणमंतराव ४२
हनुमान ३३, ११८, २७४
हरिश्चाला ३१२
हरिद्वार १८, २२, २६, २७, २२९
हरपालपुर १७३, १७४
हरकी पैढ़ी २७, २८
हरिजन २८१
हरिद्रा ४०
हरियाणा २२
हरिश्चंद्र २० (प्रस्ता०), १०८
हरिहर ४०
हरिहरेश्वर ३०६
हर्ष १८
हस्त २८०
हस्तिनापुर २३
हाथमती ११ (प्रस्ता०), ८०, १७२, १७६
हाला पर्वत २४६
हिम्मतपुर १७४
हिन्द महासागर २५२, २७०, २७५, २८२
हिन्दी ८ (प्रस्ता०)
हिन्दुस्तान १०, ११, १५, १९, २० (प्रस्ता०), १८, १९, २०, ४५, ५४, ८३, ८४, ८८, १२९, १३०, १३७, १३८, १४६, १९४, २०९, २१५, २५१, २६७, २६८, २६९, २७०, २७५, २८१, २८५, २९५, २९९, ३०१, ३११, ३१२, ३१४
हिन्दू २९, २८१, ३१३
हिन्दुकुश ९५, १३८
हिमालय ५, ६, १६, १८ (प्रस्ता०), ९, १९, २१, २२, २६, २७, ३१, ३२, ५८, ६१, ६२, ६३, ८४, ९३, ९५, १०६, १३०, १३१, १३२, १३७, १५५, १६३, १७४, १७७, २२६, २२७, २३३, २३४, २६२, २६७, २७५
हिरात १४०
हीराबंदर १९ (प्रस्ता०), १६०
हुबली १००
हूण १३८
हेकॅटोम १७२
हैदराबाद ३१, ७६
होनावर ४५, ६२, ७६, १००
होन्नेकोंब १०१
होशंगाबाद ९०, १७९
होसतोट १०१
हौसेफ्ट ४०